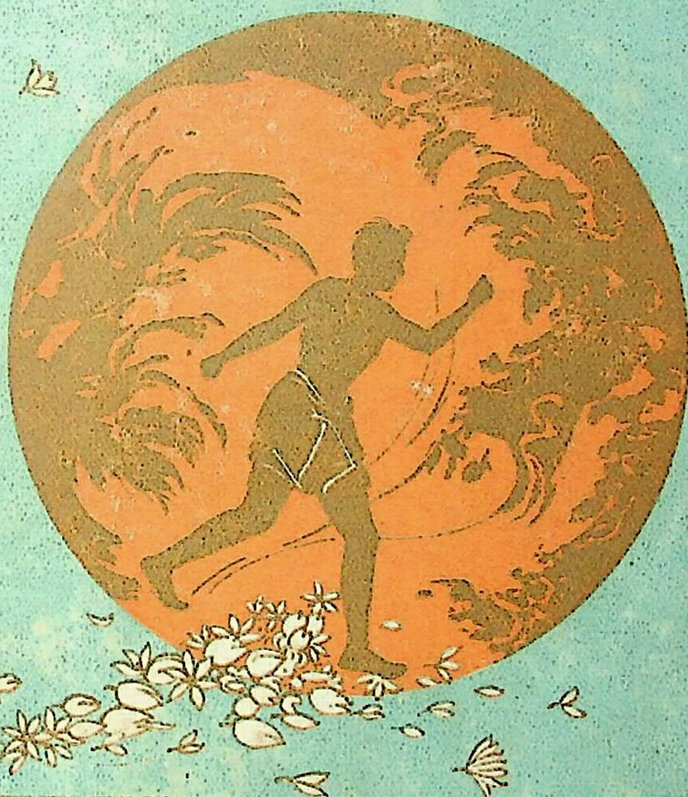


जय मानव

ब्रह्मदत्त दीक्षित 'ललाम'



सत्यनारायण

[illegible]

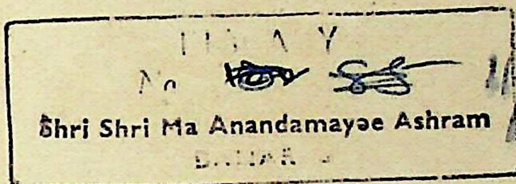
८-५-४९

बापू !

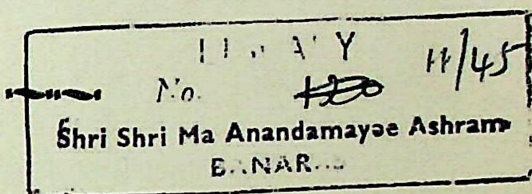
'जय-मानव' का कुछ अंश सुनकर आपने कहा था—"जिसके हृदय में 'सत्य नारायण' हैं उसका बेड़ा पार है !" सबके हृदय में 'सत्य नारायण' विराजें और मानव की जय हो, इस पुस्तक का यही राग है। आपने इसे अपने आशीष से पवित्र किया है। आपकी ही यह वस्तु है।

—'ललाम'




No 85 11/45
Shri Shri Ma Anandamayee Ashram

जय-मानव



रचयिता :—

श्री ब्रह्मदत्त दीक्षित 'ललाम'



प्रकाशक

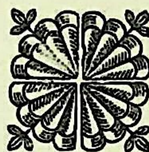
युनिवर्सल प्रेस,

१६ शिवचरनलाल रोड,

प्रयाग

[मूल्य ७)

प्रकाशक
युनिवर्सल प्रेस
१६, शिवचरन लाल रोड,
इलाहाबाद



मुद्रक
पं० जयराम भार्गव
युनिवर्सल प्रेस,
प्रयाग

दो-शब्द

भाई ब्रह्मदत्त जी दीक्षित को मैंने पहली बार लखनऊ में देखा था। किसी कवि-सम्मेलन में नहीं, किसी साहित्यसभा में भी नहीं। यों ही मिलने आये थे। लंबा भरा-पुरा शरीर, चौड़ी छाती, सहज-प्रसन्न मुख। जब सुना कि कविता भी लिखते है तो उत्सुकता बढ़ी। मेरे अनुरोध पर उन्होंने दो-एक कविताएँ सुनाईं भी। स्पष्ट और मधुर ध्वनि में क्रान्ति का गान! कोई बनाव-सजाव नहीं था—

नैसर्गिक कविता का प्रसाद
अन्तर की सच्ची सरल बात!

चित्त प्रसन्न हो गया। इस कविता में वह रस था जो पोथियों से नहीं, जीवन से छन कर आया था। मनुष्य के दुःख से व्याकुल हृदय में मनुष्यत्व के आदर्श की उमंग का गान था। इन कविताओं में बहुत सीधी बात बहुत सीधे ढंग से कही गई है :—

खड़ा विश्व के चौराहे पर यह कंकाल-मात्र मानव का,
बोल रहा है प्रश्न चिह्न-सा यह कंगाल रूप मानव का—
किसने मेरा अन्न चुराया? किसने मेरा वस्त्र चुराया?
किसने मुझको दीन बनाया? किस राक्षस की है यह माया?

× × ×

साफ-साफ बतलाना होगा, और नहीं भरमाना होगा
इतनी धरती, इतना पानी—यह किसकी ऐसी नादानी?

यह ठीक वह वस्तु नहीं है जो अनेक पोथियों को घोखने के बाद चित्त में स्फुरित होती है, परन्तु निस्सन्देह यह सच्ची भावना है। कवि का विश्वास है कि इसी दुःख और कष्ट के भीतर महाकालिका अपना आसन तैयार कर रही है। एक दिन विस्फोट होगा। क्रान्तिकालिका जानती है :—

खाली आहों के ऊपर कोट हमारा
अणु-द्विगुण भयानक है विस्फोट हमारा
हिलते सिंहासन राजमुकुट गिरते हैं,
होते ही उल्कापात विराट हमारा।
मैं निष्ठुर बर्बर शोषक-दल की छाती दहलाती।
वधिरों के सिर पर रुद्रघोष करती हूँ
पत्थर के सिर पर मैं टाँकी धरती हूँ
धरती की छाती फूलों से भरती हूँ
मैं त्रस्त-ग्रस्त जीवन प्रशस्त करती हूँ।
मैं चिर-नवीन ऊषा-संध्या से माँग भरे आती।

× × ×

ब्रह्मदत्त जी की कविता का यह सहजभाव मुझे बहुत रुचता है। उनका विश्वास है कि इस जगत् में जो दानवता और मानवता का संघर्ष चल रहा है उसमें मानवता ही अन्त तक विजयी होगी और :—

इसी भूमि पर, इसी धूलि पर स्वर्ग और अपवर्ग बनेगा।
इसी पंक में इसी अंक में, पंकज मानव-वर्ग खिलेगा।

उनकी कविताओं में यह विश्वास अत्यधिक मुखर होकर प्रकट हुआ है। जब कभी इस विश्वास का प्रसंग आता है तो उनकी भाषा वेगवती हो उठती है और संयम खो देती है। उस समय वह बहुत-सी ऐसी बातें भी कह जाते हैं जो काव्य-समीक्षक को पिष्टपेषण-सी लगेंगी। लेकिन यह मुखरता उनके विश्वास का सच्चा सबूत है।

महात्मा जी से ब्रह्मदत्त जी को बहुत प्रेरणा मिली है। कई कविताओं में उनकी चर्चा है। कवि का जीवन ही उनके आदर्शों पर गठित है। उन्होंने स्वतंत्रता के युद्ध में सक्रिय कार्य किया है और इसीलिए इन कविताओं में उस जीवन की बातें प्रायः सुनाई देती हैं। १९४२ के जन-विप्लव की बात कवि ने बड़े सहज ढंग से और फिर भी कितनी गरिमा के साथ कही है :—

यह जन-समुद्र चल पड़ा, भूमि पर कोटि-कोटि भगवान चले।
आगे - आगे अरमान चले पीछे - पीछे वरदान चले ।

कवि के कंठ से ही प्रथम बार मैंने इन सुन्दर कविताओं को सुना था। उस समय मन में आनन्द-धारा प्रवाहित हुई थी। उस समय पता नहीं था कि इसकी भूमिका भी लिखनी पड़ेगी। यदि यह मालूम होता तो उसी समय आनन्द उद्वेग में परिणत हो जाता। कम लोग जानते हैं। और जानने वालों में भी कम लोग मानते हैं, कि मिठाई का खाना और खाकर प्रसन्न होना ही अच्छी बात है, उसके उपादानों का विवेचन, रसनेन्द्रिय से उसका सम्बन्ध और क्या, कैसे, कितना आदि की बहस उतनी अच्छी बात नहीं है। परन्तु फिर भी दुनिया है कि चलती चली जा रही है।

इन कविताओं से सहृदयों का मनोरंजन हो और इन कविताओं में जिस मनुष्यत्व की विजय-गाथा गाई गई है वह समाज में प्रतिष्ठित हो यही मेरी शुभकामना है। तथास्तु !

काशी
२२–२–५१ } (आचार्य) हजारी प्रसाद द्विवेदी

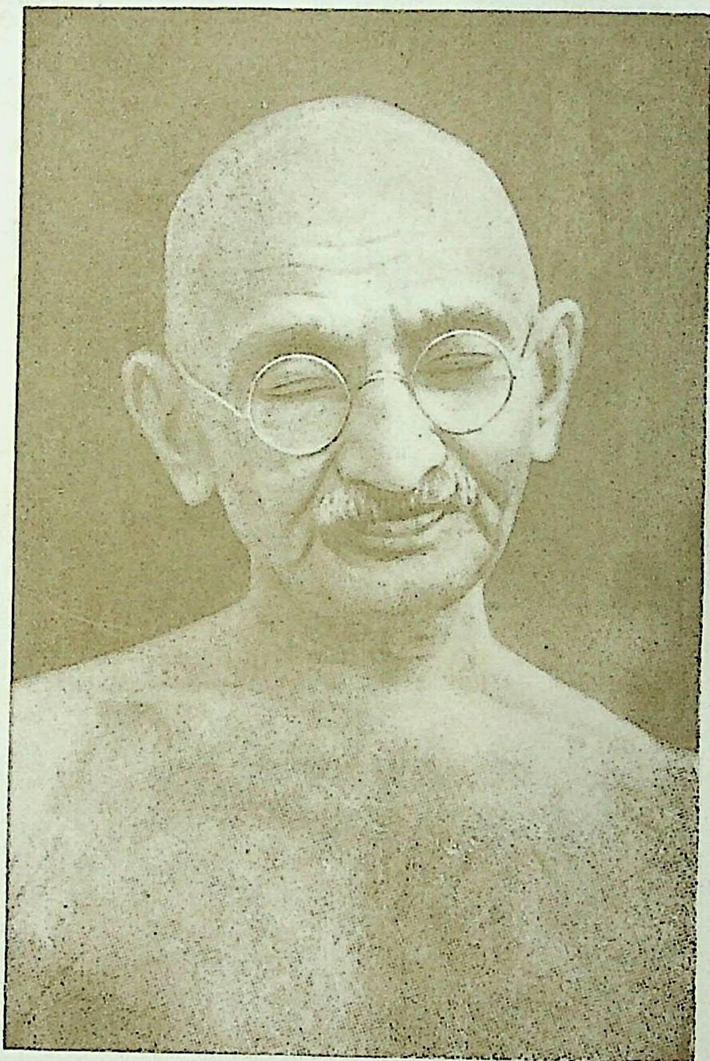
सूचिका

जय-मानव

प्रथम-चरण

द्वितीय चरण

—:०:—



मानव-जीवन के ध्रुवतारा !
ओ करुण-राग के एकतारा !

दृष्टि-कोण

11/45

जय-मानव का दृष्टि-कोण तो नामसे ही स्पष्ट है ।

'क्षण क्षण देव दानव-युद्ध, पाशव दैव दल का युद्ध ।' दानवी और मानवी दो प्रवृत्तियाँ युग-युग से संघर्ष लेती आ रही हैं । सभी धर्म-ग्रन्थ संघर्ष की कथाओं से भरे पड़े हैं । हीरोद, यजीद, रावण, कंस आदि विश्व की समस्त विभूति स्वयं हड़प जाने की चेष्टा करते रहे । रावण ने अपनी लंका सोने की बनाई, संसार का धन अपहरण कर, सीधे ऋषि वर्ग से भी जब और कुछ नहीं पाया तो उनका रक्त ही कर स्वरूप लिया, युग की सुन्दरतम साध्वी सीता को भी अपनी पत्नी बनाना चाहा और इस लोक के सब सुखों से तृप्त न होकर स्वर्ग की सीढ़ी बनाने की चेष्टा की । इसीसे मिलती जुलती प्रवृत्तियाँ हीरोद, यजीद, शुंभ, निशुंभ, रक्तबीज आदि की थीं । उनका दमन करने वाले थे मानव । उन्हें आप चाहें तो ईश्वर, अतिमानव या अवतार कुछ भी कह सकते हैं । राम, ईसा मुहम्मद और अभी गान्धी जी ने इस शैतान से लड़ाई ली । गान्धी जी की लड़ाई की एक विशेषता थी ।

इतिहास में एक आध घटनायें तो ऐसी मिलती हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि अहिंसा का अमोघ अस्त्र अनेक व्यक्तियों ने सफलता पूर्वक अपनाया किन्तु सामूहिक रूप से करोड़ों व्यक्ति, बच्चे-बूढ़े, नौजवान महिलायें, बिना अस्त्र के, दानव के संघठित शासन से लोहा लें ऐसी एक भी घटना पढ़ने में नहीं आई ।

'सन्तापित जन जनके दुख से वैष्णव ने रक्खे अभय चरण ।'
प्रथम चरण, करुण चरण । अरुण वरण सन्त चरण ।

'जय मानव' के प्रथम चरण में जीवन-मंगल प्रभात है और 'देखे जगती ने करुण चरण ।' गान्धी जी ने जागरण, ज्ञान दिया ।

'जागे-युग युग संचित सुभाव, जागे ऋषियों के पुण्य कर्म
जागे शिव, जागे सत्य भाव, जागा स्वदेश, जागा स्वधर्म ।

गान्धी जी ने ईसा, बुद्ध मुहम्मद आदि के पुण्य-पंथ पर देश को लगाया ।

'बच्चा बूढ़ा भी तड़प तड़प ललकार रहा शासन सत्ता,
ओ पशुबल के अभिमानी आ, तेरा शासन पीला पत्ता ।

तूने छल बल से जीता था, तू सत्य न्याय से हार गया,
हिंसावादी ओ जड़वादी ! तेरा मिथ्या-संसार गया।
फिर अटक कटक तक सेनानी बापू की सेना चली विकट,
थल थल पर भारी उथल पुथल कटती माता पग की शृङ्खल,
मां के घर घर उत्सव होली है ईद और दीवाली है,
जननी कंगालिनि नहीं रही, माँ लाल, जवाहर वाली हैं।

और वे दृश्य वास्तव में स्वर्गीय थे--

"नन्हें सुकुमार करों में थी राष्ट्रीय पताका फहर रही,
कोमल कंठों में गाने थे, सुन सुन कर जनता सिहर रही।
झोली में थोंड़े दाने थे, बोली में सुन्दर गाने थे,
पहिने केशरिया बाने थे, आजादी के दीवाने थे।"

इन पंक्तियों के लेखक ने १६२० से आज तक इस जीवन का आनन्द लिया है।

"दो पग सन्तों के साथ साथ, जीवन की गंगा का बहाव।
हम कवि थे और सुवक्ता थे, हम बालक गायक थे ललाम,
हम लवकुश रामायण गाते, सुनते थे मेरे कोटि राम।
ओ बाजीगर ! ओ कारीगर ! यह तेरा अद्भुत चमत्कार।
घर घर ध्रुव औ प्रह्लाद हुये, घर घर स्वतन्त्रता के कुमार।'

अपने देश में महाभारत हुआ, विशेषता थी--

"आग्नेय विहीन महाभारत, इसमें प्राणों के बाण चले।"

इसे लिखने के लिये 'नवीन' जी या 'भारतीय आत्मा' की प्रतिभा आवश्यक थी जिन्होंने अपना जीवन इसी ओर लगाया। यह मेरी धृष्ठता है कि मैंने यह प्रयास किया। यदि इसे कविता कहा जाय तो इस प्रकार १६२० से ही लिख रहा हूँ। मेरे लिये तो वह जीवन कविता थी ही, जिसे लिखा, गाया और कारागार का आनन्द लिया।१६३० की कितनी रचनायें कंठों में उतरीं, कुछ छपीं और अधिकांश लोल लहर की तरह लघु-लीला दिखाकर विलीन हो गयीं। १६३० की एक बड़ी कविता लाहौर कांग्रेस में जवानों ने गाई, जब युवक जवाहर नौ जवानों के कंधों पर नाच रहे थे और साथ थे आजाद, जोगेन्द्र आदि वीर। मैं उनके स्वर में बोल सका, साथ चल सका यही जीवन की और कविता की सार्थकता है।

'जय-मानव' लिखा गया नजरबन्दी के २ सालों में। 'कल्याण' का विशेषांक पृष्ठों का मार्जिन, और टूटी पेंसिल, एकान्त कारा। यही साधन थे। छूटने के बाद किसे अवकाश कि कविता साफ करे, छपवाये।

गान्धी जी द्वारा संचालित यह अहिंसात्मक संग्राम जिसे मैंने यज्ञ कहा है, विश्व में एक अनुभूत प्रयोग हुआ और बहुत अंशों में सफल प्रयोग हुआ। सभी प्रतिनिधि घटनायें आ गई हैं जिनके द्वारा इस प्रयोग की सक्षमता स्पष्ट की गई है। घटनायें अधिकांश क्रम-बद्ध हैं। शैली उतनी ही सरल है जितनी गान्धी जी की वाणी। विचारों को सरल करने की चेष्टा की है। घटनायें स्वयं कवित्वपूर्ण हैं अलकार मैं क्या जानूँ।

नैसर्गिक कविता का प्रसाद, अन्तर की सच्ची सरल बात
वे जीवन ही कविता मय थे, दिन दिन थे सुन्दर रात रात।

यदि किसी को यह शैली और राग न रुचे तो मेरा दोष नहीं है मैं दूसरा कुछ लिख नहीं सकता।

१६४० में विश्व युद्ध छिड़ने पर ऐसा जान पड़ने लगा कि रण-घोषी भस्मासुर विश्व को नष्ट-भ्रष्ट करेगा। 'दानवी' और 'मानवी' दो कवितायें ध्यान से पढ़ने योग्य हैं।

माता आनन्दमयी का वर्णन इस लिये किया है कि वे अब भी जीवित हैं, आनन्दमयी हैं और संशयवाद, जड़वाद, भोगवाद का सजीव प्रत्युत्तर हैं। उनके चरणों के निकट बैठकर जो प्राप्त किया है उसे स्पष्टतः लिखा है।

'अबला-शान्ति' से एक नई समस्या खड़ी होती है। 'सत्य' का शव लिये हुये विधवा शान्ति।

सोई हुई शान्ति अबला सी विधवा सी पड़ी
रोती हुई चिता भस्म लेप किये तन में
करुणा दया के लिये कोमल किशोर गोद
और लिये भस्मी भूत सत्य शिव मन में।

इसी के आगे गान्धी जी का आदर्श चरित्र उच्चतम शिषर पर है। 'हिमालय' में उसका वर्णन है। 'उद्‌बोधन' है और फिर है १६४२ का जन-विप्लव। नेताओं की गिरफ्तारी के बाद निकले जुलूस का वर्णन, ईश्वर, गान्धी जी, जन-चेतना आदि की भावनायें स्पष्ट करता है।

"यह जन-समुद्र चल पड़ा भूमि पर कोटि कोटि भगवान चले।
आगे आगे अरमान चले, पीछे पीछे बरदान चले।
बोलते वेग से कोटि कंठ ऋषियों के पावन ज्ञान चले।
उत्साह पुकारा, बल बोला देखो ये वीर जवान चले।
इसका सेनापति नहीं, चली यह बिना शस्त्र, अद्‌भुत सेना,

आग्नेय विहीन महाभारत, इसमें प्राणों के बाण चले ।
ध्रुव साहस, निश्चय भीम चरण, कुसुमों का वक्षस्थल विशाल,
गान्धी बाणी, गान्धी पानी, भगवान नहीं इन्सान चले ।
जय जय जय इनके कंठ कंठ, जय जय जय इनके पग पग पर
आगे आगे इन्सान चले, पीछे पीछे भगवान चले ।

नजरबन्द हो चुकने के बाद 'जन-कवि' के मेघदूत ने देश दिखाया, अश्रु बरसाये प्रकाश दिया ।

"जन-चेतना प्राण का सौदा, किसकी गलती दाल यहाँ ?"
सदियों में चमका निरभ्र नभ, सत्य अहिंसा मोहन चन्द,
सदियों में टूटे मानव के दुखद-दासता-दारुण फंद ।
हिंसा नहीं विरोधी का भी रक्त जहाँ पर बहा नहीं,
बलिया में जो हुआ विश्व में अब तक ऐसा हुआ नहीं ।

केवल बलिया हीं नहीं देश के अनेक भागों में

'भागे सब शैतान यहाँ से जब निर्भय इन्सान उठा ।
'तिनके से बह चले जिन्हें समझे थे पाप-पहाड़ ।

देश व्यापी विप्लव ने साम्राज्य की जड़ काट दी ।

"तक्षक-सहित चला सिंहासन, पूर्णाहुति अत्याचारी की,
यज्ञ-सफलता की बेलामें, छलिया की छल की तैयारी ।
गिरा सन्त के चरण, भेंट की गन्धहीन फूलों की थाली,
रीझ गये बातों बातों में अपने उपवन के वनमाली ।

गान्धी जी की पूर्ण सफलता और स्वतन्त्रता दर्शन के बाद जो कुछ हुआ उसे विफलता कहना अनुचित न होगा । हिमालय ऐसे बड़े गान्धी जी थे । जाने कितने भयंकर जीव भालू छिपे पड़े थे, सब निकल पड़े । अहिंसा की वरदी पहिने हुये न जाने कितने कायर वीर बने थे । गान्धी जी बहुत बड़े थे इसीलिये छोटी बातें समझ नहीं पाते थे । शुद्ध बुद्ध भगवान थे इसीलिये इन्सान की दुर्बलता नहीं जानते थे । उनकी प्रार्थना-सभामें भी पैसे वाला, मोटर वाला, देर में आने पर भी लोगों के ऊपर पैर रखता, ठीक आगे बापू के पास पहुँचता था । १९३० के बाद ही गान्धी जी को पथ भ्रष्ट लिखने वाले पत्र महात्मा लिखने लगे थे और अवसर वादी उनको घेरने लगे थे । गान्धी जी मान बैठे थे कि ये सब एक क्षण में ही अपना हृदय परिवर्तन कर लेंगे और सब ठीक हो जायगा ।

गान्धी जी को जीवन में जितनी सफलता मिली शायद ही किसी को मिली हो

और यह भी सत्य है कि उनकी आँखें बन्द हुई और सारा गान्धी वाद लेखों में रह गया। इसमें गान्धी जी या गांधी वाद का दोष नहीं है। चित्र पट ठीक न होगा तो चित्र ठीक न होगा। अहिंसा का प्रभाव पड़ता है; किन्तु बहुत से ऐसे हैं जिन पर नहीं पड़ा। इसमें सबसे बड़ा दोष यह है कि आडम्बर, मक्कारी पनपती है। सबसे बड़ा धूर्त, अहिंसा का वेश धारण कर सन्त की वाणी बोलता है।

स्वतन्त्रता के बाद की घटनायें संक्षिप्त हैं। विश्व की उथल पुथल संकेत रूप में है। 'हे राम' में बापू के निधन का वर्णन है। उसे पढ़ लेने से बहुत सी बातें स्पष्ट हो जायँगी।

अन्त में 'प्रश्न' द्वारा अनेक बातों का उत्तर देने की चेष्टा की गयी है।

अपने जीवन की घटनायें 'जय मानव' में दी हैं। १६२० में स्कूल से असहयोग, जनसेवा का आनंद १८ मास का कारागार, मुक्ति के बाद घोर कष्ट, नेतावर्ग की हृदय-हीनता, निजी उद्योग से बी० ए० सी० टी० होने के बाद १६३० में फिर जेल, महोबा में आजाद आदि की सेवा, १६३१ में मिरजापुर १६४०, ४२ में फिर जेल नजरबन्दी, २ पुत्रों का निधन, हृदय विदारक समाज की निष्ठुरता, और अन्त में आजादी के बाद -भग्न मन्दिर छोड़ने के बाद रामराज का शूद्रक होना-शिक्षा विभाग के सुपरिंटेन्डेन्ट के पद से निकाला जाना-श्री जयप्रकाश नारायण को मानपत्र देने के अपराध में आदि घटनायें जीवन को अब भी उत्साह देती हैं आगे बढ़ाती हैं।

रामराज्य का वर्णन नहीं किया है। वह तो जैसा है सभी जानते हैं।

इतना सब देखने के बाद भी विश्वास दृढ़ है कि मनुष्य की जय होगी सत्य की प्रतिष्ठा होगी और अहिंसा, प्रेम, शान्ति का राज होगा।

दबे दूब से दीन बनायेंगे समतल सुन्दर सिंहासन,
जन जन का होगा इष्टासन, ऐसा क्या होगा इन्द्रासन।

'जय-मानव' का दूसरा चरण प्रारम्भ होता है।

"एक चरण में विजित हो गया हैं आधा संसार,
एक चरण रख और तुम्हारा है, सारा संसार।"

हिंसा, अहिंसा का प्रश्न 'साधन' में हल करने की चेष्टा की है

साहस, जिसके आगे सारे अस्त्र शस्त्र हैं व्यर्थ,
शव को शिव करता है साहस मंत्र अमोघ अव्यर्थ।

जहाँ बुद्धि बैठी करती हैं जटिल कुटिल शास्त्रार्थ,
ज्ञान जहाँ यह लोक छोड़कर कहता है परमार्थ।

वहां वीर अवसर पर तत्क्षण देता है ललकार,
वह संसार तुम्हारा होगा मेरा यह संसार।
मेरा यह संसार यहां पर मानव का अधिकार,
कर में शक्ति हृदय में साहस मन में दिव्य विचार।
मानव के रहते मानव पर कैसा अत्याचार,
मानव जीता रहे और जीता हो भ्रष्टाचार।

गान्धी जी ने चरखा चलाया और क्रान्ति की, पाखाना साफ किया और विप्लव किया। अस्त्र शस्त्र, साधन सब 'साहस' और समय पर 'साहस' पर निर्भर हैं। मनुष्य स्वभाव से अहिंसक है, उसे हिंसक बनाता है उसका शोषक और शोषण इस युग का भीषण पाप है। इस युग का रावण राम बना है। कोटि कोटि मानवों को कंकाल मात्र करके सन्त की वाणी बोलता है, सभ्यता और संस्कृति के गीत गाता है यह रावण

"रूप में सम्राट वीर विराट के किन्तु इसको देखता कोई नहीं।"

किन्तु जन जन अब इसे जान गया है।

"चेतना, सङ्घ की शक्ति जगी जन जन में, फिर एक बार हुंकारों क्रान्ति भवानी।
दानव मानव, ये सिंह नन्दिनी, दोनों, कैसे पी सकते एक घाट पर पानी।

गान्धी जी ने एक घाट पर सब को पानी पिलाने की चेष्टा की परन्तु दानव प्रवृत्ति ने नन्दिनी को उसी घाट पर उदरस्थ किया और जोर शोर से गान्धी जी की वाणी बोलना शुरू किया।

विश्व का वह पुनीत स्थल जहाँ गान्धी जी गोली खाकर सोये थे, श्री सियाराम शरण गुप्त के वर्णन के अनुसार एक विलासी का कमरा बना है जिसे देखने के लिये भी अनुमति नहीं। क्या यही एक घटना गान्धी जी की पूरी बातों का खंडन नहीं करती। मेरा दृष्टि कोण स्पष्ट है। गान्धी जी की बातें, धर्म की सब बातें सत्य हैं

'धर्म सत्य है किन्तु वीरता सर्वोपरि है सत्य,
सदा वीरता के प्रांगण में खेलेगा शिव सत्य।

सत्य का बालक दानव के जंगल में कैसे खेलेगा। महात्मा जी ने, विश्व के सभी महात्माओं ने इस बालक को जीवित रक्खा यही बड़ी बात है। यह जंगल साफ होगा, मानवता का विस्तृत प्रांगण बनेगा और शिव सत्य वहाँ खेलेगा।

'बोली थी गोली तीन वार, साधू सन्तो सब होशियार,
यह दानव की लोभी दुनियाँ, मानव के बच्चो होशियार।

जीना हो तो इस दानव को इस रावण को ही कहो राम,
इसने नरमेध रचाया है बलि होते होते दो प्रणाम।
हे सत्य अहिंसा अवतारी! गोली से बोला व्यापारी,
श्री कृष्ण चाहिये, गान्धी जी ! माला से मिटते कंस नहीं
दानव के रहते पृथ्वीं पर पनपेंगे मानव-बंस नही।"

जो माखन चुराये, झूठ बुलाये, रास रचावे और गीता सुनावे, बंशी बजावे और पुरुषोत्तम कहलाये, ऐसा सफल मानव दुनियां को चाहिंये। कंस और रावण तो इसी का लोहा मानेंगे।

इस युग का दानव कितना भीषण है। उसे गधे के शीश वाला कहना भी कम है और पशु भी कहना कम है। किसने देखा है कि घोरहिंसक शेर ने भी किसी जंगल में सब जानवरों को मार कर बिछा दिया हो और अपनी मांद में बरसो के लिये पशुओ की लाशें भर ली हों। और आज का सभ्य दानव यही करता है। ११ सेर का एक बम गिरा कर ६८ हजार मानवों को साफ कर देता है। इस प्रकार हिरोशिमा में चिर-शान्ति स्थापित करता है। इसी प्रकार विश्व में शान्ति की चेष्टा करता है।

उसी के कुचक्र से अहिंसा का पुजारी सफलता के शिषर पर पहुँच कर गोली का शिकार हुआ, मातृ प्रतिमा खंडित हुई और तपस्या मिट्टी के मोल बिकी, सत्य का मन्दिर भग्न हुआ और ऐसा पराजय दिखायी पड़ने लगा कि सत्य की बात कहना भी कठिन हो गया।

किन्तु मानव ने सदैव इस दानवता से मोरचा लिया है। उसे विश्वास हैं
"नहीं बुझेंगे नभ दीप सारे, सदा जले हैं जलते रहेंगे।
प्रकाश की पुण्य मयी कथायें, सदा कहीं हैं कहते रहेंगे।
मनुष्य है सत्य मनुष्यता है, बसुन्धरा शान्त ऋतंभरा है।
बसुन्धरा वीर-पतिव्रता है। मनुष्य की चेतनता प्रफुल्ल है,
वीणा, प्रवीणा, तरुणा, नवीना, केकी कला निर्झर के स्वरों में
सदा बजी है, बजती रहेगी।

और अन्त में इसी विश्वास के साथ पुस्तक की समाप्ति है

नव जागरण, चेतना तेरी, कण कण भरी वेदना तेरी।
स्वर स्वर उठी बंदना तेरी, पद पद हुई अर्चना तेरी।
उठने वाले घन घमंड सम, गिरने वाले तड़ित दंड सम
जय मानव की। जय लाघव की।

'ललाम'

प्रथम चरण

शत-शत दल विकसित कर
  अरुण किरण आयी।
प्रथम चरण
करुण चरण
अरुण वरण
सन्त चरण
मलयानिल मन्द मन्द
गाती शिव-मुक्त-छन्द
  जन-जन-मन भायी।
अलसित दृग,
सुप्त प्राण,
गाती जागरण-गान
  जागृति वर लायी।



जय मानव

प्रणाम

यश-सरवर में विकसित अनेक साधक-कविवर पंकज ललाम।
श्री राम, श्याम, भगवान बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, शत शत प्रणाम।

अवतरण

जिसके पवित्र प्रिय प्रांगण में प्रकटा था प्रथम प्रभात काल,
जिसके तप बन में गूँजा था नव सामगान रव दिव्य ताल।
जिसके वक्ष स्थल में विगलित जान्हवि जमुना करुणा धारा,
जो रचा गया प्रभुके द्वारा जो है प्रसिद्ध उनका प्यारा।
उस राम श्याम के धन्य धाम में प्रकटी उनकी ही विभूति,
विकसित करने सद्धर्म, ज्ञान हरने जगती की ईति-भीति।
जग में दैवी संपदा जगी, पाया शिव शंकर का प्रसाद,
सोए असुरों के मलिन भाव, हारा जड़ता मय भोगवाद।
प्राची का पुनः प्रभात काल, मानवता का फिर बाल्य काल,
कुसुमित, सुरभित, हर्षित, पुलकित मानव मंदिर के आल बाल।
नव अरुण वरण, धर अरुण चरण, फिर अमृत क्षरण, कर अभय वरण,
आया ऊषा का अरुण काल, देखे जगती ने करुण चरण।
नंगे भूखों के दीन-बन्धु पतितों के प्रभु धर्मावतार,
जन मन के मोहन दास आज आए—आए करुणावतार।
युग-युग के भारत कर्मचन्द प्रकटे निरभ्र नभ में विशाल,
मानव विकास की चरम कोटि, मानवता का अति उच्च भाल।
भगवान राम का शौर्य, तेज, मोहन का प्रिय मोहन स्वरूप,
भगवान बुद्ध की दया, शान्ति प्रति मूर्त्ति अहिंसा की अनूप।
ईसा का मानव धर्म प्रेम मुहमद की जाग्रति ज्योति किरण,
एकत्र शान्त शिव भाव जगे, सुरभित धरणी का नन्दन बन।
सात्विकता और सरलता ने मोहन का मोहन रूप लिया,
खादी की सादी वरदी में नट नागर ने अवतार लिया।
कुछ दुबली नरम हड्डियों ने जग की सेवा का भार लिया,
धर अस्त्र शस्त्र सब एक ओर अपने वश में संसार किया।

दर्शन

थी नमित दृष्टि किस चिन्ता से अपनी भृकुटी थे बंक किए,
मैंने देखा बापू! तुमको उद्‌गारों की निधि अंक लिए।

कन्नौज तुम्हारा धन्य भाग्य, जयचन्द ! मिटा तेरा कलंक,
तेरे स्टेशन से गुजरा लेखक शोधक राष्ट्रीय अंक।
पावन पुनीत था उषा काल मेरा था सुन्दर बाल्य काल,
चुपके होस्टल से भागा था अर्पित करने निज प्रेम माल।
अब तक थे मेरे स्वच्छ नेत्र, मनमें पवित्र सुन्दर विचार,
यह प्रथम ज्योंति का दर्शन था, मेरा मानस था निर्विकार।
प्रतिभा प्रसुप्त थी, निर्धनता माता ही उसे जगाती थी,
वैभव विलास, जीवन-प्रमोद की इच्छा नहीं सुहाती थी।
देखे थे जनगण दीन हीन नंगे भूखे जर्जरित क्षीण,
देखा था अपना ग्राम दुखी, वैभव विहीन, केवल मलीन।
देखा था दुख मेरी माता के . आँसू यों ही सूखे थे,
देखा था कितने नारायण आँगन में प्रायः भूखे थे।
कैसे होती सुख की इच्छा, अपने विलास कीं अभिलाषा,
जब देश, ग्राम, बान्धव, माता, सब थे विपन्न, छोड़े आशा।
कहते थे मनके भाव सजग, उठ मिट्टी के पुतले सधीर,
बन जा सोना, बन जा तू भी गान्धी का सुन्दर एक वीर।
आपदा धात्री प्रतिभा की कंटक में खिलते हैं गुलाब,
तप-तप कर स्वर्ण स्वर्ण होता, ज्वालाओं की संतान आब।
कुछ क्षण बापू की छवि देखी, चित्रित मानस पट पर ललाम,
उस दिन से आजीवन झंकृत थी जीवन - वीणा, हृदय - धाम।
थी वहां तपस्या मूर्तिमान चिर शान्ति त्याग की दिव्य मूर्ति,
प्राणों में विकट विकलता थीं मानस में अद्भुत ज्ञान स्फूर्ति।

तिलक

भारत जननी के भाल-तिलक, दुखिया माता के लाल तिलक,
दुःशासन नव गोपाल तिलक, सुन्दर तन हृदय विशाल तिलक,
भगवान तिलक, भगवान तिलक।
दीनों के रक्षक प्राण तिलक, भूखों के निर्भय गान तिलक,
प्यारे स्वदेश अभिमान तिलक, गीता के पावन ज्ञान तिलक,
भगवान तिलक, भगवान तिलक।
पद दलितों के अरमान तिलक, शूरों की अनुपम शान तिलक
कर्मठ योगी विज्ञान तिलक, कारागृह के भगवान तिलक,

महिमान तिलक, श्रीमान तिलक।
वाग्मी महान विद्वान तिलक, पथ के प्रदीप निर्वाण तिलक
व्याकुल स्वदेश, सब शोक-वेश, असमय हा हन्त प्रयाण तिलक,
भगवान तिलक, भगवान तिलक।
मां के ललाट का तिलक मिटा घर-घर में हाहाकार हुआ,
अफ्रीका के विजयी सैनिक गान्धी का नव अवतार हुआ।

डायर

पांचाल देश में 'डायर' ने बतलाया था शासन प्रताप,
गोली के बल समझाया था है अधम दासता घोर पाप।
रेंगे थे नर पेटों के बल, बालक निर्बल सब नर-नारी,
गोली से भुने, शिकार हुए हारी मां पांचाली हारी।

कृश-वदना, केश-कर्षिता थी दुःशासन से भारत माता,
जन कोटि कोटि की माता का कोई न रहा रक्षक त्राता।
हिन्दू मुस्लिम का रक्त बहा था एक साथ जैसे पानी,
पंजाब देश के वीरों की हो गई अनोखी कुरबानी।
थे पराधीन सब दीन हीन वक्षस्थल पर आघात हुआ,
उपकारों के बदले स्वदेश पर भीषण वज्राघात हुआ।
सब भारतीय तिलमिला उठे दासता शृंखला असह हुई
निर्बल निरस्त्र पीड़ित जनता क्रुद्ध करने को अति व्यग्र हुई।

असहयोग

राष्ट्रीय गगन में घिरे मेघ नैराश्य निशा का अंधकार,
प्रकटे मोहन नव चारु चन्द्र प्रकटे, प्रकटे करुणावतार।
भारत के रत्न पारखी ने खोजे मणि लाल जवाहर से,
मोती के थाल सजा डाले माता के हित नर नागर ने।
पंजाब - केसरी, दीन - बन्धु, भाई पटेल, नव कर्ण धार,
आ गए देश सेवक लाखों रण गर्जन सुनकर एक वार।
प्रस्ताव हुआ परदेशी से अत्याचारी से असहयोग,
शासन सत्ता से असहयोग, शासन प्रपंच से असहयोग।
मुस्लिम जनता थी क्षुब्ध त्रस्त, धार्मिक स्थानों पर प्रहार,
था असहयोग के साथ साथ घनघोर खिलाफ़त का प्रचार।

मौलाना मुहम्मद शौकत ने दिखलाई अपनी आन बान,
'बी अम्मा' थीं तैयार हुई, अपने सुख का अब कहां ध्यान।
अजमल खां साहब ने सचमुच सच्चे हकीम का काम किया,
सदियों के रोग गुलामी का जीवन भर खूब निदान किया।

आंदोलन

उमड़ा भारत का जन-समुद्र घुमड़ा साहस का घोर मेघ,
गूंजा जय घोष देश भर में, दासता दुर्ग को बेध-बेध।
निकले बालक, निकले बूढ़े निकले जवान सब नर नारी,
निकला जय रव 'भारत स्वतंत्र', निकले-निकले अत्याचारी।
माता की जय, गान्धी की जय, शोकत की जय, अल्ला अकबर,
राजेन्द्र लाल, तैयब की जय, मुहमद की जय जय, प्रति अवसर।
आए माता के वीर लाल, पुस्तक का पढ़ना छोड़-छाड़,
कालेज बन्द, स्कूल बन्द, लग गए मदरसों में किवाड़।
सीखा जीवन का प्रथम पाठ, स्वाधीन बनो, स्वाधीन बनो।
ओ मानव! मानव-कुल वालो! क्यों मानवता से हीन बनो।
'मां आज बन्दिनी है बेटा दुःशासन ने खींची सारी,
तुम बनो पुस्तकों के कीड़े! तुम पर जननी है बलिहारी।
आए-आए भारत कुमार अभिमन्यु बने शत शत कुमार,
रणभेरी—रण-हुङ्कार सुनी, गरजे प्रताप के नव कुमार।
घूमे घर घर ओ नगर नगर सब ग्राम ग्राम ओ धाम धाम,
जय जय माता जय जय जननी गुंजरित नाद था सुबह शाम।
आए वकील कर असहयोग बनकर सच्चे क़ौमी फ़क़ीर,
प्रत्येक प्रांत में निकल पड़े सौ सौ माता के लाल वीर।
सब देश भक्ति के मतवाले सब मातृ शक्ति के रखवाले,
हिन्दू मुसलिम सिख एक हुए मां की सेवा करने वाले।
गूंजी घर घर चरखे की ध्वनि करघे से पावन वस्त्र बना—
फिर से स्वदेश के नग्न वेश पर दुग्ध श्वेत शुभ वस्त्र सजा।
कर दुःशासन से असहयोग प्रिय मातृ भूमि से प्रेम योग,
आन्दोलन करने लगे देश में प्रान्त प्रान्त के सभी लोग।
ज्वालाएं प्रकटीं नगर नगर बहु वस्त्र विदेशी. भस्म हुआ,
जल रहे विदेशी माल सभी पूरा जौहर का रस्म हुआ।
निज तन से वस्त्र विदेशी को तजने का सब करते निश्चय,
निज मन से शस्त्र विदेशी को धरने का सब करते निश्चय।

गांजा, अफ़ीम, ताड़ी, शराब की दूकानों पर था घरना,
राष्ट्रीय शुद्धि का प्रथम मन्त्र-मोहन को राष्ट्र यज्ञ करना।
जन जन के तन मन शुद्ध हुए भारती प्रशान्त प्रबुद्ध हुए,
स्वातन्त्र्य समर के संचालक प्रति प्रान्त-प्रान्त शत बुद्ध हुए।
थे कहाँ अस्त्र या तीक्ष्ण शस्त्र निकले नूतनतम अस्त्र यहाँ,
जिनके आगे सब कुंठित थे पशुता के सारे शस्त्र यहाँ।

अहिंसा

सदियों का सोया देश जगा, सत और अहिंसा प्रेम पगा,
भाई भाई भारत वासी, भाई भाई का प्रेम जगा।
जागा जन मनमें भ्रातृ भाव, जागा जननी का मातृ भाव,
अनुरागा देश देश सबने छोड़ा दुराव, छोड़ा खिचाव।
पंजाब जगा, जिसकी धरणी पर रुधिर बहा था वीरों का,
जिसकी छाती पर पत्थर था, अपमान हुआ था धीरों का।
पंजाब-केसरी गरज उठा, गरजे 'किचलू' 'आलम' महान,
श्री सत्य पाल गरजे, लरजे शासन का होता था निदान।

बङ्गाल

बंगाल जगा, जागे स्वदेश के कोटि वीर-नर, विपिन चन्द्र,
श्री दास दीन के बन्धु उठे, भावुकता लहरी शान्त मन्द्र।
प्यारे स्वदेश का गर्व भाल, बंगाल लाल, बंगाल लाल,
बंकिम की सुजला माता का बच्चा बच्चा करता कमाल।
बंगाल कि जिसने रक्त क्रान्ति का आयोजन भरपूर किया,
बंगाल कि जिसने अत्याचारी मद को चकनाचूर किया।
अरविन्द घोष की जन्मभूमि, जागी सुभाष की वीर भूमि,
जागे जननी के लाल बाल जय जन्मभूमि जय जन्मभूमि।

वन्देमातरम्

नर लक्ष लक्ष नर कोटि कोटि कहते थे जय जय जन्मभूमि,
बंकिम का सार्थक गान हुआ ओ कोटि कोटि की जन्मभूमि।
तेरे रक्षक कर कोटि कोटि जय जन्मभूमि जय जन्मभूमि,
तुमको मां अबला कौन कहे जय सुजला सुफला जन्मभूमि।
मलयज शीतल, श्यामल शस्यल जय जन्मभूमि जय जन्मभूमि,
जय शुभ्र ज्योत्स्ना-पुलकित-नित, जय जय जय सुंदर जन्मभूमि।

जय कुसुमित, सुरभित, हर्षित अति जय जय। जय पुलकित जन्मभूमि,
जय जय सुहासिनी प्रेम-वादिनी सुखदा वरदा जन्मभूमि।
जागी तेरी दृढ़ भक्ति हृदयमें, जय जननी जय जन्मभूमि,
जागी करमें नव शक्ति प्रबल जय माता जय जय जन्मभूमि।
तेरी ही प्रतिमा घर घर में मन्दिर मन्दिर में पूज्य हुई,
सब प्रेम-पुजारी नर-नारी, जय जन्मभूमि, जय जन्मभूमि।
दुर्गा दश प्रहरण-धारिणि मां, जागी कल्याणी वरदानी,
जागी जनता कल-कल रव था जय जन्मभूमि जय जन्मभूमि।

अहिंसक क्रान्ति

उत्तुङ्ग शिखर पर लहराया जननी का नभभेदी निशान,
चंचल समुद्र रव घहराया जय जन्मभूमि जय जन्मभूमि।
मद्रास, महाकोशल जागा, बम्बई और गुजरात जगा,
आसाम, मध्य, सीमान्त प्रान्त, संयुक्त प्रान्त औ आन्ध्र जगा।
नर हृदय हृदय में धधक उठा शासन से भीषण असन्तोष,
कर कर में जीवन फड़क उठा, भर गया देश में वीर रोष।
यह कोटि कोटि की जन्मभूमि दुख दीन रहे यों पराधीन,
यह राम-श्याम की जन्मभूमि पद दलित, विदेशी से मलीन।
इस शस्य श्यामला मां के सुत भूखों मर कर जीवन काटें,
ये ऋषि कुमार यों मूढ़ रहें नंगे भूखे दुर्दिन काटे।
उस पर गोली की होली हो, बह जायँ रक्त के परनाले,
जो अमर दिव्य जीवन वाले, उनको हो जीवन के लाले।

जागरण

जागी प्रभु की अवतार भूमि, जागी विभु की अनुराग भूमि,
जागी वनमाली की विभूति-मय त्याग भूमि सुपराग भूमि।
जागे युग युग संचित सुभाव जागे ऋषियों के पुण्य कर्म,
जागे शिव, जागे सत्य भाव, जागा स्वदेश जागा स्वधर्म।
जागे प्रताप, हल्दी घाटी थी नगर नगर घाटी घाटी,
सजते स्वतन्त्रता के सैनिक मिट रही दासता परिपाटी।
जागा रण वीर शिवाजी का रण-शौर्य वीर्य वर क्षात्र तेज,
जागे क्षत्रिय रण-आनंदी तजकर प्रमाद सुख धाम सेज।
जागा युग पूज्य युधिष्ठिर का शिव सत्य, जगे भारती पार्थ,
निःशस्त्र समर-स्वातन्त्र्य सजा, अब भारत था भारत यथार्थ।

शौकत को लखकर नर नारी होते थे आनन्दित असीम,
पांचाली दुख हरने वाला, आया था अद्भुत वीर भीम।
जागी अवतार मुहम्मद की एकता, जाति का दृढ़ निश्चय,
जागा श्री भीष्म पितामहका संकल्प वीर का दृढ़ निश्चय।
जागे ध्रुव धीर, अनेक वीर, प्रह्लाद देश के सत्य धीर,
उठ गए कोटि कर हरने को भारत माँ की तत्काल पीर।
ओ कारीगर, ओ बाजीगर. तेरा यह अद्भुत चमत्कार,
घर घर ध्रुव औ प्रह्लाद हुए घर घर स्वतंत्रता के कुमार।
जो दुखियों के दुखकारी थे वे भारी दीन दयाल हुए,
जो मूक मौन भोले प्राणी वे वक्ता औ वाचाल हुए।
तुमने ही जीवन दान दिया, तुमने ही कार्य महान किया,
इस धूलि-धूसरित भारत को तुमने ही जग-सम्मान दिया।
तुमने ही सदियों के पीड़ित नर-कंकालों को प्राण दिया,
तुमने ही इनको शिवशकर कर अभय अग्नि-सन्तान किया।
तुमने ही इनको तपा तपा कर अमर किया औ अजर किया,
हे जगतजयी ! मेरे बापू ! तुमने स्वदेश को अमर किया।

जड़वादी

पश्चिम अभिमानी पशु बल का पश्चिम विज्ञानी सुख-भोगी,
सौ दो सौ बरसों में इतना हो गया सभ्यता का रोगी।
जीते उसने जल थल, नभ थल, जीते प्रदेश, जीता स्वदेश,
हारा वह अपने ही घरमें, हारा उसका विज्ञान वेश।
बच्चा बूढ़ा भी तड़प तड़प ललकार रहा शासन-सत्ता,
ओ पशु बलके अभिमानी आ, तेरा शासन पीला पत्ता।
ले आ सब अपने अस्त्र शस्त्र, ले आ सब वैज्ञानिक प्रयोग,
दुःशासन के अत्याचारी ! है शस्त्र हमारा असहयोग।
है कहाँ शस्त्र जो काट सके ये अमर पुत्र उस ओर बढ़े,
है कहाँ शस्त्र जो छांट सके ये नौनिहाल उस ओर बढ़े।
तूने छल बल से जीता था, तू सत्य-न्याय से हार गया,
हिंसावादी ! ओ जड़वादी, तेरा मिथ्या संसार गया।
तू नाम मात्र को ईसाई, ईसाका ज्ञान भुला डाला,
जो एक गाल पर थप्पड़ दे, कह दो लो एक और दो आ।
देखो भारत के नरनारी बालक बूढ़े क्या कर बैठे,
चलती लाठी चलती गोली, वे वीर अहिंसक जम बैठे।

उनके कैसे दृढ़ चरण हृदय ! बह गए रक्त के परनाले,
जगको जीवित करने वाले, जम बैठे हैं मरने वाले।
ये कोटि अनोखे शूर वीर, ये कोटि अहिंसक धर्म धीर,
हँसते जाते कंटक-पथ में उनके छिलते जाते शरीर।
कलतक जो तेरा दीन दास वह आज बना गुरु ज्ञानवान,
भूले थे बल अपना तप बल, ऋषिपुत्र सकल विद्या निधान।

पथ-प्रदर्शन

बापू ! तुमने पथ दिखलाया अब भी इति को अथ कर डालो,
ओ लोभी स्वार्थ हेतु जग में क्यों दीन दुखी का घर घालो ?
धरती विशाल, पर्याप्त प्रचुर, सुखके साधन सामान प्रचुर
क्यों असन्तोष की अग्नि भरे, जीते प्रदेश, साम्राज्य प्रचुर।
पाया उनमें सुख चित्त-शान्ति ! पाया जग-पीड़न में प्रसाद ?
आत्मा खोकर ऐ विश्वजयी ! सुन पाया क्या आह्लाद-नाद ?
तुम जिओ, जगत को जीने दो, विज्ञान तुम्हारी दासी हो,
बांटो जगको अपना प्रसाद, मन्दिर के तुम अधिवासी हो !
ये शान्ति शान्ति की शिक्षायें गंगा की शीतल धारायें,
चन्दन-प्रसून की मालायें भातीं या मदिरा-शालायें !

संघर्ष

राजसी शक्ति के वे स्वरूप तामसी बने अत्याचारी,
दुर्दंड दमन घन घोर उठा, अब शक्ति-संतुलन की वारी।
जीतेंगे सुर या असुर कौन ? पशु जीतेगा अथवा मानव ?
तामस या राजस श्रेष्ठ कौन ? सत जीतेगा अथवा दानव ?
बापू ने उत्तर दिया मौन, भूले हो तुम हो यहां कौन ?
ध्रुव सत्य साक्षी अंतरिक्ष, संशय वादी तुम यहाँ कौन ?
पहिले अपना जीवन तन मन, संपूर्ण रूप से शुद्ध करो,
फिर चलो अहिंसक वीर बढ़ो अत्याचारी से युद्ध करो।
गरमाओ अपना खून वीर ! मानस को शान्त प्रबुद्ध करो,
अत्याचारी से प्रेम करो, अत्याचारों से युद्ध करो।
राष्ट्रीय शुद्धि का अवसर है घर घर जन जन मन शुद्ध करो,
हे सहनशील, हेशुद्ध-वीर अत्याचारी को शुद्ध करो।
भाई भाई को अपनाओ, अपने अवलम्बन पर आओ,
सत, शान्ति, अहिंसा, प्रेम लिए शासन का रथ अवरुद्ध करो।

नूतन दुर्गा

मातायें, नूतन दुर्गायें, लेकर प्रसून की मालायें,
आयीं, आ जायें बाधायें, आयें अत्याचारी आयें।
निकले सुन्दर कोमल प्रसून, निकले भारत के नर नारी,
निकले जुलूस, निकले निनाद, निकलें निकले अत्याचारी।
जिनके कर होता प्रखर बाण, धन्वा अथवा असि तीक्ष्ण धार,
लेकर सुमनों के हार चले वे चिरजीवी भारत कुमार।
वे ऋषि कुमार, कौमी फकीर थे, आजादी के दीवाने,
वे सत्य अहिंसा के स्वरूप थे पागल प्रेमी परवाने।
थे सत्य सन्ध, जीवन-ज्वलन्त जाते जगको मग दिखलाने,
निकले निरस्त्र वे महावीर, निकले सुकंठ गाते गाने।
इनके हृदयों में प्रेम भरा, इनके मानस में नेम भरा,
इनके नेत्रों में क्षेम भरा, इनका जीवन है हेम भरा।
निकले हितकारी त्याग मूर्त्ति निकले भयहारी सत्य मूर्त्ति,
वे प्रेम पुजारी निकल पड़े, परिवर्तनकारी प्रेम मूर्त्ति।
धरणी प्रसन्न, आकाश मुग्ध, मुसकाये मन मन में तारे,
जग-हिंसा से ये विकट वीर हैं बिना अस्त्र लड़ने वाले।
देखा विस्फारित नेत्रों से कुछ ने यह नूतन नवल दृश्य,
देखा आनंदित नेत्रों से सबने यह सुन्दर विमल दृश्य।
जिसने देखा वह धन्य हुआ कुछ कर पाया तो जन्म सुफल,
वह स्वर्ण-काल था भारत का चमका था मोहन चन्द्र धवल।

दमन

आई पशुता औ बर्बरता बनकर नंगी नौकरशाही,
लाठी, गोली के वीर चले, कर दी पहिले यह आगाही।
'यह भीड़ गैरकानूनी है, जाओ, जुलूस को भंग करो,
वरना लाठी है गोली है, क्यों व्यर्थ यहां रण-रंग करो'।
दो दिन के दीक्षित किन्तु परीक्षित वे नरनारी बोल उठे,
'हम पराधीन भारत वासी; हम अपने बंधन खोल उठे।
है अस्त्र हमारा शान्ति प्रेम, तुम तो हो मेरे ही भाई,
तेरे मन में मेरा घर है, तू कैसे भूला है भाई?
तुम जगत-जयी हम प्रेम जयी, करुणा के कोमल, कुसुम लिये,
हम स्वतंत्रता के दीवाने, किसका क्या हम हैं यहां लिये'?

उपहास हुआ मानवता का खुल खेला निर्दय क्रीत-दास,
लाठी बरसी, गोली बरसी, पड़ रही भयानक मार त्रास।
दृढ़ अभय चरण, जमकर बैठे, स्वातन्त्र्य-वरण रण ठाने थे,
संघर्ष बढ़ा उत्कर्ष चढ़ा, वे मरदाने दीवाने थे।
बढ़ती जाती जाग्रत जनता खेली थी खुल कर दानवता,
जीतेगी निश्चय जीतेगी सात्विकता एवं मानवता!
प्रकटी थी कलिकी संघ शक्ति, आई हृदयों में देश भक्ति,
अपनाई सबने योग शक्ति, पाई स्वदेश ने मुक्ति-युक्ति।

अभय पार्षद

सबको पहिला बरदान मिला, सब दैवी पार्षद अभय हुए,
हो रहीं सभायें स्थान स्थान शत लक्ष सभासद अभय हुए।
तब अटक कटक तक सेनानी बापू की सेना चढ़ी विकट।
थल थल पर भारी उथल-पुथल कटती जननी पगकी श्रृंखल,
मां के घर घर उत्सव होली है ईद और दीवाली है,
माता कंगालिनि नहीं रही, मां आज जवाहर वाली है।
अरुणोदय, पुण्योदय, प्रांगण में प्रकटी थी जागरण-प्रभा,
कितने पुनीत नैमिषारण्य, यह राष्ट्र पर्व, वह राष्ट्र सभा!
जीवन-होता देते अशंक, जन जन को यह राष्ट्रीय मंत्र,
स्वाधीन करो भारत जननी, वीरो सब हो जाओ स्वतंत्र।
मेटो मेटो हे लाल, शीघ्र दासता अधम, अपना कलङ्क,
तुम नर हो नर-शार्दूल बनो, तुम नारायण, तुम नहीं रङ्क।
तोड़ो तोड़ो इस शासन की तीलियाँ उठो तिलमिला उठो,
मेरे मलीन स्वाधीन बनो, अब उठो, हँसो खिल खिला उठो।
तुममें वह दैवी तेज व्याप्त, तुम स्वयं ज्योति तुम स्वयं आप्त।
नर वीर! असंभव शब्द नहीं, किसको तुम कर सकते न प्राप्त।
पूजा नमाज आजादों की केवल, हो पाती है कबूल।
मन्दिर मस्जिद की पूजायें, सोचो क्यों जाती हैं फजूल।
तुम भूले राम रहीम एक, मानव समान सब एक एक,
मानव कब पराधीन होता! भूला तेरा पावन विवेक।

नवमंत्र

आबाद करो नर देव, राम की कुटिया फिर आबाद करो।
प्यारे रहीम के गुन गाओ, प्यारा स्वदेश आजाद करो।

बतलाओ नर-निर्मित अनेक ईटों के ये मन्दिर विशाल,
भगवान-भवन हैं, या ईश्वर के निर्मित ये मानव कुमार।
यह छिन्न-भिन्न ईश्वर प्रतिमा, यह छिन्नासन वास्तविक शक्ति,
नर प्राण प्रतिष्ठा कर नर की, नर में कर नारायण सुभक्ति।
देखो वे तरुण तपस्वी हैं, बहती उनकी श्रम कण गंगा,
ये शिवशंकर वरदानी हैं, ये करते हैं भव भय भंगा।
हैं श्रमिक तपस्यालीन क्षीण, जीवन-लीला जिनकी दुखान्त,
श्रमजीवी हैं भूखे किसान, जिनके सुख साधन अन्त-अन्त।

सूखी रोटी भी दुर्लभ है, पानी का कष्ट उठाते हैं,
दुखिया दरिद्र नारायण ये, दुनियां को सुख पहुँचाते हैं।
जाने दो इनके भी मुख में, कुछ अन्न और कुछ दूध कभी,
जाने दो इनके भी तन पर कुछ वस्त्र और शृंगार कभी।
परदेशी सबको चूस-चूस कर दीन मलीन बनाये हैं,
वे भोक्ता हैं वे दोग्धा हैं, हम दुखिया उनकी गायें हैं।
प्रति वर्ष करोड़ों लूट-खूट कर वे स्वदेश से ले जाते,
हम टुकुर-टुकुर देखा करते, वे नित्य लूट करते जाते।
इस लूट राज का नाश करो है कौन सुखी इस शासन में,
सबके सब तो हैं पराधीन, सब दीन दुखी दुःशासन में।
अभिमान व्यर्थ, अति धनिक भूप! तुम भी जब बाहर जाते हो,
सोने की वह जंजीर पहिन, फिर भी गुलाम कहलाते हो।
गान्धी ऐसे शिक्षित सुशील बैरिस्टर ठोकर खाते थे,
गोरों में काले जाते ही दुख पाते मारे जाते थे।
राजर्षि विवेकानन्द सदृश, नारायण के सुन्दर स्वरूप,
अमरीका जाने पर आह! काले कहलाते थे कुरूप।

होटल में भोजन का पाना उस देवपुरुष का वर्जित था,
सैलून वहां था कालों को दाढ़ी बनवाना वर्जित था।
सब ऊंच-नीच ब्राह्मण, अछूत निर्धन अथवा धनपति ललाम,
गोरों के आगे काले हैं सब भारतीय केवल गुलाम।
अत्याचारी है एक विदेशी शासन दुख का मूल एक,
हिन्दू को भी दुख देता है मुसलिम को भी बस वही एक।
फैलाई उसने फूट, एकता एक जगह दिखलाई है,
गोली की होली में इसने निज सम दर्शिता दिखाई है।

सब एक रहो भाई भाई आई वह आजादी आई,
सब मिल माता के कष्ट हरो भारत जननी सबकी माई।
लड़ना छोड़ो पंचायत में आपस में अपना न्याय करो,
मिल बैठो दस दस बीस तीस, शत शत सहमत हो राय करो।
भाई रहीम, भाई करीम, मैकू चैतू भाई हरिजन,
अपनाओ अपने अग आप, मत काटो अपने आप चरण।
सब स्वावलम्ब के पाठ पढ़ो, सर्वदा स्वदेशी अपनाओ,
यह मुक्ति मार्ग है अब इस पर आओ भारतवासी आओ।
बापू का यह सन्देश मंत्र पहुंचा घर-घर में नगर-नगर,
झोपड़ियों और मड़ैयों में गावों पुरवों में डगर-डगर।

जन-विप्लव

गान्धी की आंधी चली देश में आन्दोलन की धूम मची,
विश्वम्भर ने पृथ्वी तल पर यह एक अनोखी सृष्टि रची।
भारत रानी का शीश मुकुट रत्नों से जगमग दीप्त हुआ,
सुन्दर सनेह नवदीप माल, भारत मन्दिर सुप्रदीप्त हुआ।
यह प्रान्त केसरी उठ बैठा, कड़-कड़ बोलीं शृङ्खल लड़ियां,
पुरुषोत्तम का सिंहत्व जगा, आईं आज़ादी की घड़ियां।
शिव शान्ति सदन मृदु मदन दलन, मोहन महर्षि वर मालवीय,
राष्ट्रीय यज्ञ के थे अध्वर्यु, मंत्रोच्चारण कर मालवीय।
दानी भामाशा शिव प्रसाद, भारत मन्दिर का दिव्य दान,
काशी में विद्यापीठ आज उनकी उदारता का प्रमाण।
श्री रामदास से जनसेवक, श्री रामेश्वर से त्याग मूर्ति,
भगवानदास से वाग्मी नर देते स्वदेश को ज्ञान स्फूर्ति।
सम्पूर्णानन्द समान वीर त्यागी, वाणी के प्रेम पात्र,
करते संचालन आंदोलन श्री श्रीप्रकाश से शान्त गात्र।
पंडितवर सुन्दर लाल, विमल वाणी से देते ज्ञान प्रखर,
मंज़र हमको दिखलाते थे, आया आज़ादी का मंज़र।
कोमल कमला, विमला, सरला, आनन्द भवन की कल्पलता,
बन गयी विजयिनी सौम्यमूर्ति कर सके कौन दृढ़ता समता ?
आनन्द भवन बन गया आज कौमी परवानों का चिराग़,
खिल उठे हजारों सुमनलाल, प्यारा गुलशन था बाग़-बाग़।
मोती का पानी लासानी, लासानी उसकी कुरबानी,
वाणी थी मूर्त्तिमान वाणी, वाणी से मंत्र-मुग्ध प्राणी।

राजर्षि, भोग औ त्याग मिले थे ऐसे सुंदर सानुपात,
विकसित था वह इन्दीवर सा, वितरित करता जीवन पराग।
थी एक जौहरी ने कीमत उस एक जवाहर की जानी,
वह स्वयं जवाहर था उस पर गान्धी का चढ़ पाया पानी।
वह कौन कर सके जो उससे बढ़ कर मरदानी कुरबानी,
मरने वाले ही जीते हैं, क्या जाने दुनियां दीवानी।
श्रीयुत गणेश शंकर प्रवीण, श्रीबाल कृष्ण शर्मा नवीन
जागरण कालके नव प्रदीप, मानी प्रताप-पद समासीन।
नर शर्दूल शत्रुघ्नसिंह, परिव्राजक स्वामी सत्यदेव,
अवतीर्ण हुए नरदेव तुल्य, भारत मंदिर के कोटिदेव।
श्री कृष्णदत्त से सैनिक वर, श्री मोहन लाल समान वीर,
गुरु नेता रामप्रसाद मिश्र, श्री पन्त, डाक्टर बन्धु धीर।
चहकी भारत कोकिला-नवल, महकी सरोजिनी विमल धवल,
तैयब, कृपलानी, गिडवानी, राजेन्द्र वीर आचार्य प्रवल।

खूनी कफन

श्री स्वामी श्रद्धानन्द हुए जन जन की श्रद्धा के भाजन,
मस्जिद में उनका वाज हुआ आजादी पर दो तन मन धन।
होती होली चलती गोली, स्वामी जी सीना खोल चले,
हिन्दू-मुसलिम भाई-भाई मिल रहे प्रेम से गले भले।
वह खूनी कफन तयार हुआ, नौशा बनता कौमी फकीर,
यह एक नयी दीवाली थी, यह एक अजब, बकरीद-ईद।
प्राणों के दीपक ले निकले, निकले निर्भय भारतवासी,
दीवाली थी दीवाली थी, मन्दिर में चहल-पहल खासी।
अपना तन मन धन वार दिया, कैसा सुन्दर त्यौहार किया,
अपने प्रिय की कुरबानी की, आजादी का सत्कार किया।
देखा-देखा तब ईद चांद आजादी का नर-नारी ने,
खोलीं आंखें आश्चर्य-चकित हो शासक अत्याचारी ने।
वह कौन प्रान्त, वह कौन लाल, वह कौन रहा जीवित जवान,
जागरित हुआ कुछ कर न सका, तूणीर भरे जिसके सुवाण।
विद्वान जगत गुरु ज्ञानवान, भारती कृष्ण शंकराचार्य,
अवतीर्ण हुए निज कर्म-भूमि फिर भारतीय शंकराचार्य।
उनका सुन्दर उपदेश विमल, उनका निर्मल सन्देश नवल,

उनके अनुयायी लक्ष-लक्ष धारे स्वतन्त्रता वेश धवल।
बूढ़े तैयब जी भीष्म तुल्य थे महारथी रण-सञ्चालक,
जब हृदय हृदय में शक्ति जगी तब कौन शक्ति थी पथबाधक।
उलमाओं ने फरमान दिया, शासन हराम शासन हराम,
पंडित कहते थे शासन को बस दूर-दूर से राम-राम।।
मन्दिर में मुसलिम जाते थे, मां के सपूत कहलाते थे,
मसजिद में हिन्दू जाते थे, असली बन्दे कहलाते थे।
सबका था पहिला धर्म एक, सब की थी दृढ़तर एक टेक,
परदेशी शासन असहयोग, चाहे हो सुख कर सभ्य नेक।
सबमें अल्ला का नूर जगा, सब का था भय का भूत भगा,
सब स्वतन्त्रता के आराधक, सबका बल देश हितार्थ लगा।
बरसे प्रसून, तरसे अनेक अद्भुत अनुपम राष्ट्रीय दृश्य,
आया जननी का भाग्य काल, दुख पराधीनता थी अदृश्य।

धरना

है वस्त्र विदेशी की दुकान, ध्रुव सा वह अटल खड़ा देखो।
यह है नूतन स्वर्गीय दृश्य खोलो तो हृदय पटल देखो।
यह पुत्र स्वदेशी प्रेमी है, व्यापारी लाभी बना पिता,
हा, पिता हुआ हिरण्यकश्यप, अब तो प्रकटेंगे जगत पिता।
मारा, कह कर उसका कुपूत घर से तुरन्त ही दूर किया,
भूखा प्यासा, भावुक बालक, कष्टों ने इसका शूर किया।
पड़ रही धूप. जल रहे चरण, ध्रुव धीर खड़ा अनशन ठाने,
है वस्त्र विदेशी, मलिन पाप, गाता आजादी के गाने।
जुट आये थे दर्शक अनेक, कैसी बालक की सत्य टेक।
पा गया कहाँ से दिव्य शक्ति, कितना पावन इसका विवेक।
कर जोड़ मनाता है सबको, मत छुओ विदेशी वस्त्र आप,
इसका अपूत है सूत सूत, इसका लेना तो घोर पाप।
दर्शक लौटे, ग्राहक लौटे, करुणा-गंगा स्नान किये,
आया पशुबल का प्रबल दूत पगड़ी और आँखें लाल लिये।
पड़ रही मार चलता डंडा, ध्रुव सा यह निश्चल वीर खड़ा,
उसकी तो अटल प्रतिज्ञा है, मानी स्वदेश का धीर अड़ा।
जनरव, कलरव, कोलाहल था, जयधर्म मूर्ति गांधी की जय,
बालक कहता था शांत रहो, कर्त्तव्य करो होकर निर्भय।

मारें, मुझको मारें, मारें, हारेंगे उनके हाथ हृदय,
अंतरयामी सबके उर में, होगा त्रासक भी शीघ्र सदय।
अवरुद्ध हुई उसकी वाणी, आयी उसकी माँ कल्याणी,
बोली "मेरा है धन्य दूध, है धन्य पुत्र तेरा पानी।
होगा परदेशी वस्त्र बन्द, इसका कुत्सित व्यापार बन्द,
मैं चर्खा नित्य चलाऊँगी, चल चल घर मेरे बाल चन्द।"
प्रति नगर नगर प्रति प्रान्त प्रान्त था वस्त्र विदेशी पर धरना,
जीने वाले थे सीख रहे अपनी जननी के हित मरना।
जय पाते, क्यों न अजातशत्रु प्रकटे उनके प्रेमी स्वरूप,
करुणा गङ्गा लहराती थी, वह स्वर्ग छटा सुन्दर अनूप।
नन्हें सुकुमार करों में थी राष्ट्रीय पताका फहर रही,
कोमल कंठों में गाने थे सुन सुनकर जनता सिहर रही।
नेत्रों में प्रेम छलकता था, हृदयों में दृढ़ तम दृढ़ता थी,
वे धरना देने वाले थे या मूर्त्ति मान मानवता थी।
दानवता थी खुल कर खेली, लाठी गोली का जोर बढ़ा,
भरता ही जाता था दिन दिन शासन का भारी पाप घड़ा।

दुर्गा

ज्वालायें नूतन शक्ति रूप महिलायें धरना देती थीं,
भूले भाई को, हाथ जोड़ कर, मृदुल उलहना देती थीं।
द दो यह शिर की फेल्ट कैप, यह हैट गुलामी का बाना,
या तो लो यह चूड़ी पहिनो या पहिनो मरदाना बाना।
गान्धी टोपी का श्वेत मुकुट पहिनो प्यारे युवराज बनो,
तुम भारत जननी के सपूत सरदार बनो, सरताज बनो।
आनन्द-सिन्धु लहराता था, उत्साह तरंगें आती थीं,
दिन दिन जन मन में कोटि कोटि स्वर्गीय उमंगें आती थीं।

निशुम्भ

कुछ थे नितान्त ही ज्ञान शून्य, वे भ्रान्त पुरुष थे हृदय शून्य,
जीवन की सुघर इकाई से जिनके जीवन थे शून्य शून्य।
वे मानव कुलके थे कलंक, वे राष्ट्र चन्द्र के राहु रंक,
वे थे जघन्य, दारुण, नृशंस, राष्ट्रीय वृत्त के शून्य अंक।
उनकी थी कितनी मलिन दृष्टि, पछताई उनसे सकल सृष्टि,
माताओं पर दुर्गाओं पर उन अधमों की थी अधम दृष्टि।

उनके पापिष्ठ करों ने जब कामुक अविवेकी परस किया,
धिक्कार ! नीच ! रे कुलांगार ! जनता ने रोष विमर्श किया।

दमन

आये धाये तब घुड़सवार, जिनपर दानवता थी सवार,
कुचले मसले मानव कुमार, मर्दित पीड़ित की दुख पुकार।
मर जाने दो, दब जाने दो ये मेरे क्षण भंगुर शरीर,
युग युग स्वतन्त्र स्वाधीन अमर हम देशवीर हम देशवीर।
किसका साहस था छू लेता, अपवित्र विदेशी, मोल करे,
जग उठा देश का कारबार व्यापार, मलिन व्यापार मरे।
पाला शरीर पी दुग्ध, वीर ! मधुरागी। ओ उद्विग्न-मना,
कहकर सेवक समझाते थे, मदिरालय पर देंते धरना।
ताड़ी की दूकानें अनेक, बरबादी की आज़ादी थी,
उनपर धरना देते अनेक, जिनके तनपर शुभ खादी थी।
नंगे भूखे रूखे सूखे थे, सदियों के पीड़ित गुलाम,
अज्ञान, अविद्या, अंधकार में डूबे थे मानव ललाम।
क्षण भर की मौज उड़ाने को, घर फूँक विनोद मनाने को,
हँसने आते थे वे भोले, घर भर को दुखित रुलाने को।
खाली शराब की बोतल थी, ताड़ी का चुक्कड़ खाली था,
उनका धन जीवन मूल्यवान, माली करता रखवाली था।
कुछ रहे हठीले, गर्वीले दुर्योधन से दुर्वृत्त क्रूर,
छाती पर चढ़ कर जाते थे, धरना देते थे धीर शूर।
धरना देने वाले सेवक सैनिक, आयुध थे सत्य प्रेम,
आपदा उठाने वाले वे करते जगती का कुशल-क्षेम।
छोड़ो शराब, ताड़ी, अफीम समझाना भी अपराध हुआ,
भूले को सत्पथ पर लाना कब अनायास निर्बाध हुआ।
लाखों धरना देने वाले, सेवक थे, कोड़े खाते थे,
हंटर से मारे जाते थे, उनके शिर फोड़े जाते थे।
प्रणवीर अचल थे सहनशील, दुख पाकर गाते जाते थे,
उनके गाने, उनके बाने, जनता को बहुत सुहाते थे।
उनपर ताने भी पड़ते थे, कुत्सित व्यवसाय उखड़ते थे,
कितने अफीमची नशाखोर आ उलटी राह पकड़ते थे।

जागा जनमत, मद्यादि व्यसन लेना पीना अभिशाप हुआ।
परदेशी वस्तु वस्त्र छूना तो भारतीय को पाप हुआ।

भिक्षा

निकली अलमस्तों की टोली, भरती थी भिक्षा की झोली।
'माँ का दामन भर दो भाई' घर करती हंसों की बोली।
पैसा पैसा धेला धेला से तिलक स्वराज फंड भरता।
सुत कोटि कोटि दानी कैसे न शीघ्र धन एक कोटि जुटता।
हँस हँस कर 'बापू' माँग रहे माँ कस्तूरा बाई कहतीं,
बहिनों, ये गहने आभूषण क्यों आप शरीरों पर धरतीं।
शोभा है लज्जा, चारुचन्द्र मुख सुन्दरता आभूषण है।
कल्याणी, विद्या और विनय कुल शील जनों का भूषण है।
भारत जननी विकलांग हीन, उसके सुपुत्र नंगे भूखे।
माँ के उपवन के विटप क्षीण, लतिकायें पौधे हैं सूखे।
सर्वोदय जनजन का स्वराज्य, जिसमें समता का अटल राज्य,
है इष्ट, राष्ट्र का यज्ञ सुफल संयोजित कर दो पुष्प आज्य।
दे दो दे दो तुम मुक्तहस्त धन धाम ज़वाहर औ गहने।
परमार्थ यही है देश हेतु दानों की धारा दो बहने।
लग गये ढेर आभूषण धन देते सहर्ष सब नर-नारी।
राष्ट्रीय यज्ञ में स्वल्प भाग लेते अपनी अपनी बारी।
ऐसा था कौन अभागा नर जो देश हेतु कुछ कर न सका?
जो घर न सका दो पैसा भी बलिवेदी पर जो मर न सका?
वह आजीवन पछतायेगा, वह अधमाधम कहलायेगा,
जो प्रिय स्वदेश के हेतु समय पर कभी न कुछ कर पायेगा।
वह ही कुपूत कहलायेगा, कायर पामर कहलायेगा-
खापीकर अपनी मौज उड़ाकर जो यों ही मर जायेगा।

दानी

दानी वह सर्वोत्तम दानी, अपना जीवन-सर्वस्व दिया।
श्रम कर लकड़ी काटी बेंची, श्रमजीवी ने सर्वस्व दिया।
अपनी बटलोही गहने घर ले आया चन्दा वह किसान।
बापू के ये संस्मरण धन्य, पाया है ऐसा दिव्य दान।

जिनमें जीवन था, जीवन में जो विमल हृदय से आये थे।
वे हृदय भरे थे भावों से, उनमें अरमान समाये थे।
भावों की गंगा बहती थी, बाँधों में बंधी न रहती थी।
गंगा में बिशद चन्द्रिका थी, जो जीवन सार्थक करती थी।
धरणी पुष्पित आह्लादित थी, सुरभित वाटिका महकती थी।
सब ओर मलिनता मिटती थी, सब ओर जान्हवी बहती थी।

कन्नौज

जिसकी गलियों में मिलती है अब भी गौरव सौरभ सुगंधि,
जिसका गंगा तट था पुनीत की जहाँ बुद्ध ने धर्म सन्धि।
पृथ्वी का वह प्राचीन नगर. इतिहास पूर्ण जिसके खंडहर,
वह कान्यकुब्ज आर्यों का घर जागा था प्रथम पुण्य अवसर।
गान्धी का चरण स्पर्श मात्र,' जागरण ज्योति थी द्वारद्वार।
आन्दोलन की थी चहल पहल, कन्नौज, नित्य हर्षित अपार।
छात्रों की हुई विराट सभा पंडित वर बाबूराम शुक्ल,
थें प्रथम सभापति, तनमन के उज्वल निर्मल स्वर्गीय शुक्ल,
गंगाजल लेकर शपथ हुई, तत्काल स्कूल से असहयोग।
दूसरे दिवस शत शत छात्रों ने किया पूर्णतः असहयोग।
सदियों में फिर कन्नौज नगर की गलियों में नूतन प्रभात।
छात्रों का गर्जन, अभय नाद, पुलकित माता का वीरगात।
कोलाहल जय जय वीर नाद भारत जननी तेरी जय हो।
पंडित शिव मोहन गाते थे जय जय माता तेरी जय हो।
पुस्तकें उठाकर रख दी थीं, आये आशा के फूल छात्र,
माता के सौ सौ लाल आज सेवा से पुलकित चित्त गात्र।

स्वर्ण-युग

मेरा जीवन भी धन्य आज, मेरी लघु विद्या बुद्धि धन्य।
इस स्वर्णिम अवसर पर मैंने कुछ कर पाया सद्भाग्य धन्य।
माँ बिदा, आपदामय जीवन की माता, ममता मोह बिदा।
निर्धन के विद्याभ्यास बिदा, अभिलाषा के सम्मोह बिदा।
अंकुर था जाने क्या होता, मिट जाता अथवा उठ जाता।
हो गया धन्य, शत बार धन्य, प्रिय जननी से जोड़ा नाता।

कल क्या जाने क्या होना है, हंसना है अथवा रोना है।
जो कल होगा वह मिट्टी है, जो आज हुआ वह सोना है।
'माता को भूखी मरना है, अपने भविष्य का अंधकार'।
यह कायर सोचा करते हैं, उठती थी अन्तर से पुकार।
मन ही मन क्षण भंगुर भव को, उसके वैभव को राम राम।
निकला भविष्य को तोड़ फोड़, निकला सेवक बालक 'ललाम',

झोली में थोड़े दाने थे, बोली में सुन्दर गाने थे।
आज़ादी के परवाने थे, पहिने केशरिया बाने थे।
टोलियां हमारी निकल पड़ीं, स्कूलों पर दूकानों पर।
घरना देते थे, मंत्र-मुग्ध जनता थी अपने गानों पर।

निष्पाप हमारे जीवन थे, उत्साह हमारी नसनस में।
तन नहीं रहे अपने बस में, मन नहीं रहे अपने बस में।

लव-कुश

हम कवि थे और सुवक्ता थे हम बालक गायक थे ललाम।
हम लवकुश रामायण गाते, सुनते थे मेरे कोटि राम।
हे राम! तुम्हारा चमत्कार, सत्कार मान था मिट्टी का,
हे कलाकार! हे कुंभकार! इतना महत्व था मिट्टी का!
सुनसुन कर हृदय पसीज उठे, अत्याचारी तो खीझ उठे।
कितने नव अंकुर बीज उठे, कुछ खीझ उठे कुछ रीझ उठे।
घूमे हम बनबन घाम घाप, घूमे हम निर्भय ग्राम ग्राम।
बापू का नव सन्देश लिए, घूमे सेवक दल-बल ललाम।
बागों में या चौपालों पर, तालाबों पौशालाओं पर।
जुट आते थे ग्रामीण वृन्द मन्दिर की जीर्ण शिलाओं पर।
वे प्रथम मूक श्रोता जन थे, हम प्रथम चारु वक्ता गण थे।
अत्यधिक उपेक्षित और तिरस्कृत वे भारत के जन जन थे।
गाँवों में चौकीदार सदा शासन का भय का भूत बना
गाँवों में वह यमराज तुल्य सब सीखे थे उससे डरना।
पटवारी जमीदार पूरे परदेशी शासन के गुलाम।
उनको स्वदेश की बातों से था कौन वास्ता कौन काम।
कुछ देते थे स्थान मात्र कहते थे करिये सभा आप।
फिर चले जाइये शीघ्र, यहां ये बातें तो हैं घोर पाप।

खाने पीने की बात नहीं, वह तो भारी अपराध रहा।
फिर भी 'मट्ठा गुड़' का दाता साहस धारी एकाध रहा।
कुछ देते थे सत्कार, मान, सुन्दर भोजन ग्रामीण वीर।
सुनते थे निर्भय राष्ट्र मंत्र, हो गान्धी अनुयायी सधीर।
हम पागल थे घूमा करते, कहते गान्धी-गाथा दिन भर।
सुनते स्वदेश की व्यथा सभी, दुखिया किसान आंखें भर कर।
सुनते 'डायर' का जुल्म जोर वे करुणा की आँखें भर कर।
सुनते कोड़ों की मार क्रूर व्यापार, विकल आहें भर भर।
सुनते कोई अवतारी है सबका दुख हारी गान्धी नर,
सुनते सब मिल ले ही लेंगे सुन्दर स्वराज्य आजादी वर।
उनकी दुख की कहते सुनते यों गान्धी की निर्भय वाणी।
सुख से सानंद विचरते थे हम मुक्त जीव नूतन प्राणी।
गरमी की उन ज्वालाओं पर, या शीत प्रधान शिलाओं पर
हम बालक हंसने वाले थे, विपदाओं पर बाधाओं पर।
वह वर्षा की बंध रही लड़ी, यह टोली भी तैयार खड़ी।
जायँगे आगे जायँगे, टूटें जीवन की कड़ी कड़ी।
बिजली चमकी कुछ मार्ग दिखा, घनघोर वृष्टि प्रारम्भ हुई।
सम्मुख नाला था या नद था, उसके मद की अति वृद्धि हुई।
तत्काल पार जाना ही है, आपस में पकड़े हाथ चले।
उखड़े उस नद में पैर, अरे क्या जाने बहकर कहाँ चले।
ऐसी भयदायक घटना थी, आश्चर्य आज भी होता है।
सबके जीवन थे अन्त प्राय रोमाञ्च सोचकर होता है।
अलमस्ती थी परवाह नहीं जीवन में जीवन मिल जाता।
वह गया कौन, मिट गया कौन, क्यों कोई खोज लगा पाता।
बोले निर्भय गांधी की जय अपने साहस को धार चले।
करुणावतार की करुणा से हम हँसते हँसते पार चले।
जन अर्द्ध निशामें जुटते थे सुनते स्वदेश की व्यथा कथा।
हो रहीं सभायें सुबह शाम दिन रात जागरित थी जनता।
क्या अस्थि-शेष-नर-पिंजर का यह उदर अन्न पा जायेगा।
क्या नंगो के तन पर भाई कुछ सूत वस्त्र आ जायेगा!
मिट्टी की जीर्ण मड़ैयों में क्या दीपक अब जल पायेगा।
क्या यह टेढ़ा मेंढ़ा बच्चा दो बूँद दूध पा जायेगा।

आशाओं का संसार जगा, जनता समुद्र लहरा उमंगा।
कंगालिनि और बन्दिनी मां, होगी सुजला, सुफला, सुभगा।

शुक्ल

हनुमान प्रसाद शुक्ल पण्डितवर कालेज की शिक्षा तजकर।
आ गये नया अनुराग लिये वे त्यागमूर्ति वैभव तजकर।
अग्रज, पथ दर्शक, सौम्यरूप, कन्नौज क्रांति के सृष्टिकार।
बापू के सुन्दर भक्त, वीर, संस्कृत उन्नत उनके विचार।
मेहरोत्र राम नारायण जी पांडे जी ऐसे कर्मवीर।
आन्दोलन के संचालक थे हरते थे माँ की व्यथा पीर।
उत्तम राष्ट्रीय पाठशाला खुल गया केन्द्र नव कर्मक्षेत्र।
कर्मठ हलधर कितने ही थे, बनता था दिन दिन कर्मक्षेत्र।
तूफान उठा था सभी ओर, होता नेताओं का दौरा,
आयेंगे मोतीलाल आज, कल वीर जवाहर का दौरा।
गांधी जी जिस स्टेशन से गुजरे लाखों की भीड़ हुई,
मुहम्मद शौकत जिस ओर गये उस ओर अनोखी भीड़ हुई।
करते थे नेता सिंहनाद हिलता दुश्शासन का आसन,
भारत रण का निश्शस्त्र वीर बैठा था मोहन वीरासन।
केवल कुछ दूर सफलता थी रीडिंग ने भी यह माना था।
नीलाम्बर में सुन्दर वितान राष्ट्रीय जनों ने ताना था।
नभ में निशान लहराता था जन जन के मन लहराते थे,
बरबादी के दिन बीत चुके, आजादी के दिन आते थे।
मदिरा ताड़ी इत्यादि नशे की दूकानें थीं बन्द हुई,
मण्डियां बिदेशी वस्त्रों की शहरों में प्रायः मन्द हुई।
राष्ट्रीय सभा के थे सदस्य भारती वीरवर एक कोटि,
राष्ट्रीय कोष में पहुँचा था धन धीरे धीरे एक कोटि।
होता था देशद्रोही का ऐसा सामाजिक बहिष्कार।
उसको अनुभव होजाता था वह भूमिभार है कुलांगार।
गावों में सारे शहरों में कालेज स्कूलों के लड़के,
घर-घर पर अलख जगाते थे गाते थे राष्ट्रगीत तड़के।
उठ गया देश सब ओर इधर झकझोर तोड़ने का कड़ियां,
उठ पड़ी उधर नौकर शाही, आगयीं दमन वाली घड़ियां।

कारागार

भारतवीरों को जेल खेल वीरों का निर्भय नाद हुआ।
श्रीकृष्ण चन्द्र की जन्मभूमि कारागृह फिर आबाद हुआ।
जा रहे जेल बूढ़े तैयब शंकराचार्य विद्वान-प्रवर,
नूतन आजादी की कुटिया, थी देश भक्त वीरों का घर।
श्री जमनालाल बजाज चले, नरवीर जवाहरलाल चले।
आनन्द भवन के उपभोगी वह देखो मोतीलाल चले।
लालाजी, देशबन्धु, राजा जी सेनगुप्त, सुपटेल चले।
देवी सरोजिनी औ सरला, श्री अजमल, आसफ जेल चले।
पर दुखके दुखिया, ये सुखिया अपने ऊपर दुख झेल चले।
प्रति नगर-नगर प्रति प्रान्त प्रान्त शतशत नरनारी जेल चले।
सब के सब तो अपराधी थे जब देशभक्ति अपराध हुआ।
सुन्दर स्वदेश सरवर उमँगा अब पारावार अगाध हुआ।
कितने ही मोती निकल पड़े, तत्काल जवाहर बड़े बड़े,
जेलों में पानी चढ़ता था, क्या होता तल में पड़े पड़े।
जब गये जवाहर औ मोती जिनमें था पानी ही पानी,
कैसे न चलें पत्थर भारी क्यों चढ़े न वीरों पर पानी।
माता कहती जाओ बेटा आंखों में आंसू भर-भर कर।
मेरे सपूत तुम अमर बनो, प्यारे स्वदेश पर मर मर कर!
मेरी ममता है एक ओर, प्रिय जन्मभूमि दूसरी ओर
जाओ बेटा निर्भय जाओ देखो प्रिय पथ का ओर छोर।
सुकुमार हमारे कठिन बनो, जाओ स्वदेश हित कष्ट सहो,
प्रासादों में रहने वाले, जाओ जेलों में बसे, रहो।
इन बन्धन औ बलिदानों से, इन भीषण कारागारों से,
प्रकटेगी आजादी देवी वीरों के नव उद्‌गारों से।
रमणी देती थीं बिदा साश्रु प्रणयी को गदगद उर भर कर,
सीता सावित्री सी देवी प्रकटी थीं अपनी धरणी पर।
जनता प्रसून बरसाती थी, आरती उतारी जाती थी।
नूतन मन्दिर को वीरों की सानन्द सवारी जाती थी।
सबके तन पुलके जाते थे, सब के मन उमंगे आते थे।
जब आजादी लेने वाले सैनिक जेलों को जाते थे।

बेड़ियां पैर-आभूषण थीं, हथकड़ियाँ कर की भूषण थीं।
बनगई आज सुन्दर भूषण, जो कल तक दारुण-दूषण थीं!
मस्तक पर तिलक सुशोभित था, अभिमान शान वीरोचित था,
जय माला पहने जेल ओर, नव दृश्य-वीर आर्योचित था।
उनके केशरिया बाने थें, मरदाने वे। हठ ठाने थें।
वे गाते जाते गाने थे, माता के कष्ट मिटाने थें।
अपने शिर संकट झेल चले, करते जीवन का खेल चले।
वे तरुण, तपस्वी, अनुरागी, त्यागी, सन्तोषी जेल चले।
दब सके न वे अंकुर अपने, उठ आये ऊपर लहराये।
उनके गौरव का सौरभ है, जो चंचरीक लेकर आये।
मिट सकता जोश जवानों का आजादी के अरमानों का?
लाठी गोली या जेलों से क्या दबता दिल दीवानों का!
खुल गया जेल का भीम-द्वार, गान्धी टोपी वाले आये!
ये सभ्य सुखी, संस्कृत प्राणी देखो जेलों में घुस आये!
परिवर्तन, इतना परिवर्तन सब बन्दी थे आश्चर्य चकित,
वह भीमकाय फाटक अपनी आंखें खोलें था हर्ष भरित,
अड़गड़े खड़े पशु लौह बड़े, नरदेवों का स्वागत करते।
जेलों के डण्डे बड़े बड़े थे। खड़े वीर-स्वागत करते।
लग गये भूमि पर वीरासन, कबरों की भांति कतार बनी,
जिनमें अनन्त कालिक खटमल दीमक मच्छर की पाँति बनी,
कपड़े थे कम्बल औ फट्टा, जांघिया, लंगोटा औ कुरता,
लोहे की एक कटोरी थी, तसले में था पानी रहता।
आधी मिट्टी, आधा गेहूँ औ चना मिली कच्ची रोटी,
व्यञ्जन थे झलरा, चना वहां, थी दाल बहुत पतली होती।
दो वार यही भोजन पाते, हाथों पर रोटी रहती थी।
अलमस्त फकीरों की कटि में बस एक लंगोटी होती थी।
पग में था लौहिक एक कड़ा, हँसली पहिनाई जाती थी।
सुकुमारों से भी तीस सेर चक्की पिसवाई जाती थी।
कूटते कूटते राम बांस तन में छाले पड़ जाते थे।
पिजड़ों के दुखदायी कंटक बैरिक में, गड़गड़ जाते थे।
कोल्हू की कठिन मशक्कत थी, फिर भी वीरों की हिम्मत थी,
कष्टों की कारा थी प्रसिद्ध—मरदानों को वह जन्नत थी।

हंस-हंस कर कष्ट उठाते थे वीरोचित धैर्य दिखाते थे,
ललकारों से, हुंकारों से कारा की भूमि कँपाते थे।
पेशी होती तनहाई, बेड़ी बेंत सजायें पाते थे।
दुश्शासन के शव को कसने को बन्दी बाघ बनाते थे।
सहमा करते जेलर, साहब सुनकर उनकी निर्भय वाणी।
सब समझे थे वे पूजनीय, उनकी मरदानी कुरबानी।
उनके स्वाधीन विचारों को, उनके दैवी उद्गारों को।
कैसे कारा शीतल करती उन ज्वलित ज्वाल अंगारों को,
जेलों में वीर रमाये थे अद्भुत आजादी की धूनी।
आबाद और आजाद कभी होगी उनकी दुनियां सूनी।
यह नयी तपस्या सेवा थी, यह नयी साधना पूजा थी।
लगती प्राणों की बाजी थी, होती प्राणों की पूजा थी।

बेंत

देखो वह त्रिभुजाकार खड़ी, जल्लादी बेतों की टिखटी,
ले आया आहा खींच तन दुश्शासन अपनी कमबख्ती
है वीर कसा जाता उस पर अपराध यही केवल उस पर,
निर्भीक सिंह सा गरजा था 'जय भारत मां' जय गांधी नर।
कस कस कर पकड़े हैं कोड़े, पशु खड़ा दया के घट फोड़े,
ये जेलर, निर्दय जमादार हाकिम अपने पथ के रोड़े।
ये मानवता से मुख मोड़े, निश्चय इनके दिन हैं थोड़े।
मिट जायेंगे, बह जायेंगे, पापी दुश्शासन के फोड़े।
है वीर हकीकत सा हक पर कायम सच्चा मरने वाला।
जीता है, युग युग जीता है मरगय पाप करने वाला।
प्रत्येक बेंत पर कहता था गांधी की जय, माता की जय,
मां की छाती हुलसाती थी, वे अमर पुत्र पूरे निर्भय!

एकता

हिंदू मुसलिम एकता दृश्य, दोनों का पाणिग्रहण आज,
ये प्रेमी सेवा के नेमी ले ही लेंगे सच्चा स्वराज।
कंकण भूषण हथकड़ी बनी, श्री पीर मियां का एक हाथ,
बंगाल धन्य, एकता धन्य, श्रीयुत सुरेश का एक हाथ।

ऐसे मिलते हैं देश वीर, हैं सदा एक कौमी शहीद।
टूटेगी मौन पुकारों से क्या नहीं देश की घोर नींद ?
अति सभ्य सौम्य प्रेमी सेवक जेलों में गाली खाते थे,
तन के तितिक्षु, मन के मुमुक्षु, सब संकट सहते जाते थे।

स्वर्णिम

कन्नौज नगर में धूम धाम देते थे हम शत शत धरना,
स्वर्णांकों में हैं अंकनीय वीरता अहिंसा की घटना।
सब अस्त्र शस्त्र से सजे हुए फाटक पर खड़े सिपाही थे,
लाठी, गोली है हट जाओ देते सब को आगाही थे।
स्कूल और उसके कमरे खाली थे छात्र न जाते थे।
गानों पर अपने बानों पर आनों पर अड़ते जाते थें।
अति उच्च गगन भेदी रव था आओ स्वतन्त्रता के कुमार,
रख लो माता की दूध लाज जननी कहती तुमसे पुकार।
बीता अवसर क्या आयेगा, कायर कुपूत कहलायेगा,
ओ सुमन लाल तू चिरजीवी यदि वेदी पर चढ़ जायेगा।
उत्साह सिन्धु उमड़ा विशाल, घुमड़ा जनरव कलरव विशाल,
रणवीर अहिंसक वीर लाल आनन्दित करते थे कमाल।
हट जाओ कह कर बरसायी लाठी जनता दृढ़तारत थी,
यह भीषण अग्नि-परीक्षा थी अब किसमें कितनी हिम्मत थी।
'अल्ला अकबर' आकाश हिला, वे मुसलिम वीर बढ़े आगे,
जय जय भारत माता स्वतन्त्र, वे हिन्दू वीर कढ़े आगे।
हिल गये मानवी मन उनके हो गये शस्त्र कुंठित सारे,
हिंसा पशुता के अग्रदूत थें प्रेम अहिंसा से हारे।
हारे सारे छल बल पशुबल, हम सब भी हारे, मन मारे,
धरना देना बस बन्द करो, गान्धी की आज्ञा से हारे।
चल दिये जेल अपने नेता, हमको उनका आदेश मिला,
जाओ गान्धी जी से लाओ, उनका विशेष सन्देश भला।

विद्युत-गृह

मेरे मनकी सुन्दर उमंग चढ़ दौड़ी भावों के तुरङ्ग।
बापू की मिलन-कल्पना से पुलकित था मेरा अंग-अंग।

उत्तर जो था केवल निषेध, हाँ मैं ऐसा कुछ लै आया,
जो जीवन धन, प्यारी निधि है मन-कलश पूर्णतः भर लाया।
जीवन की उज्ज्वल गंगा में वह चारु चन्द्र सा मुसकाया।
मलयज समीर को पाटलि के सौरभ पराग ने महकाया।
निर्मल मन मानसरोवर में भावों का पंकज विकसाया,
क्या खोया यह तो भूल गया, है याद यही सब कुछ पाया।
शिव, शान्ति शक्ति का विद्युत गृह, स्तंभ प्रेम करुणा महान,
अपने श्वासों के तारों से वितरित करता था शुद्ध ज्ञान।
हिंसा के भीषण जन वन में, पुस्तिका अहिंसा की खोले,
अपनी उस सत्य तराजू पर राष्ट्रीय रत्न रख कर तौले।
राष्ट्रीय यज्ञ में बापू के हिंसा अक्षम्य औ असहनीय।
मानव की दानवता जघन्य, मानवता सन्तत वन्दनीय।

हिमालय-गुरुता

वह रही हिमालय की गुरुता या एक हिमालय भूल अहो,
बढ़ती सेना से सेनानी बापू बोले बस रुके रहो।
भारत की नव थरमा पोली, बरडोली थी। तैयार हुई,
कर बन्दी आन्दोलन होगा, गान्धी की थी ललकार हुई।
चौरी चौरा का दुखद काण्ड मन के मन में अरमान रहे,
है अभी अहिंसा पूर्ण नहीं, बापू के ये फरमान रहे।
नव सेना सैनिक सावधान, ओ प्रेम पुजारी सावधान!
जागरण ज्योति के तुम रक्षक ओ व्रती अहिंसक सावधान!
तुम प्रथम देश के होता हो, है यज्ञ अहिंसा की पूरी।
जब तक हिंसा का लेश शेष, कैसे हो सकती है पूरी।
मन के मन में अरमान रहे, सेना के रुके जवान रहे।
कण्ठों में केवल गान रहे, कुछ रुके खिंचे से बान रहे,

नवईसा

गान्धी को जेल भेजने का अब तक साहस था नहीं हुआ,
जागृत जनता क्या कर बैठे, शासक को भय उत्पन्न हुआ।
प्रेमायुध धारी ने अपने धर दिये आज जब अस्त्र शस्त्र।
तब उससे लड़ने आये थे पशु बल के अभिमानी सशस्त्र।

ईसा के अद्भुत अनुयायी, नवयुग के ईसा पर टूटे।
या चले गाड़ने दुश्शासन के कठिन करारों पर खूंटे।
युग की यह पावन नव विभूति, संस्मृति अतीत अवतारों की,
पीड़ित हो! दानवता की अति, शासन के अत्याचारों की।
स्वार्थी लोभी के जगत! सदा इतिहास रहा तेरा जघन्य,
तव बुद्धि पीन, तू हृदय हीन, अविवेकी तुझसा कौन अन्य।
सर्वदा सत्य आराधक को भय त्रास कष्ट संकट महान,
फांसी, सूली, ए ार, कारा औ त्रास यही सम्मान दान!
गान्धी को पाकर धन्य हुई वह वन्य तुम्हारी कारा भी,
ओ क्षणिक जयी! तू क्या जाने युग युग में पशु बल हारा ही।
भौतिक जड़ता की चरम कोटि, दानवी सभ्यता का प्रमाण,
कारागृह में आश्रय पाते गान्धी के व्याकुल विकल प्राण।
है यही तुम्हारी संस्कृति भी, है यही सभ्यता सम्मति भी,
दानवता की होती अति ही, मानवता की होतीं इति भी।
पूजो पूजो उन पत्नों को पूजो प्रख्यात प्रस्तरों को,
उनके रचने वालों से शोभित कर लो कारागारों को।
तेरे विकास में जगत ह्रास, जग सर्वनाश तेरा विलास,
जग में उत्पीड़न अन्धकार, फैलाता है तेरा प्रकाश।
आजादी की हसरत वाले, वे स्वाभिमान हिम्मत वाले,
मन के उज्ज्वल तन के काले, जाते हैं कारा में डाले।
ये अत्याचार तुम्हारे हैं, खूनी उद्‌गार हमारे हैं,
रे मासूमों से सावधान, उनके आंसू अंगारे हैं।
तेरे कर तो थक जायेंगे वे अथक कष्ट सह जायेंगे,
वे मतवाले कारागृह में मस्ती का मधु पी जायेंगे।
आजादी होगी आजादी हुंकारों से ललकारों से,
इन बन्धन औ बलिदानों से इन कालों की फुफकारों से।

बन्दी

अपराध भूमि पर लिखी गयीं कितनी विशुद्धतम गाथायें,
जीवन के शुभ्र चरित्रों से चित्रित गीता की टीकायें।
भारती समस्याओं के हल कारा में खोजे जाते थे।
सम्मुख थे विशद पदार्थ पाठ, वन्दी जो पीसे जाते थे।

केवल मानव के रूप मात्र, वे मनुष्यत्व से हीन गात्र।
वे नहीं दण्ड के पात्र अरे वे तो समाज के दया पात्र।

कैसा समाज जिसने इनको मानवता से परि हीन किया ?
कैसा समाज जिसने इनको मानव विवेक से हीन किया ?
कैसा समाज जिसने इनको भूखों मारा औ दीन किया।
कैसा समाज जिसने इनको अवसर मानवता का न दिया।

चोरी, डाका, या अग्नि काण्ड, नर हत्या ये अपराध सभी।
दूषित समाज के नित्य दोष, उन्नत समाज में कभी कभी।

पशु भी क्या इतना दीन हीन, मृत-प्राय, विमर्दित मानवता।
ऐसी विपन्नता! यह सत्ता! खुलकर खेली है दानवता।

बन्दी कष्टों से पूर्ण चूर्ण इसमें कैसा आश्चर्य कहो।
बन्दीगृह सारा देश आज आहों की एक समाधि अहो।

होगा स्वतन्त्र प्यारा स्वदेश सम्पन्न और धन धान्य पूर्ण,
होगी दारिद्रता, विपन्नता, दासता, मलिनता चूर्ण चूर्ण।

सोने चांदी के टुकड़ों से आंका न राष्ट्र का धन जाता,
तपसी हैं लाल जवाहर से जिसके वह है धनदा माता।

ये त्याग मूर्ति अपने धन हैं इन पर न्यौछावर सब धन हैं,
ये उज्ज्वल रत्न जवाहर से अपने धन हैं, अपने धन हैं।

जिनमें तप त्याग तपस्या है उनकी तो सरल समस्या है,
तपसे जो प्राप्त नहीं होती वह वस्तु कहे कोई क्या है।

अपना धन, वैभव त्याग किये कर्मठ ये कारावासी हैं,
इनके चरणों की धूलि धवल लालायित मथुरा काशी हैं।

पार्थिव दर्शी ने समझ लिया कारा की लौह शृंखलायें,
बांधेंगी नरशार्दूलों के जीवन उमंग की सरितायें।
वह क्या समझे, तन पर चाहे झंझट आये, संकट आयें,
श्रीमान मनस्वी वीरों को बनतीं बाधायें सुविधायें।
प्रलयंकर से वे अभय अजय तन पर भुजंग भी लपटायें,
शंकर हैं, सिर से निकलेंगी गंगा की शीतल धारायें।
जगती के दुख वैषम्य विषम वे तरल गरल पी जायेंगे।
शिव मंगल कारी आशुतोष शुभ नील कंठ जी जायेंगे।

जलियां वाला

जलियाँ वाला था पूज्य बाग भारती शहीदों के चिराग,
प्रज्वलित वहीं से प्रकटी थी स्वातंत्र्य समर की प्रथम आग।
जिसकी ईंटों पर लगी हुई वीरों की रक्तिम माप छाप,
जिसका कण कण तृण तृण कहता है दुश्शासन का दमन पाप।
रावण के घट से भी बढ़कर, जिसका भारी बलिदान कूप।
जीते मरते भरते थे हा, जिसको पीड़ित प्राणी अनूप।
उसकी स्मृति एप्रिल पुण्य मास आंसुओं भरा राष्ट्रीय पर्व।
श्रद्धाञ्जलि अमर शहीदों को देते हैं सादर वीर सर्व।
दामन से खूनी धब्बों को धोने का सब करते निश्चय।
आजादी लतिका बलिदानों से सिंचन का करते निश्चय।

सप्ताह

घूमे हम पागल से बन बन, सन्देश लिये नव ग्राम ग्राम,
सप्ताह एक में धूम मची दिन रात हमारा एक काम।
बीहड़ बनमें, अज्ञात दिशा, कांटों के पुञ्ज, चली आँधी।
भीषण संकट सम्मुख आया हम बोले जय जय जय गांधी।
आये देहाती लट्ठ लिये वह था प्रचार या चमत्कार।
हम गाना गाते जाते थे निर्भीक निरापद निर्विकार।
भीगी विभावरी संध्या हो अथवा निशीथिनी, उषाकाल।
जन जन को दें जागरण मंत्र, हम थे आवाहक क्रांति काल।
उत्कंठित उत्साहित महान, मेरे थे व्याकुल व्यथित प्राण,
आशान्वित थे लालायित थे, कब होगा कारा को प्रयाण।
जिस ओर हमारे पूज्य गये, हैं जहाँ जवाहर औ मोती,
कब तक मैं उससे दूर रहूँ, क्यों नहीं गिरफ्तारी होती।
थक गये काम करते करते छक जाना ही अब बाकी है,
भरदे मेरा जीवन प्याला, क्यों देर लगाता साकी है।

प्रयाण

मां के दर्शन कर आया था, हाँ, विदा मांगता मैं कैसे,
इतना कह आया था माता! दुख सहो सहे अब तक जैसे,

भूखों मरना तो निश्चय था, टूटा घर था फूटा घर था,
छोटा भाई रक्षक केवल सब का अब तो जम रक्षक था।
पग रुकते आह विलग होते, मां करुणा की साक्षात मूर्ति,
जीवन मन्दिर में शोभनीय वेदना दुःख की विशद मूर्ति।
कैथा के वृक्ष रुका कुछ क्षण, देहली से मां मुझको लखतीं,
अब भी स्तम्भित थीं जननी, केवल आंसू मोचन करतीं।
पत्थर सा दिल पर रख सोचा मां क्षमा तुम्हारी आदि अन्त,
तुमने ही तो जागरित किया स्तन्यदान दे बालसन्त।
चक्की पर गिरिधर नागर के गुण तुम विभावरी में गातीं,
मां, मीरा मुझे आंसुओं से अपने भावों से नहलातीं।
सींची थी बोई प्रेम वेलि आँसू के जल से तो तुमने,
तुमने ही बेलि बढ़ायी है, मेरी जननी तुमने तुमने।
प्रेमी उपासकों का माता बलिवेदी पर आह्वान हुआ,
जाता है तेरा पुत्र आज माँ धन्य तुम्हारा दूध हुआ।
माँ, कितनी नग्ना मातायें, उनकी गोदी में नग्न बाल,
कंगाल आज, खुशहाल देश, परतन्त्र आह भारत विशाल,
इस युग का भूषण धर्मराज, राजा रंकों का महाराज!
भर दो शासन के कारागृह, कहता है गांधी टेर आज।
नंगे दुखिया नर नारायण, भूखे दरिद्र नर नारायण,
जीवन पुस्तिका खुली आओ, कर जाओ गीता पारायण।
कारा का पावन मुक्तिद्वार, अभिसार करो प्रेमी उदार।
जीवन असत्य, जीवन असार बलिदान प्रेम है सत्यसार।
उत्साह तथा जीवन उमंग से भरा हुआ था सभा भवन।
जनता को उद्बोधित करते 'कैलाश प्रेम' से प्रेमीजन।
मेरे थे हृदयोद्‌गार 'विमल मेरा भी उस दिन भाषण था,
मेरे ऐसे भी योद्धा थे गांधी का वह ऐसा रण था।
हां, सुना अभी होने वाली है आज गिरफ्तारी मेरी,
आकुलता पूर्ण प्रतीक्षा से आयी आयी बारी मेरी।
जुट आये शत शत बन्धुवीर कन्नौज दे रहा आज विदा,
गद गद उर वहाँ एक माँ ने रोचना तिलक दे किया बिदा
खुल गया हमारा भाग्य और कारागृह का खुल गया द्वार।
रम गयी हमारी भी धूनी, मेरा मन था हर्षित अपार।

ममता करुणा की सजल मूर्ति मेरे मामा श्री क्षमीलाल,
आये भर लाये सरल नेत्र देखा था बन्दी वीर-बाल।
'मामा मामा आँसू कैसे, तुमने मुझको स्नेह दिया,
तुमने ही पिता तुल्य मुझको सद्भाव दिये सद्धर्म दिया।
उस पथ का ही मैं पथिक एक मामा क्यों तजते हो विवेक
वह राज पन्थ, मैं एक नहीं उससे गुजरे अब तक अनेक।
आशीष अभय वरदान मिले. यह ममता मार्ग न रोक सके,
मैं निर्भय प्रिय पथ पर जाऊँ बाधा पथ मुझे न रोक सके।

दंड

परिपूर्ण हुआ कुछ क्षण में ही वह न्याय नीति का नाटक था,
हो रहा प्रतीक्षक मेरा तो विकराल जेल का फाटक था।
अपराध स्वयंसेवक बनना करना स्वदेश हित का प्रचार,
दो वर्ष कठिन कारागृह था शासन का ऐसा अनाचार।
हंसकर कारा का दण्ड सुना न्यायाधिप से कुछ कहा सुना,
किस जन्म भूमि के लाल अरे तुम भूले हो उसको अधुना।
भगवान तुम्हें भी वह बल दें तुम भी स्वदेश के वीर बनो,
परदेशी शासन के गुलाम क्यों ऐसे विद्या-वीर बनो।
दुनियां, दुनियां के काम धाम को दूर दूर से राम राम,
कारागृह वासी होता है बालक स्वदेश प्रेमी ललाम।
आनन्द अश्रु निकले मेरे सम्मुख थे मेरे पूज्य पाद,
तन मन के सुन्दर शुक्ल वीर, मन की पूरी हो गयी साध।
शिर पर था उनका वरदहस्त 'तुम मेरे शिष्य सखा सच्चे
कच्चे थे कारा में पक्के, हां जाओगे मेरे बच्चे।
कुछ देर बाद ही विलग हुआ लड़का-चक्कर में बन्द हुआ,
रम रहा अठारह मास वहीं, अध्ययन हुआ आनन्द हुआ।
दो सौ के लगभग बच्चे थे जो कहलाते थे अपराधी,
उनमें ही एक हुआ मैं भी दोषी, शासन का अपराधी।
गर्रा का काम मिला मुझको, श्रम किया देर तक शिथिल हुआ,
ओ जमादार ! मुझसे खाली होने से रहा गभीर कुंआ !
मारो जो चाहो करो शक्ति मेरे तन में अब शेष नहीं,
मन में तेरे इस भीषणतम कारा का भय लवलेश नहीं।

वह जमादार कुछ मानव था, मानवता पूरी मरी नहीं,
मेरा श्रम मेरा वयस देख, गद्गद् हो रोने लगा वहीं।
हम भी मनुष्य हैं हम में भी है ज्ञान रुधिर बलवानों का।
है हृदय हमारे भी परन्तु है एक प्रश्न कुछ दानों का।
बापू का अस्त्र अहिंसा का ऐसा अमोघ ऐसा अचूक,
प्रतिपक्षी के उर में निश्चय उठती रहती है मूक हूक।
मैं गर्रा खींचा करता था, श्रमके प्रमाण कर के ठेकार,
पग पग पर रोंका करते थे वे प्रेम विवस बन्दी उदार।
आते थे साहब मजिस्ट्रेट पूछा करते कैसे तुम हो,
'पढ़ना छोड़ा क्यों कठिन जेल के संकट अब सहते तुम हो।
माफ़ी लेकर इन कष्टों से तत्काल मुक्ति पा सकते हो
'तुमको इतना भी ज्ञान नहीं तुम किससे यह सब कहते हो,
माफी मांगे सरकार कठिन कारा में जिसने डाला है,
जिसके कामों से युग युग को मानवता का मुख काला है।
कारा के कितने कष्ट भला सह जायेंगे हँसते हँसते,
फांसी के तख्ते पर गाते भारती वीर मरते मरते।
वे मुंह कीं खाकर जाते थे हम सूखी रोटी खाते थे,
हँस हँसकर दिवस बिताते थे भारत मां की जय गाते थे।

बैरक

लड़का बैरक में पिंजड़े थे उनमे ही बन्द किया जाता,
जिसमें आंधी आने पर भी झोंका न एक आता जाता।
बस एक हाथ की दूरी पर पाखाने का गमला रहता,
कुछ ऊपर कम्मल फट्टे का अपना सुन्दर बिस्तर रहता।
बैठे ही रात बिताते थे, कुछ हंसते थे; कुछ गाते थे,
अपने कष्टों का ध्यान कहां माता के कष्ट रुलाते थे।
गरमी की भीषणता जलते लौहिक पिंजड़े के तार तार,
चलतें थे दीमक खटमल गण चलती थी तन से स्वेद धार।
रह रह कर पहरेदार किया करते अपनी भारी भीषण पुकार,
हम भेड़ों की होती रहती थी यों ही कारा में शुमार।
कानों में निशिदिन भली भांति भरता था भैरव भीम राग,
तुम बन्दी हो तुम पराधीन! तोड़ो कड़ियां, लो सिंह भाग।

खल

पहले पैरों पर आ गिरता फिर खाता जालिम पृष्ठ मांस,
करता अपना प्रिय मधुर शब्द वह चाटुकार निज कर्ण पास।
लखते ही कोई एक छिद्र घुस आता था निर्भय भीतर,
यों खल चरित्र करता रहता कारा में हत्यारा मच्छर।

मुक्त विचार

उठते थे मन में शत विचार संकल्प विकल्प हुआ करते,
कल्पना विहङ्गम सदा मुक्त कारा में केवल तन रहते।
सुनते थे सहबन्दी कहते अपनी अपनी अपराध कथा,
सब की थी केवल एक कथा, सब की थी केवल एक व्यथा।
ये भी मानव थे, ये भी तो मानव बन कर रह सकते थे।
ये क्या कर सकते नहीं जो कि ये सभ्य सुखी कर सकते थे।
मानव को पशु करके ही तो यह पराधीनता पनप सकी,
मरते हैं अथवा जीते हैं परवाह विदेशी को किसकी?
पशु से ये डोल रहे इतने पीड़ित बन्दी दुख झेल रहे।
इनके जीवन-आनन्द सुप्त, ये कर प्राणों का खेल रहे।

बन्दी जीवन

बज रहा पचासा घन घन घन निकले बन्दी बैरिक बाहर,
भेड़ों से गिने जा रहे हैं प्रख्यात सूरमा नर नाहर।
पाखाने में जोड़े जोड़े, मुख धोते हैं जोड़े जोड़े,
चलते जाते खाते जाते नाश्ता चना जोड़े जोड़े।
चक्की, गर्रा औ रामबांस कर रहे काम जोड़े जोड़े,
कोल्हू में चून, चक्की में ये बैल सदृश जोड़े जोड़े,
मध्यान्ह, काम से छुट्टी पा खाने बैठे जोड़े जोड़े।
वह दाल कींच सी काली है दाने मिलते थोड़े थोड़े,
झलरा, रोटी से पेट भरा फिर किया काम सन्ध्या आई,
वह देखो मार गिराया है लेटे बन्दी जोड़े जोड़े।

उठ रहे पद्म, पड़ते डंडे यमदूत तुल्य वह जमादार,
अपराध यही कम काम किया, क्या कैदी रो सकता पुकार ?
चुपचाप उठा बैरिक आया फिर गिना गया जोड़े जोड़े,
लेटे, अब सोये या रोये, है रात उसे केवल छोड़े।
दिन होते ही हैं कष्ट नये, पीड़ा के आविष्कार नये,
निष्ठुरता के व्यापार नये, निर्दयता के व्यवहार नये।
जाड़े में ठंढे पानी में बंदी को अधम डुबाते थे,
गरमी में घंटों कड़ी धूप में उनको खड़ा कराते थे।
भीगी बिल्ली थे बने हुए दुनिया के वीर सिंह बांके,
तड़ तड़ पड़ते उन पर डंडे ऊपर को आँख उठा ताके,
कितनों के कान फटे देखे कितनों के अंग कटे देखे,
सहते सहते दुख भार कष्ट वे अर्द्ध मृतक बन्दी देखे।
कष्टों की पराकाष्ठा से विद्रोही जब एकाध हुआ।
कम्बल परेड शत, लात घात, मर्दित बन्दी निर्बाध हुआ,

शूर

जिनका साहस था पूजनीय, वीरता शूरता अकथनीय,
जिनको पशुता थी असहनीय, उनमें थे मंगल मालवीय।
साहब ने सबको बुलवाया, जिनकी मूंछे थी बड़ी बड़ी,
जो मरदाने थे बांके थे, छाती चौड़ी थी भुजा बड़ी।
लो कैंची मूंछो को छांटो, यह शान तुम्हारी, कैदी हो !
मुझसे छोटी मूंछें रक्खो, मैं साहब हूँ तुम कैदी हो।
सबने अपनी मूंछें काटीं सब नतमस्तक निस्तेज हुए,
कर में कैंची लेते ही श्री मङ्गल मालवी सतेज हुए।
तड़पा झपटा नर शार्दूल साहब की ही मूंछें काटीं,
अपने साहस से उस नर ने पापी तरु की डालें छांटीं।

कारा-चिन्ता

इस नारकीय कुपरिस्थिति में कटतीं स्वर्णिम जीवन घड़ियाँ
प्रतिदिन मिट्टी में मिलती थीं कितनी ही नव मानव मणियाँ,

व्याकुल विपन्न आकुल विषण्ण, संसारी बालक नरनारी,
मानवता से ही हीन दीन बन्दी ये कारागृह चारी।
यह है अपना पददलित देश, भगवान कभी होगा स्वतन्त्र,
जन जन में ज्योति जगेगी जब जागरित रहेगा प्रजातन्त्र,
पुस्तक के पन्नों में न लिखीं, भारती समस्यायें सम्मुख,
ये लक्ष लक्ष बन्दी इनको हैं कोटि कोटि कारा के दुख,
स्वाधीन देश होगा अवश्य, ये भी नव अवसर पायेंगे।
होंगे सुसभ्य नागरिक नेक, ये भी मानव कहलायेंगे,
स्कूल छोड़ आया, नेशनल कालेज तो अपनी कारा थी
अपना जीवन आनन्द पूर्ण यह महा मुक्ति की कारा थी,
पढ़ते हम श्री अरविन्द घोष के शुभ सात्विकतात्विक विचार,
दीवालें रोक न पाती थीं आती थी गंगा दिव्यधार।
श्री रामकृष्ण का चरितामृत सानन्द पान करते प्रति दिन,
यह शीतल शीतल गंगा जल निर्माल्य लिया करते प्रतिदिन
जाग्रत होता, उद्यत होता, निरलस मंगल पावन विवेक,
कविवर रवीन्द्र श्री रामतीर्थ सुन्दर उपदेष्टा थे अनेक।
उनके जीवन की गाथायें गंगा की शीतल धारायें।
तन-मन को उज्ज्वल करती थीं, ऋषियों की धवल चन्द्रिकायें,
ईसा प्रभु का बलिदान और बाइबिल में वर्णित दिव्य ज्ञान,
पढ़ता था, सोचा करता था, ये ईसाई किसके समान ?
मां के सपूत वे राजपूत यश-वर्णन से था 'टाड' मुग्ध,
रिपु को मन भर पीने देते अपनी असिका वे तरल दुग्ध,
अपना गुरु अन्तरयामी था, था पिता हमारा जगत पिता,
किरणें विकीर्ण उर में करते प्रज्ञान प्रखर कविता-सविता।
प्रति दिन कुछ लिखता रहता था वह क्या थी कविता या कपिता
विकसित होती थी कारा में मुकुलित थी अपनी भावुकता।
वे पन्ने तो हो गये नष्ट, वे भाव प्रवर वे भाव अमर,
उनसे ही जीवन जीवन है, उनसे ही हृदय गया है भर।
पल पल चंचल मन वायु-पुत्र वानर, घेरे थे कोटि काम,
श्री रामचरण रत महावीर होता था कारा में 'ललाम',

कृष्ण-मन्दिर

कारा की वह अपराध-भूमि या शान्ति साधना धन्य धाम,
चिर अन्धकार श्यामल पग धर आते थे मेरे राम श्माम।
धीरे धीरे सहलाते थे उर को अपने कोमल पग धर,
वे दर्शन-व्याकुल करते थे वेदना भावना जाग्रत कर।
पंछी सोये, बन्दी सोये कुछ रह रह कर उठते पुकार,
अथवा दीवालों के भीतर पीड़ा करती थी चीत्कार।
नीरवता के घन पटल पड़े निद्रित सोये मानव-कुमार,
जिनके भविष्य का अन्धकार है, वर्तमान गत-अंधकार,
मन में उठते शत शत विचार है, कोई अपना कर्णधार,
उसकी करुणा पर नाव चली, छूटा टूटा पतवार-भार,
बोझिल करले हलकी करले वह जाने जिसकी नौका है,
उसकी इच्छा हो पार लगे या डूबे जीवन मध्य धार।'
उसकी यह जीवन वीणा है वह वाद्यकार वह कलाकार,
उसके स्वर उसके कर से ही झंकृत होना है तार तार।
मेरा तो इतना सरल काम मीलित स्वर भर देना ललाम,
गायन, वादन, आनन्द प्लवन, वह पूर्ण करेगा पूर्ण काम,
उसकी यह विश्व-वाटिका है, मैं विकसित सुन्दर एक फूल,
सिंचित है प्रेम-अश्रुओं से इसका पवित्र प्राचीन मूल।
इस चिर दुःखिनी मेंदिनी में क्या मैं भी कुछ कर पाऊँगा?
क्या व्यथित प्राणियों की पीड़ा थोड़ी भी कम कर पाऊँगा?
क्यों दुख ही दुख हैं एक ओर, क्यों सुख ही सुख दूसरी ओर!
समदर्शी के न्यायालय में है कहीं कष्ट का ओर छोर।
मरते हैं दाने दाने को, भर पेट कहां है खाने को,
जीते हैं ये जीते मुरदे यों ही घुल घुल मर जाने को।
वे मोटे खाकर मरते हैं दिन रात चिकित्सा करते हैं।
उनके कारण सब मरते हैं, वे जीते हैं या मरते हैं।
ये शैतानों के जाल पड़े, फंसते श्रमजीवी दीन बड़े,
कूटा करते असहाय भाल, लूटा करते वे खड़े खड़े।
यह लूट दानवों की लीला निस्सार भाग्य का है हीला,

श्रमिकों के त्वरित जागरण से होगा शोषक पंजा ढीला,
सब में वह दैवी शक्ति ज्ञान, सन्तान एक के सब समान।
सब की धरणी, सब का समुद्र, सब का है प्यारा आसमान।
मानव पर मानव का शासन ? यह ईश्वरता का निष्कासन,
शासन तो यों ही हेय त्याज्य, उस पर परदेशी दुश्शासन !
स्वाधीन सभी हैं अमर पुत्र, श्रमशाली वैभव शाली हो,
क्यों एक मनुज भी मानवता या ईश्वरता से खाली हो।
जिसका श्रम हो उसका फल हो जग उपवन का मीठा फल हो,
स्वार्थी का छल बल निष्फल हो, संघटित श्रमिक दल का बल हो
वैषम्य दुर्ग हो छिन्न भिन्न, हो साम्य राज्य जग में अभिन्न,
है एक तन्त्र है एक मन्त्र, मानव से मानव नहीं भिन्न।
विज्ञान, धर्म रे पोप पन्थ मिथ्या हैं सारे धर्म ग्रन्थ,
जब फटे पड़े पन्ने पन्ने ये ईश्वर निर्मित मनुज ग्रन्थ।
धार्मिक विवाद मत का प्रसार ईश्वरता का कोरा प्रचार,
मिथ्या है केवल निराधार जब तक है ऐसा दुराचार।
केवल शब्दों में धर्म नहीं, केवल ग्रन्थों में धर्म नहीं,
आडम्बर, सारा आडम्बर, यदि दया, दया के कर्म नहीं।
भगवान डोलते हैं भूखे रे भक्त निकल झोली भर दे,
पूजा उपासना प्रतिमा की ओ भोले, तनिक बन्द कर दे।
फिर करना योगाभ्यास ध्यान, स्वर्गीय सुखों का नव विधान,
पहले इस पृथ्वी पर आकर मानव को तू मानव करले।
कारा के दुख दारुण अनेक, ये हृदय-विदारक एक एक,
बनतीं थीं कठिन शलाकायें, पशुता प्रचंड में सेंक सेंक,

फांसी

फांसी, बलि-पशु सा जाता है वह हाड़ मांस वाला मानव,
कर देंगे इसको वे निर्दय कुछ क्षण में मिट्टी मिट्टी, शव।
फाटक के बाहर बना हुआ हत्या-घर अथवा फांसी घर,
'फांसी पाने वाले से पहले देने वाला जाता मर,
जीवित अपराधी ने देखी थी पेड़ तले टिखटी, शव-पट,
जिसमें जायेगा वह शरीर जलने कसकर, बंधकर, मरकर।

संगीनें हैं, बन्दूकें हैं, घेरे हैं हाकिम हवलदार,
वे जालिम टुकड़ों के गुलाम वाले हो जाओ खबरदार।
तख्ते पर उसके पैर पड़े शिर पर पहिनाया गया टोप,
अब धर्म, ज्ञान सिखलाने को आया है धर्माचार्य पोप।
जल्लाद लगाता है फंदा, संकेत हुआ, हिलती रस्सी!
वह मानव नीचे चला गया, केवल रस्सी, हिलती रस्सी।
ये जीवन ले तो सकते हैं, क्या फिर जीवन दे सकते हैं,
ये न्याय नीति के भ्रष्टदूत, क्यों दिन दिन हत्या करते हैं,
जिनके संकेतों से मचते घनघोर युद्ध उत्पात नित्य
जो कुटिल-शास्त्रों को रचते, जिनकी क्रीड़ा है युद्ध नित्य,
उत्पीड़न, शोषण, अनाचार, व्यभिचार दोष-उत्तरदायी,
त्रासक-शासक ऊधम करते अगणित निर्द्वन्द्व आततायी।
वे अपराधी, वे रक्त पात, मानव-निपात के हैं दोषी,
इनके कितने अपराध अरे, ये निरपराध ये निर्दोषी।
सामाजिक विषम परिस्थिति में मन के विकार से काम क्रोध,
हत्या, डाका या लूट पाट, चोरी, वैयक्तिक वैर-शोध।
मिट सकते हैं, हट सकते हैं, यदि मानवता का हो विकास,
पर पीड़न में पर दोहन में मानवी शक्ति का हो न ह्रास।
कर्कशता के कोलाहल में, हिंसा के चषक हलाहल में,
उठते मिटते थे प्रबल भाव, कारा जीवन में पल पल में।

पीड़ा

बन्दी की पीड़ा व्यथा देख मेरा कोमल मन रोता था,
आँसू की उज्वल गंगा थी, स्नान निरन्तर होता था।
निरुपाय! हमारे सम्मुख ही पशु से मानव पीटे जाते,
निर्दयता के वे नग्न चित्र मेरे सम्मुख खींचे जाते।
आतंक त्रास से भरा हुआ बन्दी का जीवन निरानन्द,
मरने पर ही कट सकते थे उनके कष्टों के दुखद फन्द।
अपनी विनीत भाषा में मैं साहब से नित्य कहा करता,
परवश बन्दी भी मानव हैं, इन पर क्यों जुल्म हुआ करता।
उसकी सज्जनता मानवता जग जाती यों ही कभी कभी,

मरुथल में भी घनश्याम पटल बरसाते थे जल कभी कभी।
उनके कष्टों का मिटना तो यदि नहीं असम्भव, दुष्कर है,
स्वाधीन देश में सतत कार्य से कटता कारा का मल है।
हां कष्टों में न्यूनता हुई, अन्धेर मार कुछ बन्द हुई,
विनयी की आंशिक विजय हुई, सहबन्दी को सान्त्वना हुई।
अनुमति मिल गयी पढ़ाने की, साक्षरता का सुन्दर प्रचार,
बन्दी जन लिखते पढ़ते थे, कम हुआ अविद्या अंधकार।
कुछ को रामायण मंगवा दी, कुछ को धार्मिक पुस्तक कुरान,
पाते थे इनमें चित्त शान्ति, बन्दी के व्याकुल दुखित प्राण,
भाजन में अब मिट्टी कम थी, रोटी कम कच्ची आती थी,
इतना सुधार कहते कहते मेहनत निश्चित ली जाती थी,
अंकुर से प्रस्तर भार हटा, कुछ उन्नत मनुज ललाट हुए,
पहुँची प्रकाश की प्रथम किरण, उन्मुक्त विचार-कपाट हुए।
सहृदयता, सेवा के वश में सहबन्दी के हो गये हृदय,
अपनी कहता, उनकी सुनता, चाहिए उन्हें था एक हृदय,
यह हृदय हृदय की बात रही, वे मुझे महात्मा कहते थे।
हम उन्हें क्षमा की मूर्ति और पीड़ित की आत्मा कहते थे।
कैसे कब वे मानव होंगे सोचें सामाजिक-शास्त्र-विज्ञ,
मैं कहता हूँ वे मानव थे, दानव थे, त्रासक अपटु अज्ञ।
अनुकूल परिस्थिति, स्थान आदि जीवन-आवश्यक सुविधायें,
पाकर कैसे न पल्लवित हों, लहरायें मानव लतिकायें।
बीते बसन्त, उत्सव, उमंग, बीती दीवाली, ईद गई,
वह जेल पुरानी थी हरदम, दुनियां थी दिन दिन नई नई,
क्या सान्ध्य-गगन की शोभा है, कैसी अरुणागम पूर्ण प्रभा,
कैसे विभावरी में लगती नक्षत्रों की स्वर्गीय सभा।
अज्ञात, अबान्धव से हम थे यों सत्रह मास व्यतीत हुए,
मां की ममता, बान्धव सनेह, मेरे अतीत के गीत हुए।
सूचना मिली थी पुलिस-वीर जुरमाना घर से ले आये,
क्या जाने कितने घोर कष्ट मेरी माता को दे आये।
भूखों मरती बुढ़िया दुखिया, स्वर्गीय पिता की स्मृति स्वरूप,
कुछ आभूषण थे उन्हें बेच जीवन-यापन करती अनूप।

सहृदय बांधव थे सबने मिल दे दिये शीघ्र रुपये पचास,
भरता था ऐसे पापी घट रावण का, निश्चित सर्वनाश।
यह कठिन कष्ट की कारा थी, थी मुलाकात पत्रादिबन्द,
दीवालों में दुनियां सीमित रम रहा निरा अलमस्त रिन्द।
दिन तीस और हैं कारा के वह भी दिन आने वाला है,
जब बन्दी होकर मुक्त जीव अपने घर जाने वाला है।
आशायें नवल कोकिलायें थी कुंजन मन वनमें करतीं,
जिनमें नव वल्लरियां, कलियां, भावनामयी सुरभित रहतीं,

क्रूरता

अन्तिम क्रूरता-प्रदर्शन की घटना आयी, जेलर बदले,
कष्टों की रेत उड़ी ऐसी दब कर दूर्वादल निष्फल से।
था वन्य सिंह धरती हिलती धरता जब अपने कठिन चरन,
राजसी मूर्त्ति थी अरुण अरुण, रक्तिम मुख मुद्रापूर्ण तरुण।
गेंडा से उसके काम नाम, वह वासी था पञ्जाब धाम,
कितनों को उसने दुख देकर भेजा था निश्चय अन्य धाम।
चूना की जलती भट्टी में उसने जीवित बन्दी झोंके,
पशु प्रगति शील थी कौन शक्ति ? उसको रोके अथवा टोके,
काशी में प्रिंस आगमन था, हड़ताल जेल में काम बन्द,
वह जेलर था चित्तू पांडे पर टूट पड़ा था बुद्धिमन्द।
छाती पर चढ़ मारे अनेक घूंसे मुक्के, लातें, लातें,
पांडे बोले, पंजाब-पूत ! प्यारी हैं ये तेरी लातें।
पञ्जाब ! आह जलियान बाग, उसके दुख लाये कारा में,
पञ्जाबी ऐसा वीर पूत ! पीड़ित हूँ उसके द्वारा मैं।
हारे थे उसके हाथ, वहीं हारा नृशंस का निठुर हृदय,
है सत्य अहिंसा की टांकी कटते हैं प्रस्तर-कठिन हृदय।
नाची थी बर्बरता प्रचण्ड बन्दी पर फिर भीषण प्रहार,
उड़ गये हवा में तृण-सुधार फिर पीड़ित बन्दी की पुकार।
मुझसे बोला तुम एक मास सानन्द बिताओ घर जाओ,
मेरे प्रबन्ध के बाधक हो अपनी शामतमत बुलवाओ।
क्या खोना था मुझको ऐसे अब और भला क्या होना था,

इतने दिन मैं था, बन्दी थे, दुख थे, कारा का कोना था।
इन्स्पेक्टर जनरल की आमद मैंने दुख-गाथा बतलाई,
पशु भोजन अत्याचारों पर उसको थोड़ी करुणा आई।
उत्तरदायी वह जेलर था, उसको प्रताड़ना दिखलाई,
लेकिन वह बाहर गया और राक्षसी मूर्त्ति भी चढ़ घायी।
मैं बैठा बाध बनाता था वह रोषी झपटा आता था,
डन्डा सावेश घुमाता था, नेत्रों से अग्नि गिराताथा।
हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी में गालियां और अपशब्द कहे,
शायद ही ऐसे शब्द रहे जो उस रोषी ने नहीं कहे।
दुख सहते सहते शेष रहीं हड्डियाँ और बालकपन था।
परबश बन्दी था वह जालिम ठाने निष्कारण ही रण था,
सुनता था उस पटु के पुराण, सहता था उसके बचन बाण,
पैशाचिकता के वे प्रमाण, व्याकुल करते थे विकल प्राण।
ऐसी सौम्यता समायी थी ऐसी क्षमता भी आयी थी,
थक गया निठुर गाली बकते, यह गान्धी की प्रभुताई थी।
मैंने सविनय था कहा अरे दुर्वाद सम्य हो करते हो,
सुन्दर जिह्वा दूषित करके मुझको भी पीड़ित करते हो।
कष्टों से अकुला कर मैंने बन्दी की दुख गाथा गायी!
इतने का मैं अपराधी हूँ, मारो यदि अब चाहो भाई।
दानव पर मानव विजय हुई गंडा का डंडा चल न सका,
गालियां हजम करता था मैं, कुछ दिन तो भोजन कर न सका।

मुक्ति

आया कारा का मुक्ति दिवस पावस, ऊष्मा का समय गया,
उर में श्यामल घन छाये थे, ममता करुणा का दृश्य नया।
दुख के संगी वे सहबन्दी छूटेंगे उनका चिरवियोग,
वे रहें हमारे हृदय-बन्धु उनसे था सच्चा प्रेम योग।
टूटी थीं कृत्रिम सीमायें, छूटीं थोथी मर्यादायें
मानव से मानव मिलन शान्त, वे अपराधी की आत्मायें।
बैरिक के बाहर चक्कर में बन्दी जुट आये सजल नेत्र,
आहा वे कैसे सहृदय थे, कितने थे उनके सरल नेत्र,

उनकी आंखों का वह पानी, उसकी दाहकता थी जानी,
जल जायेगा रे सावधान ! संसार सभ्यता अभिमानी,
बस बिदा, अरे भोले बन्दी, तू रोता है, मैं रोता हूँ।
घन घोर निराशा सम्मुख है, मैं अपना धीरज खोता हूँ।
सान्त्वना, शब्द माधुर्य मात्र कैसे कारा के दुख कटते,
रोये थे फूट फूट बन्दी व्याकुल होकर चलते चलते।
विस्तीर्ण नील नभ, मुक्त क्षितिज, कारा के बाहर ही देखा,
कर नमस्कार फिर फिर मैंने कारागृह का फाटक देखा।
चलदी गाड़ी, प्रमुदित होकर देखे धरणी के हरितवस्त्र,
नीलाम्बर पहने मेघ माल, वर्षा-आभूषण, यत्र तत्र।
स्टेशन आया, भीड़ भाड़, कन्नौज लिये प्रेमोपहार,
यह देश भक्ति की पूजा थी, सेवक का था उपहार प्यार।
प्रेमी उर को गद्गद् करते अपने सहृदय उद्गारों से,
थे हृदय परस्पर जीत रहे सुमनों के सुन्दर हारों से।
मिल रहे स्वजन बांधव, कारा के कठिन अठारह मास बाद,
जीता बालक निर्भय निरस्त्र, हारा पशुबल साम्राज्य वाद.
आरती, तिलक, जयमाल, अरे कितना तपकितना ज्ञान ध्यान,
साधन की केवल कुछ घड़ियां, उस पर कैसा अभिमान, शान !
अभिनन्दन सेवा का वर्णन, कन्नौज नगर कीर्तन गायन,
बापू की लीला का बन्दन, हृदयों का सुन्दर स्पन्दन।
श्रद्धास्पद, मेरे प्रेमास्पद, तन मन के शुक्ल तपस्वीवर,
मेरे शुभ मार्ग प्रदर्शक थे, मेरे हिलते डुलते कर घर।

मां

मां के दर्शन अति मधुर मिलन, मंगल कलशों का आयोजन,
वे मेरे शिर पर कर धरती, मैं धरता उनके करुण चरण।
जीर्ण जननी जीर्ण कुटिया, गिरता रुकता मिट्टी का घर,
लखते सहते संकट अनेक, तोड़े था अपनी क्षीण कमर।
मामी, नानी स्वर्गीय हुईं, मामा विपन्न दुख से मलीन,
देखे फिर दुखे ग्राम बन्धु बान्धव सब दुख से दीन हीन।

ऐसा था मेरा क्षीण स्वास्थ्य चलते चलते मूर्छा आती,
नेत्रों की ज्योति मलीन हुई, कष्टों से फटती थी छाती।

निठुर अंक

सब ओर लिखे से दीख पड़े असफल प्रयत्न के निठुर अंक,
डूबा था शोक पयोनिधि में, आशाओं का मंजुल मयंक।
गाते थे गीत पराजय का, हतभाग्य, मौन भारतवासी,
निष्प्रभ छिन्नासन शक्ति हुई टूटे मन्दिर की प्रतिमासी।
केशरी शृंखला-बद्ध रहा, यद्यपि सचेष्ट सबद्ध रहा,
यह विफल सिंह का युद्ध रहा, प्रज्वलित नेत्र हो क्रुद्ध रहा।
पहला प्रयत्न वह था सयत्न, असफलता तो है पथ-प्रदीप,
पथ है प्रशस्त, जगमग होंगे, आशाओं के सुन्दर प्रदीप।
सदियों की पराधीनता है, युग युग की देश-क्षीणता है,
पहले प्रयत्न में क्या मिटती, जड़ता मय दुखद दासता है।
प्यारी स्वतन्त्रता वरण हेतु ठन चुका देश में रण-भीषण,
क्षण हो विराम विश्राम-शिथिल, अन्तिम जयदेवो का प्रांगण।
दब सकते हैं ? मिट सकते हैं ? शाश्वत वीरों के भाव जागे ?
रुक जाते हैं, बढ़ जाते हैं सैनिक-पथ कंटक बड़े बड़े।
जन जीवन में था सत्य अहिंसा का पहला व्यापक प्रयोग,
आश्चर्य नहीं यदि विफल रहा भारती शान्तिमय असहयोग,
अन्तिम परिणामों से कैसे जय अजय समीक्षा हो सकती,
नैतिकता सुघर कसौटी है ध्रुव सत्य परीक्षा हो सकती।
पशु बल हारा है बार बार, इतिहास कह रहा है पुकार,
जीता है सत्य, अहिंसा बल, इसका पथ असि की तीक्ष्ण धार।
इसका थोड़ा सा भी प्रयोग, अक्षय अमोघ, चिरकाल सत्य,
जय इसके पूर्ण पराजय में, पग पग प्रयास शिव शान्त सत्य,
ईसा प्रभु को था क्रास मिला, जीता था पशुबल या ईसा।
मर गया कभी अत्याचारी, युग युग को जीवित है ईसा।
मुहम्मद पर पत्थर के प्रहार पशुबल के दारुण अनाचार,
है अमर नबी, है अमर नबी, कब्रों में पशु पर धूलिक्षार
सुकरात जहर के प्याले पीकर अमर हुआ हंसते हंसते,

जीता जीता वह अमर पुत्र दानवता से लड़ते लड़ते।
मंसूर चढ़ा था सूली पर, कांपे थे पशु के दारुण कर,
हारा दानव, पशुता हारी, जीता मानव, जीता था नर।
हारी है संतत हारेगी, पशुता बर्बरता पूर्ण शक्ति,
मानव सर्वदा जयी होगा, अद्भुत है उसकी आत्म शक्ति।
कट सकीं न श्रृंखल की कड़ियां, रह गयीं गुलामी की गुड़ियां,
हट सकीं न मग की कंकड़ियां, बरबाद देश की झोपड़ियां।
शैतानों के सब काम काज, माता के तन के कोढ़ खाज,
मिट सके नहीं इस बार हाय,घन दमन घिरा दिनकर स्वराज।
था चर्म चक्षुओं ने देखा विजयी पापी अत्याचारी,
था दिव्य चक्षुओं ने देखा विजयी सत्याग्रह व्रत धारी।
त्रिजयी है सत्य पन्थ गामी, विजयी सेवक, विजयी प्रेमी,
विजयी एकाकी, अनुगामी यदि कोटि नहीं जन जन क्षेमी।
बिजयी इस भांति पराजित था, विजयी था गान्धी जगत जयी,
पशु अपने अत्याचारों से व्यापारों से था क्षणिक जयी।
नीलाम्बर में हैं टंके हुए बलिदान रूप उज्वल तारे,
प्रकटेगी प्रिय सौभाग्य-उषा धरणी पर पीताम्बर धारे।
असफलता टूटे तारा सी, दुर्गमता सुप्रकाशिका सी,
संकल्प-सुदृढ़ नर कर्मवीर होते हैं इसके द्वारा ही।
कुछ क्षण प्रकाश फिर अन्धकार, स्पष्ट गर्त कंटक अनेक,
प्रणवीर मनस्वी कार्यार्थी का होता है ध्रुव सा विवेक।
फूलों से कंटक ही अच्छे, लेते हैं दामन तनिक थाम,
श्रम श्रम की लगन पराजय में, जय में विलासिता-मय विराम।
नेता गण कारा मुक्त हुए, बापू अस्वस्थ उन्मुक्त हुए,
प्यारे स्वदेश की चिन्ता में सब वीर पुनः संयुक्त हुए।
अविराम काम विश्राम कहाँ, जन सेवक उन्हें विराम कहाँ,
जब तक न उषा आवे सुन्दर, तब तक जीवन की शाम कहाँ।
कुछ लौट गये, थक गये चरण, कल्याण पंथ था दूर यहाँ,
अब कौन कहाँ है आतिथेय, यदि पांथ यहां, पाथेय कहाँ।

एकाकी

चल दिये यात्री एकाकी, उनका साहस उनका प्रदीप,
गम्भीर निराशा में चमका गान्धी का उज्वल प्राणदीप।

दुख-जटिल कुटिल जगके मगमें वह सरल सरल पग धरता था,
बामन वह अपने पग से ही सब के सिर नापा करता था।
उसके शिर साधु सरलता थी, जिसमें अति तीव्र तरलता थी,
उसका पीयूष प्रेम मादक, संक्रामक गहन सरलता थी।
राष्ट्रीय यज्ञ की असफलता उसका इतना ही तो कारण,
तन मन से सत्य अहिंसा का हम कर न सके पूरा पारण।
इस कुटिल जगत कल्याण हेतु अत्यन्त सरल बनना होगा,
जीना है तो हे अमर पुत्र जग तरल गरल पीना होगा।
हिंसा हिंसा का ही रव है भय भीमनाद है भैरव है,
संजीवन मन्त्र अहिंसा से जीवित करना मानव शव है।
अपने प्राणों के बल पर ही प्रति पक्षी से लड़ना होगा,
जीना है युग युग को यदि तो सेवा पथ में मरना होगा।
इतनी कुरबानी, कष्ट सहन, बलिदान त्याग पर्याप्त नहीं,
आजादी देवी का तर्पण, निज गरम रुधिर देना होगा।
उठ चला विश्व के रंग मंच मानव अभिनय का सूत्रधार,
आया तम घोर पयोनिधि में भारत नौका का कर्णधार!

खादी

प्रेमास्त्र सुदर्शन चक्र लिये आया भारत का सूत्रकार,
बुनता खादी का नूतन पट, थे श्वास श्वास के तार तार।
दिन दिन चरखे का सरंजाम, पल पल करघे का सुघर काम,
घर घर जन जनने देख लिया प्रिय स्वावलम्ब का पथ ललाम!
बच गया देश का धन अपना प्रति वर्ष साठ पैंसठ करोड़,
सुन्दरता पूर्ण सरलता में खादी की होने लगी होड़।
राष्ट्रीय जनों का एक चिन्ह, भारती वीर का सरल चिन्ह,
खादी की सादी वरदी थी, प्रेमी साधक का शुद्ध चिन्ह।
श्वेताम्बर धारी नर नारी या श्वेत प्रसूनों की क्यारी,
मानव विराट, उन्नत ललाट, खादी धारी जग भय हारी,
जग को बतलाते थे देखो केवल न हमारा वस्त्र श्वेत,
हम भारतीय हैं शान्त शुद्ध मनश्वेत यदपि तन है अश्वेत।
हम अपनी शान्त सरलता से जग की बक्रता मिटायेंगे,

खादी की उज्ज्वल गंगा में सारे कल्मष बह जायेंगे।
जिनके तन पर सुन्दर खादी की चारु चन्द्रिका छा जाती,
उनमें बलिदान तपस्या की शुभ शान्ति भावना आ जाती।
कैसे सुन्दर उनके शरीर, उनका कितना शृंगार विशद,
जैसे ज्योत्स्ना बिंबित सर में निर्मल जल फूले श्वेत कुमुद।
स्वर्गीय शान्ति का नव विधान, कितना सुख कितना सरल ज्ञान,
श्रमशाली मानव भाग्यवान, मानव मानव संतत समान।

तन्तुवाय

सुन्दर है तन्तुवाय का घर उद्यमआश्रम, उद्योग-भवन,
छोटी सी रम्य वाटिका है तुलसी गेंदा का नन्दन बन।
सुन्दर तन फुल्ल कमल ऐसा, उज्वल मन गंगा जल ऐसा,
सुन्दर घन है श्रम फल ऐसा, इसका जीवन निर्मल कैसा,
घर कितना सुघर सुडौल बना, यह नहीं घरौंदा जीर्ण शीर्ण,
है श्रमिक किन्तु स्वाधीन मुक्त, यह नहीं परीक्षा अनुत्तीर्ण।
श्रम करता है, धुनकी चलती, चरखा चलता, करघा चलता,
उसकी कल्याणी श्रम शीला, घर भर श्रम मग्न रहा करता,
वह सुन्दर भोजन खाता है, पर्याप्त प्रमोद मचाता है,
प्रिय स्वावलम्ब अपनाता है, उत्तम कबीर पद गाता है।
शहरों में क्या होगा नसीब, बजता जीवन का एक तारा,
उत्सव आनन्द-प्रमोद नित्य, है कहां यहां मिल की कारा।
है धुआँ धूलि से बचा हुआ, ताड़ी शराब से दूर हुआ,
उन्मुक्त गगन में जीवन तरु, इसका सनेह से सिंचा हुआ।
है घात और प्रति घात नहीं, दोहन, शोषण की बात नहीं,
सुख शान्ति प्राप्त हैं यहीं यहीं, है स्वर्गलोक की बात नहीं।
कल से कल कुछ कल पायेंगे, यह आज अभी कलपाता है,
कल से कोई कल पायेगा ? यह किसे कहां कल पाता है।
तन से आलस्य प्रमाद मिटा, राष्ट्रीय चेतना प्राप्त हुई,
छोटे कामों से घर घर में भारती भावना व्याप्त हुई।
जिनका विवेक था सरल तथा जीवन उद्यमशाली ललाम,
ऐसे अनेक थे शान्त सुखी, पहले वैभव संपूर्ण ग्राम।

श्री देश बन्धु औ त्याग मूर्ति संयोजक थे कौंसिल प्रवेश,
व्याख्यानों और विवादों से करते थे प्रकटित देश-क्लेश।
जग ने जनमत जागृत देखा, भारती कष्ट की कथा सुनी,
कौंसिल असेम्बली में गरजे भारत के वक्ता वीर गुनी।
शासन-सुधार का कपट-जाल, वचना था और दिखाना था,
निस्सार निरे थोथे सुधार, शासन का दुर्ग ढहाना था।

द्वेषाग्नि

भड़की आपस की द्वेष-अग्नि परदेशी ने तो घृत डाला,
हिन्दू मुसलिम दंगे अनेक, हो गया एकता मुख काला।
पागल मजहब के दीवाने, धर्मान्ध व्यर्थ ही हठ ठाने,
भड़काने से जाहिल भड़के, पल में लेते देते जानें।
एकता प्रेम के पूर्व दृश्य भारती गगन से लुप्त हुए,
कौमी फकीर बनने वाले विद्वेषक हिंसा लिप्त हुए।
छल ही बल हो, पारस्परिक फूट जिस शासन का आधार रहे,
उस प्रस्तर के रहते कैसे एकता जान्हवी धार बहे।
अबलों पर अत्याचार हुए कितने मासूम शिकार हुए,
भाई के हाथों भाई की गरदनें कटीं संहार हुए,
अबलाओं का रक्षित सतीत्व नारीत्व भेड़ियों ने लूटा,
वे हिन्दू थे या मुसलिम थे उनका था धर्म कलश फूटा।
स्वार्थी नेताओं के गुलाम थे संप्रदाय के क्रीतदास,
संकेतों पर था सर्वनाश, उनका कौतुक मानव-विनाश।

जीवन-तरणी

किस ओर लगे जीवन-तरणी अब अपना खेवन हार कहाँ,
सब ओर विकट कोलाहल था अपना अपना संसार यहाँ।
जीवन-यापन का कठिन प्रश्न, जीवन संघर्ष विकट सम्मुख,
मेरे दुःखों का क्या कहना, धरणी के दुख, जननी के दुख।
निर्बल शरीर था अस्थि-शेष कारा के दुख सहते सहते।
वृद्धा जननी बच गयी आह दुख से भूखों मरते मरते।
नेता गण मेरे वयोवृद्ध उनका घन, यश वैभव महान,

भगवान ! पार लगती नौका यदि होता उनका मन महान ।
स्मृति थी—एक विराट सभा, गरजे थे मेरे वन्दनीय,
इस बालक ने सर्वस्व दिया इसका साहस है पूजनीय।
इसके भविष्य के जीवन का मैं लेता हूँ सानन्द भार।
उनके ये आशा-पूर्ण वाक्य केवल भाषण के अलंकार
उनका ऊंचा प्रासाद धवल वे बैठे थे उच्चासन पर।
मैंने अपनी दुख-कथा कही, चाहा श्रम करने का अवसर।
उत्तर था गुरु गंभीर किन्तु सहृदयता से परिहीन, शुष्क,
अफसोस देश के सेवक को रोटी भी मिलती नहीं खुश्क।
क्या कर सकता हूँ ! एक नहीं ऐसे पीड़ित तो हैं अनेक,
सुनकर निष्ठुर कोमल बातें, रोता था मेरा मन विवेक।
उनके हाथों में एक नगर का शासन था, वे शक्तिमान,
उनका प्रभाव अधिकार बड़ा, वे किन्तु नहीं थे हृदय वान।
रोया मेरा मन, उस महान तक जाने का सन्ताप हुआ,
क्या पाप हुआ या शाप हुआ, यह जीवन हीं अभिशाप हुआ,
मां आशा करती थीं मुझसे मैं उनका दुख तो हर न सका,
दो रोटी पाने का उपाय, निरुपाय हाय कुछ कर न सका।
संकट की सीमा ! मां बोली बेटा घर में है अन्न नहीं,
भूखे रहना है, विश्वम्भर को छोड़ सहारा अन्य नहीं।
मां के वे गरम गरम आंसू, छूटा मेरा साहस विवेक,
घर से नीचा शिर किये चला, पहुँचा उपवन था निकट एक।
व्याकुलता कहती थी दुख से बचने का है सम्मुख उपाय,
कूदो जीवन का अन्त करो, यह कूप मुक्ति प्रद महाकाल।
घट घट व्यापी अन्तर यामी बोले अपना दृढ़ हृदय करो,
मन बोला, हे मेरे स्वामी ! दुखकम न करो तो अभय करो।
सदुपाय बताओ दीनबंधु मेरी जननी के कष्ट मिटें,
मेरे पथ के कंटक समूह विपदा बाधायें तनिक हटें।
यह अग्नि-परीक्षा भीषण है इतना न तपाओ जल जाऊं,
मैं कल का बालक शक्ति हीन, विश्राम मिले कुछ कल पाऊं।
दो वर्ष भटकते ही बीते, दुर्दिन घटते बढ़ते बीते,
मेरे सारे हितैषियों के हो गये दया के घट रीते।

कन्नौज प्रदर्शन अग्र गएय, अभिनन्दन सेवा गुण गायन,
दुर्भाग्य न हो पाया नसीब, सेवक को श्रमफल अशन वसन।
नेता महान गम्भीर खोल कर अखिल भारती संस्थायें,
घुल घुल कर मोटें होते थे, करते स्वदेश की सेवायें।
अत्यन्त बृहद् कार्यालय में अत्यन्त कृपा से काम मिला,
टिकने को तो कुछ धाम मिला, वेतन में नहीं छदाम मिला।
यह कारा कितनी कष्ट पूर्ण, पग पग अपमान सहन करता,
दुर्बल कन्धों पर दुखद कष्ट गुरु भार निराश वहन करता।
सहृदय गण शोक प्रकट करते सान्त्वना शब्द तीखे कहकर,
'तुमने जीवन का नाश किया, गान्धी की आंधी में पड़कर।
मन रोता था हे दीन बन्धु, कितने कटु इनके बचन बाण,
कल्याण पंथ का पंथिक नाथ ! मेरा हो अब तो परित्राण।
मामा दुख से विकलांग दीन, निर्धन थे रोगाक्रान्त हुए,
जो स्वयं वैद्य वे आज स्वयं औषधि विहीन दुख श्रांत हुए।
उनका शरीर केवल ठठरी, परिताप हृदय करता विदीर्ण,
निर्धनता ने कर डाला था असमय ही उनको क्षीण जीर्ण।
मैं स्वयं कष्ट में क्या करता उनके दुख हरने का उपाय,
उपचार चिकित्सा क्या करता, मरने पर रोया हाय हाय।
बुझ गया आह जीवन-दीपक,बद्री था उनका वंश-दीप.
लग गईचिता अरमानों की गङ्गा मां की गोदी समीप।
धधका विराग, संसार अरे इतना क्षण भंगुर नाश वान,
धधका विषाद, संसार क्लेश का सागर हैदुर्गम महान।
तिल तिल गलना मरना मिटना, यह भी कोई नर जीवन है,
दूसरी ओर जीवन प्रमोद, आनन्द मोद का जीवन है।
ग्रामीण धनिक मेरे बांधव उनका धन था छै सात लाख,
उद्योग और सत्कार्य हेतु वे दे न सके थे स्वर्ण-राख।
यों ही भूखों मरता फिरता, दुखिया जननी की चिंता थी,
बुझ जाय न जीवन का प्रदीप भावी जीवन की ममता थी।
फाइनल परीक्षा पास रहा, अष्टम कक्षा में पढ़ता था,
सरकारी छात्र वृत्ति पाता था प्रथम सर्वदा रहता था।
पढ़ना छोड़ा, कारागृह में गम्भीर पूर्ण अध्ययन किया,

ऐसा था कौन विषय सुन्दर जिसका अनुशीलन नहीं किया।
अब फटे हाल, चिथड़े टांगे, क्या कहूँ कहां तक पढ़ा लिखा,
था आल इंडिया आफिस-पंद ! चपरासी था, आलेखलिखा।
बोले मेरे नेता महान, हां, काम कर सकोगे मेरा,
मैं चपरासी था रात दिवस श्रम वेतन में धोखा कोरा।
वैभव वाले विद्या वाले थे देश भक्ति के मतवाले,
वे घंटों भाषण देते थे पी पीकर पानी के प्याले।
तड़तड़ ताली बजतीं उनके साथी प्रोत्साहन देते थे,
नेता जी अपना दल वल लेकर भीषण भाषण देतें थे।
व्यवसाय हुई थी देश भक्ति, इच्छित था केवल स्वार्थ नाम,
परवाह नहीं मिटता जाये कोई अनाम, कोई ललाम।
केवल आंसू का बल मेरा, यह जप मेरा, यह तप मेरा,
सुनता था जगदीश्वर मेरा, मैंने उसको जी भर टेरा।

प्रसविनी

था शीतकाल का कानपूर प्रातः था राजपंथ कोना,
दुखिया थी एक प्रसविनी थी, जाता था सुन पाया रोना।
पीड़ा की विकल कराह उठी, दीना दुख-कातर कांप उठी,
सामाजिक विषम परिस्थिति को निर्दयता को वह नाप उठी।
शीताकुल थी थर थर कंपता, उसका जर्जर निर्बल शरीर,
उस पर दुख प्रसव-वेदना थी, प्राणान्तक घातक कठिन पीर।
स्तब्ध और जड़ देख रहा, दुनियां का दारुण दुखद दृश्य,
भगवान ! कहां हैं धर्म कर्म, यह तिरस्कृता, त्यक्ता अस्पृश्य।
किसकी है कौन कहां घर है संकट हैं इसके सहचारी,
अंधे नर देख नहीं पाते ऐसे संकट में है नारी।
लो एक और आया मरने सहने दुख संकट सहकारी,
नव जात पुत्र, वेदना भूल रोती रोती हंसदी नारी।
करुणा, अद्भुत, वीभत्स ? अरे यह काव्य-कल्पना, चित्र नहीं,
भावुकता, हाला, मधुशाला, नक्षत्र लोक हे मित्र नहीं !
क्या करता मैं भी पीड़ित था। तन पर था कुरता एक फटा,

मोटी खादी की चादर थी, साहस अब तक था नहीं घटा।
चादर उतार कर उस देवी पर डाली मन का बोझ हटा,
कुछ भारी गरम उसासें लीं निष्ठुर दुनियां का नाम रटा।
मन में घन छाये रहते थे, आंसू नेत्रों में रहते थे,
भर आंखें दुनियां देख देख दुख के परनाले बहते थे।
ईश्वर इच्छा ! सन्मित्र मिलेश्री निगम मधुर स्मृति सुखकर,
इन्ट्रेन्स परीक्षा पास करो, यदि मरना नहीं तुम्हें दुख भर।
कुल तीन मास अध्ययन किया, दिन रात एक कर, हो तन्मय,
स्वप्नों में रेखा गणित सिद्ध ! ऐसी तन्मयता स्वर्ण समय।
प्रभु की प्रख्यात परीक्षायें, विपदायें एवं बाधायें,
उत्तीर्ण उन्हीं की अनुकम्पा, अद्भुत हैं उनकी लीलायें।

जीवन

पग पग पालक पोषक मेरा प्रिय परम पिता परमात्मा था,
जाग्रत करता मंगल विवेक पथ दर्शक अन्तरात्मा था।
एकान्त, निशा, बाला, आग्रह, मेरा विवेक यदि सो जाता,
दुर्लभ अमोल स्वर्गीय रत्न, मेरा चरित्र धन खो जाता।
प्रातः ही विकट परीक्षा थी, मुझको भी पंथ प्रतीक्षा थी,
मैं स्वयं गुरु औ चेला था—वह ऐसी शिक्षा दीक्षा थी।
बीते थे यों ही पांच वर्ष स्कूल, परीक्षा कोर्स कहां,
थे संकट कटक अपार यहाँ, ये पंथ कंटकाकीर्ण वहां।
था शोक सिन्धु, निर्बल का बल, केवल आंसू, पानी का बल,
अब कौन कहां मेरा रक्षक, मेरे जीवन धन तुम केवल।
चाहो तो पार करो नैया, दीना दुखिया मेरी मैया,
देखो न डूब जाये दुख का है विपुल भार जीर्ण नैया।
उस दिन ईश्वर का चमत्कार, था पूर्ण परीक्षा भवन भरा,
लेखनी चमकतीं चलतीं थी, उत्तर लिखती थी चपलत्वरा।
उत्तीर्ण, निराशा सिन्धु पार, जगदीश्वर मेरा कर्णधार,
जीर्ण नौका, बोझिल अपार, लग गयी दया के घाट पार।
यह रहा योग्यता का प्रमाण! सारे संकट का समाधान,

कितनी ओछी, थोथी दुनियां! इन्ट्रेन्स पास, बस ज्ञानवान।
अध्यापक, उप सम्पादक था, वेतन था कुल रुपये पचास,
पाई निर्धन ने मुक्ति युक्ति, आई जीवन में मुक्त श्वास।
हँस दिया दुखी का घर, जननी भी सुखी हो गयी एक बार,
विश्वंभर की अनुकम्पा से हो सका शोक के सिन्धु पार।
छोटे भाई का शुभ विवाह घर में मंगल मय चहल पहल,
निर्धन की कुटिया उत्सव में हो गयी एक आनन्द महल।

पगले

वे पगले, दुनियां कहती थी उनको पथ भ्रष्ट आततायी,
वे रहे लुटेरे या पगले अद्भुत प्राणी विप्लवकारी।
वे श्मशान की शान्ति-साधना के न प्रसिद्ध शान्तिकारी,
इस जड़ वैषम्य भरे जग में निर्भीक समाज क्रान्तिकारी।
है सभ्य संगठित लूट पाट. है व्यर्थ शान्ति का वाह्य ठाठ,
जलती मिटती है अन्तर में घर घर में मानवता विराट।
छाती पर बैठा दुश्शासन, मानवता का मर्दन ताड़न,
असफल हों शान्ति चेष्टायें, इतना दारुण है दानव पन।
मानव हैं व्याकुल औ भूखे, पाते टुकड़े रूखे सूखे,
मानव प्रसून ये नौ निहाल, मर्दित हैं जीवन रस-सूखे।
थे देश भक्ति के दीवाने, वे आजादी के परवाने,
निकले नर नाहर नगर नगर, थे लिये हथेली पर जानें।
व्याकुलता मार्ग दिखातीं थी, वे शान्ति-साधना क्या जाने,
अन्यायी अत्याचारी पर वे अपनी पिस्तौलें ताने।
यह हत्या लूट मिटाने को वे बने लुटेरे हत्यारे,
उनकी ज्वाला ही पथ प्रदीप, उनको पीड़ित प्राणी प्यारे।
इतने गरीब! इतने गुलाम! ये कोटि कोटि मानव ललाम,
मरते मिटते सहते रहते दुनिया के दुख ये सुबह शाम।
उत्पात शृगाल किया करते, तब रुक कर सिंह नहीं चलते,
मारे से रक्त-बीज मरते, मरघट ज्वाला में शव जलते।
आज़ादी पर वे मचल पड़े, वर बादी पर वे उबल पड़े,

काकोरी के नामी शहीद सरदार सूरमा निकल पड़े।
धन एकत्रित करते थे वे लूटी गाड़ी, डाका डाला,
पिस्तौलें उनके आयुध थीं आतंक-क्रिया, तोड़ा ताला।
धन से पिस्तौलें अस्त्र शस्त्र लेते थे यह कह देते थे,
धन देश- काम में लगता है जिसको स्वार्थी नर सेते थे।
हैं आज यहां कल वहां चले, तूफान उठाया जहां चले,
आतंक त्रास, शासक दलको जिस ओर क्रान्तिकारी निकले।
मुखबर कुछ टुकड़ों के गुलाम, इस मिट्टी के दुश्मन निकले,
वे नारकीय पामर नितान्त वे निकले मिट्टी के पुतले।
उनके कारण सुन्दर जवान, आजादी की हसरत वाले,
भीषण जेलों में बन्द हुए जगको स्वतन्त्र करने वाले।
कुछ मास न्याय का नाटक था, कारा थी काला पानी था,
फांसी थी चार जवानों को, जिनका पानी लासानी था।
श्री राम प्रसाद बीर बिसमिल, अशफाकुल्ला गंभीर धीर,
श्री रोशन सिंह साहसी नर राजेन्द्र लाहिड़ी सदृश वीर।
आया फांसी का दिन वीरों ने हंस हंस कर की तैयारी,
मरने या वरने जाते थे आजादी की प्रेयसि प्यारी।
ऐसी थी वीरों की उमंग इतना उत्साह समाया था,
मन तो उनके थे ही प्रसन्न, तन का भी वजन सवाया था।
वह स्वर्ण समय था भारत का, वीरों ने अपना दिया खून,
राष्ट्रीय गगन में उनकी ही बलिदान अरुणिमा थी अन्यून।
प्रातः उठ कर स्नान किया, आजादी के गाने गाये,
बीरों की मृत्यु भिखारिन सी, वे हंसे मौत पर मुसकाये।
है जेल खेल अब तो फांसी के तखते पर घर करते हैं,
सर कौम देश का ऊँचा हो हम आज नजर सर करते हैं।
आजादी का पौधा वीरों ने देश भूमि पर रोपा है,
वह सूख न जाये उसे खून से हम अपने तर करते हैं।
आजाद रहें, आबाद रहें प्यारे स्वदेश वासी मेरे,
हम अमर देश-वासी अपनी स्वर्गीय यात्रा करते हैं।
फांसी के तख्ते पर आये वे अमर पुत्र हंसते हंसते,
प्यारे स्वदेश को अभय किया उन वीरों ने हंसते मरते।

शासन किसका कर दमन सका मिट्टी में मिट्टी मिली गली,
वह वीर भावना अमर हुई, पूजित शहीद वे गली गली।
चिरक्रान्ति अमर, चिरक्रान्ति अमर कहता मलयानिल सिहर सिहर,
चलदल पल्लव दल पहर पहर, कहता सौरभ अति महर महर।
रे सावधान, रे ठहर ठहर, शासन परदेशी दुश्शासन,
दासता दुर्ग कर ध्वस्त, नष्ट, कहता समुद्र रव घहर घहर।
चिर क्रान्ति अमर चिरक्रान्ति अमर,

अनशन

देहली! तेरी देहली भीगी तू सदा चाहती गरम खून,
तू रूठा करती है रानी! बलिदान चाहती तू अन्यून।
देखे हैं तूने राज वंश, उत्पात घात करने वाले,
कह दे तूने कितने देखे मानवता पर मरने वाले।
मौलाना मुहमद अली भवन दिलखुश सन्निकट पहाड़ी थी,
रण रंग हुए थे कभी यहीं, नर रक्त सिंची वह क्यारीं थी।
उसके ऊपर था बना हुआ सन सत्तावन का स्मारक,
भग्नावशेष कह रहे मौन क्या कृत्य कर चुके नर-पालक।
इससे थोड़ी ही दूरी पर कब से अशोक स्तंभ खड़ा,
आकाश ओर उँगली दिखला, दे रहा एक सन्देश बड़ा।
उस राज मार्ग से जाते हैं नागरिक सभ्य सब भांति सबल,
इस ओर घोर अनशन ठाने लेटा संतप्त त्रस्त दुर्बल।
दुख पाप देश के भोलों का पीड़ित हो आप वहन करता,
वे जियें जगें मानव बन कर इसलिये आज गांधी मरता।
हे पांथ! रुको सोचो कुछ क्षण क्या यह सब है कुछ बात नहीं,
आओ देखो इस दुख ऐसा भी दुख होता है या कि नहीं।
उपवास, त्रास का रूपान्तर, बापू अनशन इक्कीस दिवस,
भर गया निरस निष्ठुर उर में भीं शान्ति, अहिंसा करुणा रस।
भूले मजहब का मूल, मूर्ख लड़ते पत्तों पर डाली पर,
चल दिये लुटेरे लूट पाट, आयी शामत बन माली पर।
वह कैसे समझाये उनको सब एक एक के बन्दे हैं,

लड़ना, मरना, झगड़े करना ये धर्मान्धों के धन्धे है।
वे नहीं समझ पाये इतना, कहता था नबी पुकार सदा,
सौ मसजिद कोटि शिवालों से बढ़ कर मानव है एक सदा।
जो इसको दुख पहुँचाता है वह ईश्वर धाम ढहाता है,
कह कर सब धर्माचार्य गये, मानव मानव का नाता है।
ईसा के अद्भुत अनुयायी, यह फूट मूर्खता फैलाई,
दुश्शासन की है प्रभुताई, भाई से लड़ता है भाई।
नवयुग का ईसा कहता है, तुम लड़ते हो मैं मरता हूँ,
ओ भोले बच्चो! नेक बनों मैं यही प्रार्थना करता हूँ।
पछताओगे तुम बार बार करते हो जग मिथ्या प्रचार,
बन्दे ईश्वर को भूल गये, शैतान बिगाड़े है विचार।
अनशन की शैया, भीष्म तुल्य नर देव राम को जपते थे,
भक्तों की उज्वल गंगा में, स्नान निरन्तर करते थे।
घिर आये थे भारती वीर, विज्ञानी नेता अग्रगण्य,
विकराल समस्या बनी आज जो थी असार एवं नगण्य।
जीते थे शासक छल बल से, ले प्रेम अस्त्र बापू लेटे,
मालिक समझाओ ठीक करो, अपने नटखट टेढ़े बच्चे।

धर्म

यह धर्म! मूर्खों की अफीम, शतवार दूर से नमस्कार,
वर्जित है मानव प्रेम जहां, अवरुद्ध मुक्त निर्मल विचार।

है जहां विभाजन मानव का, संकुचित क्षेत्र कुंठित विकास,
आवृत जिसके संतत कपाट, मानवता फिरती है निराश।

बापू अनशन प्रार्थना सजल करते थे आंखें मींच मींच,
पाला तरु सत्य अहिंसा का अपने सुरक्त से सींच सींच।

तिल तिल घुल घुल जीवन आहुति दे कहता था मानव गांधी,
जलने दो प्रेम-दीप भाई, रोको यह शैतानी आंधी।

समझो अपना शिव प्रेम रूप, समझो मजहब का मूल रूप,
मानव मानव से प्रेम करो, मानव में ईश्वर का स्वरूप।

धर्मान्ध

मजहब के पगले दीवाने उनकी करतूतें काली थीं,
शैतान हंसा, रोया मानव, शामत आयी बनमाली की।
रोगी शैया पर लेटे थे धर्मान्ध घुसा चुपके घर में,
हा स्वामी श्रद्धानन्द आज गोली से आहत थे उर में।
जिस उर में विश्व प्रेम उमड़ा, जिसकी विशालता जानी थी,
संकीर्ण सांप्रदायिक पिशाच ने उसकी ही कुरबानी की।
वह गई रुधिर की गरम धार, कह गई धर्म के दीवानो,
ये शैतानों के काम काज छोड़ो, मानवता को मानो।
श्री स्वामी श्रद्धानन्द अमर, उनकी सुकीर्ति प्रख्यात धवल,
उनका बलिदान महान त्याग, गंगा जल सा निर्मल उज्ज्वल।

साइमन

आजादी का आन्दोलन था नेता अपना प्रिय मोहन था,
कौंसिल असेम्बली नगर नगर वीरों का निर्भय गर्जन था।
तत्काल स्वराज्य लक्ष्य अपना सब ओर महान पुकार उठी
केशरी शृङ्खला बद्ध बिकल अवरुद्ध क्रुद्ध हुंकार उठी।
थी विधि बिडम्बना असहनीय, इंग्लैंड, भाग्य का निर्णायक,
छोटा सा द्वीप महानदेश, यह उपनिवेश भारत नायक।
गोरे आवें यह जांच करें हम योग्य पुरुष अथवा अयोग्य,
अपनी यह कटु-प्रताड़ना थी बसुधा बीरों की सदा भोग्य।
हम भूल गये सच्चा स्वरुप अपना गौरव बल, तेज, ओज,
जीवन का पानी सूख गया संकुचित हुए सुन्दर सरोज
भारत में जांच कमीशन के आये गोरे सायमन सप्तक,
अथवा दुश्शासन सत्ता के वे थे मीमांसक प्राणान्तक।
निश्चय था उनका बहिष्कार, बस दूर दूर से नमस्कार,
भारी वक्षस्थल पर प्रस्तर, यह सप्तगजों का और भार।
लहराया जनमन का समुद्र दिखलाया सबने वीर-रोष,
काले झंडों से स्वागत था उमड़ा वीरों का पूर्ण जोश।

मदरास कराची से गुजरे कलकत्ता या बम्बई गये
काले झंडों से स्वागत था जिस ओर गये वे जहां गये।
लखनऊ पधारे वेगोरे स्वागत में थे काले झंडे,
श्री पन्त नेहरू देश वीर खाते थे जालिम के डंडे।
यह अपनी जांच हो रही थी तपकर निकले असली सोने,
माता के सुन्दर आभूषण सच्चे तपसी सच्चे सोने।
पंजाब केशरी आगे थे काले झडों का था जलूस,
सब समझे थे इस शासन को अत्याचारी को घास फूस।
निर्बल निरस्त्र व्याकुल जनता क्या करती योंही मरती थी,
व्याकुलता चारों ओर बढ़ी वीरों का धीरज हरती थी।
नौकर शाही खिसियानी थी सब उसके छल बल जानगये,
सब कपट जाल पहिचान गये उसके शासन-अभिमान गये।
अब केवल लाठी का बल था शासन का पशुताका बल था,
अविराम दमन शूरता-शमन भारती समस्या का हल था।
लालाजी पर लाठी बरसीं, मर्माहत थे भारत वासी,
आयी सुधार की खूब धूल, आयी अपनी शामत खासी,
आहत थे तीव्र वेदना से जीवन-लीला-संवरण आह,
जीवन की वे अन्तिम घड़ियां वर वीर केशरी की कराह।
मेरे शिर लाठी नहीं पड़ी, जड़गयी कफिन में कठिनकील
मिट जायेगा हट जायेगा दुश्शासन दानव-दमन शील।
चेतो चेतो भारत वासी मानव होकर तुमहो गुलाम,
स्वाधीन बनो ऐ अमर पुत्र तुम राम श्याम बंशज ललाम।
स्वाधीन सुखी है जीता है, मरता है रा रो कर गुलाम,
प्यारा स्वदेश स्वाधीन बने, मेरी है अभिलाषा 'ललाम'।
लाला जी तो स्वर्गीय हुए बलिदान भावना नित्य अमर,
उस वीर भावना से आजादी को लायेंगे निश्चय वर।

प्रतिशोध

नवयुवकों का साहस छूटा, आशा का मंगल घट फूटा,
व्याकुलता थी सर्वत्र व्याप्त, धीरों का भी धीरज छूटा।

पंजाब सिंह नर शार्दूल, विद्वान मनस्वी धीर बीर,
सांडर्स दुरात्मा की आज्ञा, मर्माहत था सुन्दर शरीर।
प्रतिशोध खून का बदला था, रुकते वे नौजवान कैसे,
निकले दस पांच शस्त्र धारी, वे अग्निपुत्र नाहर ऐसे।
भीषण हत्या, सांडर्स मरा, वीरों का वक्षस्थल शीतल,
था शत्रु रुधिर से अमर वीर लाला जी का तर्पण निर्मल।

फूटे फफोले

काला कानून बनाती थी सरकार असेम्बली में अपना,
कुछ बची खुची आजादी भी होने को थी अब तो सपना।
सब ओर दमन उत्पीड़न था, परदेशी शासन का दोहन,
बापू करते थे सद्यारोपित सत्य अहिंसा का पोषण।
मारें बैरी को मर जायें उठता वीरों का तीव्र रोष,
कर जावें हम दस पांच सही अब दूर दासता असन्तोष।
पीड़ित के और पराजित के फूटे वे हृदय फफोले थे,
गिर पड़े असेम्बली भवन मध्य वे नहीं अग्नि के गोले थे।
संसार बधिर, संसार मदिर उन्मद रणमत्त, स्वार्थ सेवी,
सुन पाया था कुछ कहती है, पीड़ित व्याकुल भारत देवी।
बलिहार जननि के वीर लाल, तुमसे माता का उच्च भाल,
देवी स्वतन्त्रता हो प्रसन्न, अर्पित थी सुन्दर मुण्ड माल।
है सत्य अहिंसा वन्दनीय, मानवता संतत माननीय,
तुमने मानव हो कर डाली, दानवता चंडी दंडनीय।
दिखलाया काले नागों को छेड़ना नीच दुस्साहस है,
प्राणों की आहुति देने में बढ़ता वीरों का साहस है।
असफल प्रयत्न बहु बार हुए, हुंकार वीर फुफकार किये,
रह गई दासता नागिन सी, अरमानों का संहार किये।

रावी

रावी का था कमनीय कूल, लाहौर नगर उत्साह मूल,
देवी स्वतन्त्रता आवाहन, एकत्र हुए राष्ट्रीय फूल।

लहराता था नभ में निशान, हिमगिरि के वे उत्तुंग श्रृंग,
हिम शीतल, श्वेत किरीट धरे से तपस्वियों के शान्त अंग।
था युग युग की साधना तपस्या शान्ति खड़ी थी मूर्तिमान,
सुनती थी वाणी कल्याणी भारती वीर का अभय गान।
वह अर्द्ध रात्रिका क्रान्ति काल, बीता था अति प्राचीन वर्ष,
पूरी स्वतन्त्रता लक्ष्य ध्येय, था महा सभा निश्चय सहर्ष।
नूतन सुवर्ष आशा नवीन, अभिलाषा, परिभाषा नवीन,
लेंगे अब स्वतन्त्रता लेंगे संकल्प सत्यधारी प्रवीण।
अपमान वीरता का पग पग, भारत का पद हो उपनिवेश,
होगा अब अपना मुक्त देश, होगा निश्चय स्वाधीन देश।
चिर पूज्य लवपुरी धन्य धाम, अधिवेशन सुन्दर पूर्ण काम,
था बना लाजपत राय नगर, आजादी की कुटिया ललाम।
जौहर खुल गये जवाहर के अरमान हृदय के पूरे थे,
माता स्वरूप रानी श्री मोतीलाल हर्ष से पूरे थे।
आनन्द-अश्रु बरसाती थीं, मां प्रेम-प्रसून चढ़ाती थीं,
था श्वेत-अश्व पर वीर-पुत्र जननी छातीं हुलसाती थीं।
मोती की आंखों से मोती आनन्द हर्ष से निकले थे,
कितने महान तम पिता हुए जिनके सुपुत्र यों निकले थे।
विद्वान राष्ट्रपति मोती से नर वीर जवाहर लाल आज,
लेते थे कांग्रेस कार्य-भार थे पिता पुत्र शोभित अपार।
भगवान देश में मोती से राजर्षि पिता घर घर होंवे,
नर नाहर वीर जवाहर से सुन्दर सुपूत घर घर होवें।
माता स्वरूप रानी ऐसी हों घर घर सच्ची मातायें।
बलिदान त्याग जिनका लख कर हर्षित हों जीवन यात्रायें।
भीगी निशीथिनी की सारी, अम्बर तारों की फुलवारी,
सब निर्निमेष थे देख रहे, स्वर्गीय दृश्य वह नर नारी।
भारत वीरों ने गान किया प्रिय तरल तिरंगा फहराया,
जय जय जय जय भारत स्वतन्त्रनभ मंडल में रव घहराया।
वीरों का उन्नत लाल भाल हृदयों में साहस शौर्य वीर्य,
नेत्रों में था उल्लास हास, वाणी में वाणी का विलास।
नाचे उस दिन भावुक मयूर, नाचे आजादी के माते,

नाचे रण-आनन्दी जवान आजादी के गाने गाते।
नाचे थे युवक जवाहर भी कूदे युवकों के कन्धों पर,
अफसोस आज रह जाता था शासन के बहिरों अन्धों पर।
पुलके तरुणों के अंग अंग, छाई नव जीवन की उमंग,
एकत्र वीर राष्ट्रीय गीत, आजाद तपस्वी संग संग।
बीती विभावरी गाते ही, आनन्द प्रमोद मनाते ही,
उत्पल उत्फुल्ल हुए विकसे, आनन्द उषा के आते ही।
जीवन सार्थक, यौवन, विद्या, तारुण्य धन्य कृत कृत्य आज,
नाचा ललाम प्रिय पूर्ण काम नेता नटवर आनन्द-साज।
विद्युत प्रकाश से आलोकित राष्ट्रीय पताका फहर उठी,
आजादी के गाने गाते वीरों की टोली सिहर उठी।
हो गयी धन्य रचना ललाम, रण गीत जवानों ने गाया,
आजाद वीर सैनिक दल ने उत्साह निराला दिखलाया।

रण-गीत

छब्बिस जनवरी सुनिश्चित थी, आजादी की घोषणा हुई,
अब कौन अग्रसर वेदी पर जागी थी, लोकैषणा नई।
फिर नगर नगर औ प्रान्त प्रान्त प्रिय वीर भूमि में धाम धाम,
आजादी का संकल्प हुआ, घर घर में एवं ग्राम ग्राम।
तन मन से सत्य अहिंसा का सब ने पावन व्रत मंत्र लिया,
राष्ट्रीय मुक्ति का मूलमन्त्र सानन्द सुदर्शन चक्र लिया।
बापू अधिनायक, एक छत्र उनका शासन वे हृदय-राज,
पहिनाया उनको ही सबने सुन्दर स्वदेश का भव्य ताज।
उनके सब थे, सब के वे थे, ऐसा था उत्तम अनुशासन,
उनके चलते ही होता था डगमग दुश्शासन का आसन।

वेगवन्त सन्त

वे शान्त धीर, गंभीर वीर कन्धों पर गुरु तम भार लिये,
राष्ट्रीय सन्त थे वेगवन्त, दीनों का पावन प्यार लिये।
आकुल समस्त भारत वासी प्यारी आजादी पर मचले,

प्रिय सत्य अहिंसक शूर वीर भारत में लक्ष लक्ष निकले।
दस वर्ष अहिंसा सत्य पाठ सब को बापू ने सिखलाया,
निज अग्नि परीक्षा, वस्तुपाठ देने सब विद्यार्थी निकले।
जीवन-विलास परिहास रास, आनन्द मोद में पले भले,
माता के कोमल सुमन लाल कंटक-पथ पर निकले मचले।
कवि बोले मूकों की वाणी, जागी भारत की कल्याणी,
जनता के दुख हरनेवाले युग वीर जनार्दन जन निकले।
नेत्रों में था भारती चित्र, नंगे भूखे भारत वासी,
टेढ़े मेढ़े बच्चे जिनके कृष बदन पेट भारी निकले।
कटि में कुछ चिथड़े टंगे हुए, जीवन विषाद में रंगे हुए,
घर कूकर शूकर के निवास, आशाओं के संसार जले।
ग्रामीण दुखी पीड़ित विपन्न, दुर्लभ जीवन में वस्त्र अन्न,
विकलांग, दैन्य के सांचे में उनके जीवन के पात्र ढले।
हृदयों में था उत्साह, आह स्मृति वे दारुण घटनायें,
अत्याचारी से देश पूज्य लाठी खायें मर मर जायें।
स्मृति थी, वीर शहीदों का बरसा था इतना गरम खून,
बस नरम नरम जीवन वाले रह पाये निष्क्रिय और नरम।
विस्मृति थी, प्रेम प्रेयसी की, भगिनी एवं माताओं की,
अपने सुख वैभव जीवन की, आशाओं की ममताओं की;
संकल्प सुदृढ़, स्वातन्त्र-वरण, सबके थे निश्चय अभय चरण,
निश्शस्त्र अहिंसक प्रेम अस्त्र, केवल शरण्य की गये शरण।
रोते थे प्रति दिन होते थे माता बहिनों के चीर हरण,
निकले लज्जा रक्षक मोहन भारत जननी के पीर-हरण।
थे अमर पुत्र स्वागत करते माधव सम प्रिय था महामरण,
आँसू के बल, पानी के बल, करते थे शोक समुद्र-तरण।
वे सत्य प्रेम धरने निकले, आजाद देश करने निकले
बापू के प्रिय संकेतों पर वे देश वीर मरने निकले।
कुसुमित उनके जीवन-रसाल विकसित जीवन तरु डाल डाल,
पहिनायी थी करुणा करने धर करुण रूप नव किरण माल।
सत्याग्रह समिति स्थापना थी, प्रति नगर नगर सैनिक निकले,
सुन कर रण गर्जन, अभयनाद, देहली के अधिकारी दहले।

गान्धी का अन्तिम पत्र लिए इरविंन के पास दूत पहुँचा,
सब शान्ति प्रेम की चेष्टायें, सारे उद्योग विफल निकले।
हँसती थी दारुण दानवता, मानव के कोमल भावों पर,
छिड़का जाता था रोज नमक पीड़ित गुलाम के घावों पर।
पशुबल के अभिमानी शासक, पार्थिवता के पक्के गुलाम,
कैसे समझें हैं सत्य प्रेम कल्याण शान्ति का पथ ललाम।
उनकी दाढ़ों में लगा हुआ शासित का खून उन्हें प्रिय था,
नवयुग के नूतन ईसा का सन्देश कर्णकटु अप्रिय था।
शोषण, मानवता का मर्दन, दोहन, शासित का उत्पीड़न,
परदेशी पनपे थे करते, हरते स्वदेश का जीवन धन।

अवज्ञा

आन्दोलन का आरम्भ हुआ जागरित देश की प्रज्ञा थी,
शासन से लोहा लेने को सविनय पर सुदृढ़ अवज्ञा थी।
कर दिये बिना अधिकारी को हम नमक नहीं खा सकते थे,
ऐसी थी अपनी परवशता बन्धन पर बन्धन कसते थे।
नित नमक बनाने खाने का था प्रकृति-दत्त अधिकार नहीं,
यह पराधीनता का फल था क्या होगा ऐसा और कहीं।
हम इस मिट्टी से निकले हैं इस पर अधिकार हमारा है,
सब प्रकृति प्राप्त सुविधायें हैं यह स्वर्ण स्वदेश हमारा है।
इसपर से पर देशी शासक के निष्ठुर चरण हटाना है,
अपने बल-से स्वाधीन मुक्त मानव जग में कहलाना है।
चलदिये सैकड़ों देश-वीर प्रिय सत्य अहिंसा व्रत धारे,
हो रहा नमक कानून-भंग, टूटे कानून कठिन काले।

मंगल-प्रभात

मंगल प्रभात, पावन प्रभात, आश्रम था साबरमती धन्य,
वह धर्म क्षेत्र था पुण्य क्षेत्र पृथ्वी पर उससा कौन-अन्य।
था पुण्य पुरुष उत्तम तप बल, प्रिय शान्ति अहिंसा प्रेमधवल,
पृथ्वी की मरुस्थली में था मोहन श्यामल घन धवल नवल,

जब शान्त धीर उठ पड़ा वीर मच गयी देश में शान्त क्रान्ति,
उद्भ्रान्ति भरे मानव जीवन भरना था उनमें प्रेम शान्ति।
दानवता के उपकरण कोटि, मानव मर्दन, सर्वस्व हरण,
सन्तापित जन जनके दुख से मानव ने रक्खे अभय चरण!

वैष्णव

सच्चा वैष्णव उसने जानी नंगों दीनों की कठिन पीर
उपकार-लीन, ममता बिहीन, वह निर्विकार गंभीर धीर।
मनवचन, कर्म से शान्त शुद्ध सात्विकता का सुन्दर स्वरूप,
उसके चरणों पर नत मस्तक होते थे सारे रंक भूप।
निर्भय था वह वीराग्र गण्य, आत्मा का बल, सन्तों का बल,
उसके पग धरते ही बनते थे तीर्थ क्षेत्र निर्मल-थलथल।
पुण्योदय सुन्दर उषाकाल, आश्रम के बासी उठे, जगे,
अथवा चिर निद्रित भारत के अभिमान उठे, सद्भागजगे,

प्रयाण

ऋषियों की पावन तपो भूमि पर त्याग अरुणिमा प्रगट हुई,
चहके विहंग महके प्रसून, रजनी ऊषाके निकट हुई।
गाये गीता के दिव्य श्लोक-थे पुण्य श्लोक आश्रम- वासी,
आनन्दित, अनुरागी, अशोक, थी विजयश्री उनकी दासी
मस्तक पर कुंकुम चारु तिलक, आरती हुई कलनाद हुआ,
थे आत्म प्रसादी, जगत जयी उनके चलते आह्लाद हुआ'
जाते थे वे निश्शस्त्र वीर दुश्शासन से लोहा लेने।
पूतना और मोहन प्रसंग, जगको फिर प्रेममंत्र देने।
अपना क्या था छूटा टूटा जग से नाता निज ग्राम धाम,
केवल आश्रम, उद्योग भवन, मोहन-ममता मन्दिर ललाम।
छोड़ा अपना सर्वस्य आज, आश्रम, आजादी पर छोड़ा,
जग-वैभव ममता-मोह पाश जीवन साधन से मुख मोड़ा।
यातो प्यारा सारा स्वदेश स्वाधीन मुक्त कहलावेगा,
या गान्धी का दुर्बल शरीर लहरों पर मर उतरावेगा।

नमक-चोर

चल दिये नमक के चतुर चोर अस्सी का दल मंगल यात्रा,
आजादी के लिख गये अंक, लगने को थी पूरी मात्रा।
बरसे उनके पथ में प्रसून, हरसे आनन्दित नर नारीं,
यह राजनीति में प्रेम-योग लखते उत्कंठित संसारी।
लहराया था आनन्द वेग घहराया अति चंचल समुद्र,
सन्मुख विराट मानव महान, उसका पानी विस्तार क्षुद्र।
नभ नील भरे मन में वह छवि था मन्त्र मुग्ध अति शांत मुग्ध,
लहरें थीं शान्ति धवलता की सन्तानें, निर्मल शुद्ध दुग्ध।

धरसाना

उस मोहन ने लूटा माखन वह नन्द गाँव बरसाना था,
लूटा मोहन ने नमक आज यह वीर गाँव धरसाना था।
राष्ट्रीय सरोवर की पद्मा देवी सरोजिनी पुलकित थीं,
मोहन का दिव्य प्रकाश देख,आनन्द मग्न थीं विकसित थीं।
"देखो देखो वह नमक चोर है, हृदय-चुराने वाला है,
पकड़ो पकड़ो उस बुड्ढे को आजादी का मतवाला है"।
ले गये पकड़ अत्याचारी गान्धी जी को कारागृह में,
दे गये प्राण, जागरण, ज्ञान, भारतवासी के गृह गृह में।
प्रारंभ यज्ञ, बन रहा नमक, जुट आये शत शत नर नारी,
जीवन होता चल दिये अभय थे सत्य अहिंसा व्रतधारी।
प्रति ग्राम ग्राम प्रति नगर नगर, सम्पूर्ण देश में धाम धाम,
थे तोड़ रहे कानून और शृंखल की लड़ियाँ नर 'ललाम'।

नमक

आजादी की ज्वाला प्रकटी, जीवन के पात्र चढ़े उस पर,
थे नमक बनाकर मातृ भूमि का नमक अदा कर देते नर।
तोला तोला माशा माशा सब लोग नमक वह खाते थे,
खाकर धरणी का नमक अग्रणी सेवक जन बन जाते थे।

निज नमक बनाना खाना भी अपराध, दासता का फल था,
प्राणों के बल लोहा लेना, मरना, मिटना अपना बल था।
जल उठी दमन की घोर अग्नि, जल उठी शमा परवानों की,
निकले परवाने दीवाने, परवाह किसे थी प्राणों की।

कारागार

दस वर्ष बाद फिर शासक के दारुण तम कारागार खुले,
आजादी देवी के मन्दिर के रुद्ध विशाल कपाट खुले।
प्रत्येक प्रान्त के नगर नगर के नेता थे कारावासी,
कारागृह सुन्दर पुण्य धाम, शुभ तीर्थ क्षेत्र मथुरा काशी।
मंगल पथ के सुंदर यात्री अबलक्ष लक्ष निर्भय निकले,
कर्त्तव्य पन्थ कंटक प्रस्तर, बाधक अनेक उभरे निकले।
जनता जागृत थी, अटक कटक तक आन्दोलन की धूम मची,
आहुतियां लेकर वीर चले, सुन्दर बलिवेदी गयी रची।
नौकर शाही ने दमन किया या राष्ट्र यज्ञ में घृत डाला,
उसके पापों का फल प्रकटा था धूम मेघ केवल काला।
प्रकटी थीं अग्नि शिखायें वे बलिदान त्याग की लाल लाल,
आहुति होती थी मिटती थी दासता और पशुता कराल।
उन्नत तपस्वियों का मस्तक, उन्नत, जननी का दिव्य भाल,
गाया वीरों ने अभय गान, आया स्वदेश का स्वर्ण काल।
प्रायः हड़तालें होती थीं, प्रति दिवस सभायें होती थीं,
राष्ट्रीय पर्व था, पुण्य कुम्भ, युगधर्म क्रियायें होती थीं।
थे बन्द विदेशी कारबार व्यापार विदेशी वस्त्र मिटा,
पैंसठ करोड़ धन घर में था, वह लूट पाट का रोग हटा।
धरना देते थे नर नारी बालक बूढ़े समझाते थे,
लवकुश से सुन्दर राम पुत्र थे देश भक्ति पद गाते थे।
कुछ रहे हठीले गर्वीले, छाती पर चढ़ कर जाते थे,
अपनी कठोरता से सब को कोमलता पाठ पढ़ाते थे।
पढ़ते थे वे कोमल बालक छिलते उनके कोमल शरीर,
जन-मार्ग घसीटे जाते थे ध्रुव से वे निश्चल वीर धीर।

सिक्ख-वीर

विस्तृत मैदान बम्बई का नर लक्ष लक्ष एकत्र हुए,
कानून अवज्ञा करने को निश्शस्त्र शूर एकत्र हुए!
थे वीर सिक्ख निज खड्ग लिए सैनिक प्रसिद्ध, दृढ़ हृदय किये,
सब वीर अहिंसक सैनिक थे, करुणा से कोमल हृदय हुए।
लाठी, शासक दल की आज्ञा, वे वीर शान्त दृढ़ चरण हुए,
बह गयी रक्त धारा शिर से, गिर गये रक्त स्नान किए।
अब भी मुख पर विद्वेष नहीं, अत्याचारी से द्वेष नहीं,
तन पर था इतना क्लेश किन्तु मन में विकार का लेश नहीं।
हँसते हँसते आनन्द मग्न गिर गये ओस से नम्र वीर,
इस शान्ति पूर्ण अनुपम कृति से थे द्रवित हृदय सब धीर वीर।
आहत 'स्ट्रेचर' पर जाते, बढ़ने वाले आगे आते,
इस कष्ट-सहन की लीला से मानव-मन थे हिलते जाते।
करती थी जनता हर्षनाद, जयकार वीर का होता था,
आहत का एवं पीड़ित का आदर हृदयों में होता था।
लाठी बरसाने वालों के कहते थे लज्जित नेत्र यही,
प्रिय सत्य अहिंसा के सैनिक हैं धीर सूरमा वीर यही।

विजयी

ये विजयी हैं इनका शासन सब के मन आसन पर होगा,
दिन दिन दुर्बल हो शक्ति हीन यह पापी दुश्शासन होगा।
इनका चरित्र उज्वल पवित्र, मानव प्रेमी विश्वास मूर्ति,
उत्साह पुंज, बल में असीम, नम्रता रूप नव ज्ञान स्फूर्ति।
अत्यन्त कुटिल के भी मनमें कुछ सरल साधुता रहती है,
दानव के मन में भी सन्तत मानवता सोती रहती है।
जीवन-प्रतीक ये सत्य-सन्ध मानवता पाठ पढ़ायेंगे,
अपने उज्वल बलिदानों से दानवता दूर भगायेंगे।
ये सत्य अहिंसा के सैनिक, वत्सल कोमल तम नम्र हृदय,
जीतेंगे विश्व अजात-शत्रु, निस्वार्थ वीर ज्ञानी निर्भय।

घातक से विद्वेषी से भी इनका है सुन्दर प्रेम नेम,
मानवता में देवत्व लिये ये करते जग का कुशल क्षेम।
पशु बल से तन जीता जाता, मन प्रेम सहित जीता जाता,
यह प्रेम अस्त्र सुन्दर अमोघ है कभी नहीं निष्फल जाता।
कोमल बालक की मन्दहंसी कर देती क्रोधी वीर शान्त,
कोमल प्रेमी नेमी सेवक कर देते विद्वेषी प्रशान्त।
करना होगा विश्वास अटल, उघरैंगे तब विज्ञान पटल,
भरना होगा नव ज्ञान सरल, मानव तब होंगे शांत सरल।
भूलों को पथ दिखलाना है, जल कर प्रकाश फैलाना है,
इन सत्य अहिंसक वीरों से नूतन युग जग में लाना हैं।

दमन

सार्वजनिक सभा का था निषेध, गोलियां चलायी जाती थीं,
उस ओर शस्त्र धारी सैनिक, इस ओर अहिंसक छाती थीं।
लाठी की वर्षा होती थी जनसेवक निर्भय सहते थे,
इन दारुण अत्याचारों से दुख दुर्ग दासता ढहते थे।
बढ़ती जाती पग पग जनता, सुन्दर सात्विकता सेती थी,
निज शान्त मौन बलिदानों से मानसिक विजय कर लेती थी।
बढ़ती उस ओर चली पशुता, निर्दयता खुल कर खेली थी,
नंगी नितान्त नौकर शाही, लज्जा उतार कर ले ली थी।
हिलते गलते पाषाण-हृदय हुंकारों से बलिदानों से,
विनयी का नीरव कष्ट सहन डुलते मन मूक पुकारों से।

तकली

महिलाओं के सुन्दर जलूस सब शान्त मौन निर्भय जातीं,
तकली का प्रिय प्रेमास्त्र लिए कानून भंग करती जातीं।
प्रिय पयस्विनी धीरे-धीरे मन पथ पर श्री बहती जातीं,
निज मूक हूक नागरिकों के वक्षस्थल में भरती जातीं।
खादी की उज्वल साड़ी में जीवन-गंगा लहराती थीं,

मस्तक पर कुंकुम की छवि थी, वे शान्ति सुधा सरसाती थीं।
महिलायें या सुर बालायें नवदीप शिखायें, दुर्गायें,
वे रहीं विजयिनी मातृ शक्ति गौरव लतिकायें ललनायें।
अबला या सौम्या शक्ति धरे वे सभी अलौकिक अबलायें,
जनके चलते दुश्शासन के आसन डग-मग हो हिल जायें।
थी धन्य भूमि पड़ गये चरण मंगलमय एवं अभय करण,
वे पशु बल से रण ठाने थीं उनका व्रत था स्वातन्त्र्य-वरण।

जय-पथ

जय जय थी उनके पग पग पर, सब के मस्तक उनके पग पर,
बाधायें भी सुविधायें थीं मदु मंगल मय उनके पथ पर।
स्वर्गीय प्रेम का विमल दृश्य, अद्भुत अपूर्व इतिहास नवल,
शासन की सुदृढ़ अवज्ञा थी, महिलाओं के संकल्प विमल।
जीवन के शान्त क्षणों में कुछ साधना-अहिंसा होतीं थी,
जब दानवता श्रम शिथिल हुई सी रहती अथवा सोती थी।
जलती दानवता की ज्वाला, संहार विनाश जहाँ क्रीड़ा,
लख कर पशुता के क्रूर कर्म, पीड़ा को होती थी व्रीड़ा।
हिंसा का वातावरण जहां, शिव सत्य प्रेम आचरण वहां,
ऐसा सात्विक तम युद्ध शान्त आन्दोलन कब था और कहां।

राज्य भंग

टूटे शासन के क्रूर नियम, निश्चय ही यह था राज्य भंग,
जन-जीवन की सरिता लहरी, लहरी उमंग जीवन-तरंग।
जन कोटि कोटि की अभिलाषा, आशाओं की राष्ट्रीय सभा,
इस वार अनियमित वर्जित थी, व्याख्यान और सार्वजनिक सभा।
बम्बई और शोलापुर में भीषण गोली के काण्ड हुए,
निरुपद्रव जनता-रक्त पूर्ण शासन सत्ता के भाण्ड हुए।
लवणासुर पर आक्रमण हुए मारण के मोहन मन्त्र नये,

अपना अधिकार जमाने को धरसाने लाखों वीर गये।
सैनिक रक्षक थे शस्त्र लिये, शासन का बल अभिमान लिये,
जाते थे नमक लूटने नर हाथों में अपने प्राण लिये।
रोके जाते मारे जाते वे नमक-लुटेरे देश-वीर,
इन मारों से, व्यापारों से, मिटती थी मां की व्यथा पीर।
आजादी की पहली मंजिल, अपनी चीजों की आजादी,
घर घर आजादी की शादी, मिट जाय तबाही बरबादी।
कोमल सरोजिनी आतप में बैठी बैठी मुसकाती थीं,
मंजुल विनोदिनी मरुथल में करुणा जान्हवी बहाती थीं।
मानवता द्रवी भूत होती, दानवता जड़ीं-भूत होती.
बिखरे थे धूलि धूसरित थे जनता की आंखों के मोती।
पिल ही पड़ने थे नमक चोर सैनिक बल छिन्न भिन्न होता,
लेकर ही नमक मानते थे, डंडा प्रहार उन पर होता।

संकल्प

मुट्ठी में कस कर बन्द किये थे नमक छुड़ाया जाता था,
कर में कीले-कांटे, अंकुश अति तीव्र चुभाया जाता था।
बह जाती कर से रुधिर धार वे दृढ़ संकल्प मनस्वी थे,
वे नमक चोर थे या सुन्दर भारत के तरुण तपस्वी थे।
दृढ़ निश्चय के सम्मुख हारी, पशुता, टूटे थे क्रूर नियम,
क्षियी विजयी, जीता मानव, जीता था सत्य और संयम।

ससुराल

विकसित थीं फिर कारासर में देवी सरोजिनी मोदमयी,
बूढ़े तैयब को पुनः मिली कारागृह की ससुराल नयी।
पेशावर, बीर सैनिकों की जागी स्वदेश की भक्ति, शक्ति,
निश्शस्त्र निरीह निरी जनता, दूसरी ओर दानवी शक्ति।
अपराध सभा करना कहना अपना दुख या अपना बिचार,
गोली की आज्ञा थी भीषण, फैला था ऐसा अनाचार।

चन्दनसिंह

मानव था चन्दनसिंह वीर, गढ़वाली सैनिक शार्दूल,
मानवता की गंगा लहरी, करुणा का कोमल कलित कूल।
मानव, फिर निरुपद्रव मानव, करता मानवता की पुकार,
कोई मानव हो क्या करता, उस पर गोली का पशु-प्रहार।
सेनापति मारो कहता था, अन्तर से मानव कहता था,
मर गया निठुर दानव कब का जो मानवता को दलता था।
मानव के सम्मुख मानव है, भाई के सम्मुख भाई है,
परदेशी शासक! राम राम, मानव से प्रेम सगाई है।
गढ़वाली तीव्र अवज्ञा का अपराधी, फौजी आज्ञा थी,
वह देश वीर निर्वासित था, काले पानी की आज्ञा थी।
बढ़ गया जवानों का पानी, बढ़ गयी देश में कुरबानी,
बढ़ गई दमन कारी ज्वाला, चढ़ रहा शूरता पर पानी।
जेलों का भय का भूत भगा लाठी गोली का भय छूटा
पशुता का बल हारने लगा, शासन का पाप-कलश फूटा।

वानर-सेना

वानर सेना के बालक गण निर्भय ललकारा करते थे,
अत्याचारी का सर्वनाश निर्द्वन्द्व पुकारा करते थे।
डंडे पड़ते, गुंडे बढ़ते, वे क्रीतदास देश-द्रोही,
खाकर स्वदेश का नमक हुए जो पाप-पंथ के अवरोही।
नेतागण कारावासी थे सन्चालक रण का जन जन था,
महिलायें प्रमुख भाग लेतीं, गान्धी जी का ऐसा रण था।

स्वरूप रानी

वृद्धा तरुणों का जोश लिए आयीं, आजादी पर मचलीं,
तोड़ने राज-आज्ञा-कठोर कोमल स्वरूप रानी निकलीं।
सुन्दर स्वदेश का प्रेम लिए, महिलाओं की जय-यात्रा थी,

पिघले पत्थर से कठिन हृदय इतनी करुणा की मात्रा थी।
माता जिसने सानन्द दिया नर नाहर पुत्र जवाहर सा,
आनन्द भवन को छोड़ बनाये था जो कारागृह घर सा।
सौभाग्य, प्राण, सर्वस्व दिया जिसने अपना मानस मोती,
जिस तपस्विनी के श्वेत केश पर थी उत्तम उज्वल धोती।
निर्भीक सिंहिनी वीर प्रसविनी, कैसे महलों में सोती,
राजाज्ञा का करने विरोध, कैसे न अग्रगामिनि होती।
आये थे सम्मुख घुड़सवार, रोका जलूस उत्साह बढ़ा,
डंडों की वर्षा होते ही, जीवन का वेग, प्रवाह चढ़ा।
थी इतनी क्रूर कठोर हुई नौकर शाही प्रबला, अज्ञा,
टूटी शासन थी क्रूराज्ञा क्या शेष रही शासन-प्रज्ञा।
बर्बर थे निष्ठुर हृदय हीन पामर वे सैनिक अविचारी,
पशुता के गुंड़े, मार रहे डंड़े, वह थी वृद्धा नारी।
माता नर वीर जवाहर की, जननी सैकड़ों जवानों की,
माता जिसका उर था विशाल थी चिता भस्म अरमानों की।
जीती मां जननी दुर्गा की कोमल तम मातृशक्ति जीती,
हारा निशुंभ पशु बल, दुखकी काली निशीथेनी थी बीती।

कलकत्ता

कांग्रेस गैर कानूनी थी निश्चित था अधिवेशन करना,
कलकत्ता में सत्याग्रहियों को नियम तोड़ कर था जुटना।
दिखलाना था पशु बल द्वारा हैं हृदय नहीं जीते जाते,
पशुता के दैन्य दासता के दिन दूर हुए बीते जाते।
तरुणों की नव अभिलाषा है, जीवन की नव परिभाषा है;
अपने भावों की भाषा है, कांग्रेस स्वदेश की आशा है।
उस महा सभा अधिवेशन में आये उत्सव करने वाले,
लाठी गोली की वर्षा में जम कर बैठे मरने वाले।
हारी नंगी नौकर शाही जागृत जनमत की विजय हुई,
कांग्रेस शुभ्र बलिदानों से यों अमर सदा को, अभय हुई।
थी सभानेत्री राष्ट्रीय सरवर की नलिनी सेन गुप्त,

जागा था इन ज्वालाओं से महिलाओं से निज देश सुप्त।
श्री मालवीय जी सौम्य रूप अति शान्त देश के माननीय,
वे ऋषिवर वृद्ध तपस्वी थे अति वन्दनीय अति पूजनीय।
उनको स्थान मिला शासन की कठिन कर्कशा कारामें,
स्नान किया करते महान, बलिदान त्याग की धारामे।
निस्सीम निरंकुशता, पशुता, दानवता का यह है प्रमाण,
कारागृह में आश्रय पाते श्री मालवीय के व्यथित प्राण।
दार्शनिक, विचारक, नीतिवान, वाग्मी स्वराष्ट्र के सुमनलाल,
कारागृह में डाले जाते ऐसी शासन सत्ता कराल।
यह है भौतिक विज्ञान-वाद, उसका दूषित कलुषित प्रसाद,
मानव दानव वन कर करता जग में नृशंस दूषित प्रमाद।
ऋषियों की तपो भूमि जागी, जग को मग दिखलाते कुमार,
जीवन है केवल भोग नहीं, बलिदान त्याग है सत्य सार।
जीवन की इन आहुतियों से होता स्वदेश है अजर अमर,
होती प्रशस्त बलिदानों से, विख्यात विश्व कल्याण डगर।

बारडोली

करबन्दी की तैयारी थी, बरडोली से दुनियां डोली,
दृढ़ निश्चय था, सच्चा प्रण था, बरसे लाठी बरसे गोली।
जो शासन केवल भारभूत, करतूत निरी जिसकी अपून,
उसको कर देने वाले अब होंगे न भारती वीर पूत।
नंगे भूखे निर्वल किसान, उनके दुख शासक को न ध्यान,
उनके श्रम विन्दु बनाते हैं दुनियां के सव वैभव महान।
श्रम फल मिलता दुतकार मार, दिन दिन शासन के अनाचार,
उनके पैसों से फैला है दुनियां का सारा कारबार।
उनके धन से नौकर पलते चलते शासन के यंत्र तंत्र,
उनको ही पीसा करता है निर्दय परदेशी राज तंत्र।
उनके धन से गोली चलती, उनके धन से गोली बनती,
इन भोलों के ही श्रम फल से चतुरों की दुनियां है चलती।
वे शासन के आधार स्तंभ बापू ने उनको बतलाया,

है सत्य अहिंसा बल अमोघ, जन बल एकत्र हुआ आया।
पापी परदेशी शासन को देना है एक छदाम नहीं,
सब शान्त युद्ध के सैनिक हैं, हिंसा है अपना काम नहीं।
आये कुछ टुकड़ों के गुलाम, भूले वे अपना नाम धाम,
दानव के दारुण क्रीतदास, भारत के कुछ मानव 'ललाम'।
वे मूर्ख न इतना जान सके, उनके मालिक नंगे किसान,
नौकर शाही के दुष्ट दूत दौड़े लाठी को तान तान।
उनको इतना आया न ध्यान, इतना भी उनको नहीं ज्ञान,
ये आजादी के दीवाने हैं भारतीय भाई महान।
आजादी जिसमें जन जन का कल्याण और सर्वोदय है,
आजादी जिसके आते ही होता सब का भाग्योदय है।
ये पुण्य-यज्ञ के होता हैं, जीवन-सर्वस्व मिटाये हैं,
इन निश्शस्त्रों पर शस्त्र लिये क्यों भारतीय ही आये हैं।
प्रारम्भ हो गयी लूट पाट, कैसा उदार शासन विराट,
तैमूर लंग ये लूट रहे, चकिया चूल्हा या खाट पाट।
पशु छीने लूटा अन्न वस्त्र, फोड़े बरतन, तोड़े किवाड़,
ले चले माल असबाब सभी घर कर डाला बिलकुल उजाड़।
कैसी थी उनकी सहन शक्ति, कितनी सुन्दर संघटन शक्ति
वे शान्त तपस्वी सहते थे, प्रकटी पूरी आसुरी शक्ति।
गांवों में जब नीलाम हुआ निकला न एक भी पामर नर,
जो लेता वह नीलाम वहां सब भारतीय थे वीर प्रवर।
सामान उठाने को गाड़ी, मजदूर किसान नहीं मिलते,
शासन के छकड़े बिना प्रजा गति हीन हुए पग पग रुकते।
महमूद गजनवी, नादिर को लज्जित करने वाले डाकू,
पत्थर से उनके कठिन हृदय, वे सैनिक थे अथवा डाकू।
अति सभ्य और विज्ञानी की करतूतें हैं केवल काली,
निश्शस्त्र किसानों के घर में निर्दय ने आग लगा डाली।
जल गये आह, विश्राम भवन, छोटे छोटे आनन्द भवन,
जिसमें श्रमशिथिल शरीर हुआ करता श्रमजीवी श्रान्त रमण।
नंगे गुप्तांग दिखाते थे हैवान निरे सैनिक पठान,
महिलायें आंखें मींच मींच करतीं द्रोपदी समान ध्यान।

घन गया, लुटेरों ने लूटा सर्वस्व शेष केवल तन था,
कल्याणी दुख की चिर संगिनि, सन्तान दुखीपीड़ित मन था।
कन्या छोटी थी निरपराध पशुओं ने निर्दय हो मारा,
कर लेने को ऊधम ठाना, उत्पात भयंकर कर डाला।
कुछ रुपयों के बदले लूटे सामान महान, किसानों के,
प्रण के पक्के मरदानों के, आजादी के दीवानों के।
चल दिये विरागी सन्यासी अपना जीवन सर्वस्व दिये,
राणाप्रताप के अनुगामी देखो जंगल की राह लिये।

नील

सन सत्तावन का गदर हुआ आजादी का पहला प्रयास,
हो सका न अपनी धरणी से परदेशी शासन सर्वनाश।
प्रिय बसुन्धरा परशेष रहे अत्याचारों के क्रूर चिन्ह,
पैदा करते थे वीरों के उर में दाहकता तीव्र वन्हि।
था नील निरा पामर नृशंस जिसने थे अत्याचार किये,
विप्लव में दिन दिन होते थे जिसके ऊधम अन्याय नये।
उसकी प्रस्तर की अधम मूर्ति, बतलाती थी निज पाप शाप,
मद्रास नगर में खड़ी खड़ी कहती थीं निज शासन-प्रमाद।
भारती सजग सन्तानों ने, उसके कुत्सित व्यापारों पर,
मिट्टी के लोंदे फेंक फेंक मारे अग्रणी इशारों पर।
शासन-पादप छाँटे जाते, या ताड़ी तरु काटे जाते,
मानवता के मीठे प्रसाद प्रिय मुक्त हस्त बांटे जाते।

गोल

पेशावर शोलापुर और चटगाँव नगर गोली बरसी,
बम्बई तथैव बनारस में घन दमन घटा बरसी सरसी।
दुश्शासन में महिलाओं पर होता था दारुण अनाचार,
शासन की काली करतूतें, सब ओर पाप के समाचार।
जनता की दृढ़ता बढ़ती थी, उस ओर निरंकुशता बढ़ती,
प्यारी आजादी की लतिका बलिदान भूमि ऊपर चढ़ती।

धरना

स्वर्णिम अंकों में अंकनीय, स्वर्णिम युग की थीं घटनायें,
वीरता पूर्ण नर पुंगव थे धीरता धरे थीं महिलायें।
बम्बई नगर था वीर बाल कर बैठा था कैसा कमाल,
'मैं यहां नहीं बिकने दूंगा परदेशी कपड़ा और माल।
लारी में कपड़ा भरे हुए, लोभी व्यापारी पुलिस लिये,
बालक लेटा धरना देता था अपना दृढ़तम हृदय लिये।
निष्ठुर था लोभी राष्ट्र-राहु, लारी छाती पर चलवा दी,
वह वीर अमर पर परदेशी की कबर उसी दिन खुदवा दी।

काशी

बनता था नमक, टूटता था बर्बर शासन का क्रूर नियम,
लाखों की भीड़ अहिंसक थी, बापू की आज्ञा पर संयम।
रस्सी से पुलिस खींचती थी, था नमक भरा जलता कड़ाह,
हाथों से हीरालाल धरे, काशी की जनता की कराह।
रह गयी शेष करकी हड्डी, जल गया हाथ नर नाहर का,
छोड़ी न कड़ाही औ दृढ़ता, दिखलाया ऐसा जौहर था।
जल गये हाथ, झुलसी उँगली, पकड़े था दृढ़ता व्रतधारी,
डटना, मरना, संकट सहना यों सीख रहे थे नर नारी।

जेल

जेलों में बर्बरता, पशुता के नग्न नृत्य होते रहते,
सत्याग्रह व्रत के शान्त सन्त शत शत संकट सहते रहते।
बैठो जोड़े जोड़े आज्ञा, उल्लंघन के दोषी बन्दी,
डंडे थप्पड़ की मारों से पीड़ित थे काशी के बन्दी।

रमाकान्त

उठ गये पद्म पड़ते डंडे, चोटों से चकनाचूर हुआ,
पापी दल था अति क्रूर हुआ, श्री रमाकान्त नर शूर हुआ।

मस्तिष्क फटा सा जाता था, वृश्चिक-दंशन की पीड़ा थी,
माता के कोमल लालों पर कर्कशता की यह क्रीड़ा थी।
रोया चिल्लाया था बन्दी, बैरक में नम्बरदार उठे,
मुँह बन्द किया यमदूतों ने क्रूरता पूर्ण व्यवहार किये।
साहब के सम्मुख पेशी थी, वह नर पशु पामर भारतीय,
जिसका अन्तर था विजातीय जिसका शरीर था भारतीय।
मतिभंगा खड़ी हथकड़ी थी दो क्रूर सजायें निरपराध,
तनहाई में ला बन्द किया पूरी कर ली पाशविक साध।
थर थर कांपा पीड़ित बन्दी कष्टों ने उसको त्रस्त किया,
खटमल मच्छर के दंशन ने उसका मन अस्त व्यस्त किया।
हाथों में खड़ी हथकड़ी थी हा, हाथ कहां से हिलपाते,
पैरों में मतिभंगा डाला, कैसे पग भी हिलडुल पाते।
लघुशंका कैसे हो, व्याकुलता वृद्धि त्रस्त विक्षुब्ध हुआ,
बह गई कष्ट से स्वेदधार बन्दी निस्वन निस्तब्ध हुआ।
संयोग आ गया जिलाधीश वह गोरा था एवं मानव,
स्वाधीन देश का वासी था बन सका नहीं पूरा दानव।
बन्दी को आफिस बुलवाया, अपराध सुना आश्चर्य किया,
इस क्रूर दंड पर साहब को फटकारा और सचेत किया।
जीते अनुपम साहसी वीर काशी वासी, श्री रमाकान्त,
स्वर्णांकों में है अंकनीय यह कष्ट सहन वृत्तान्त शान्त।

इनक़लाब

था इनकलाब का नारा ही अपराध, मिले थे कठिन दंड,
बेंतों की तख्ती बनी अहो शूरता वीरता माप दंड।
पड़ते थे तड़ तड़ तेज बेंत बन्दी करते निर्भय पुकार,
चिरक्रान्ति अमर, बलिदान अमर, कहते थे चिरजीवी कुमार।
आहत थे खून सने लथ पथ, निर्भीक अविचलित थे अशंक,
लिखते थे वे नरवीर रुधिर से भारत से सौभाग्य अङ्क।
चक्की की कठिन मशक्कत तो वे झेल खेल में जाते थे,
बेतों की तख्ती पर चढ़ कर भारत मां की जय गाते थे।

मिट्टी वाली सूखी रोटी कारा में बन्दी खाते थे,
गाली, प्रति दिन थी मार पीट वे शान्त धीर सह जाते थे।
संकट का कटक अपार रहा, वीरो की अग्नि परीक्षा थी,
थे अटक कटक तक अचल धीर, गांधी की ऐसी दीक्षा थी।

जितेन्द्र

अनशन-शैया पर भीष्म तुल्य संकल्प सुदृढ़ श्री दास वीर,
बन्दी जीवन, यातना-विपुल उर में थी मानव व्यथा पीर।
पशु से मानव मर्दित होते, पीड़ित नर अपकर्षित होते,
मानव की दुख पीड़ाओं पर क्या मानव आकर्षित होते।
यदि प्राण दान, जीवन प्रदान करते न जितेन्द्र दास अपना,
मानवता सद् व्यवहार सदा कारागृह में रहते सपना।
तिल तिल घुल घुल दे रक्तदान सींचा तरुवर मानवता का,
तिरसठ दिन में स्वर्गीय हुआ था पूज्य पाद नर जनता का।
श्रद्धाञ्जलिके देने वाले अन्तिम दर्शन करने वाले,
कहते थे दास, स्वतन्त्र धन्य ! मानवता पर मरने वाले।
नर लक्ष लक्ष वक्षस्थल में भर गई भावना त्यागमयी,
उर्वरा हुई बलिदानों से प्रिय वसुन्धरा अनुराग मयी।
बन्दी का श्रेणी-करण हुआ कर्कशता का अपहरण हुआ,
सन्तापों से सन्तरण हुआ, सार्थक जितेन्द्र का मरण हुआ।

महोबा

प्रख्यात महोबा वीर भूमि आल्हा ऊदल की समर भूमि,
रण के आनन्दी वीरों की क्षत्रिय शूरों की अमर भूमि।
विन्ध्याचल की सुन्दर श्रेणी, निर्झरनिकुञ्ज पादप-ललाम,
आतिथ्य-धाम रम रहे जहां, कुछ दिवस विरक्त रहीम राम।
कल्लोलित कीर्ति-सरोवर है, विकसे मधुमय सुन्दर सरोज,
कल्याण सरोवर, मदन ताल, क्रीड़ा करते मञ्जुल मनोज।
कितने वीरों का यश-पराग परिपूरित जलथल शौर्य ओज,
कितना गौरव है गुप्त सुप्त वैभव अब भी है शेष खोज।

शत्रुघ्न सिंह अग्रणी वीर, कवि कर्मवीर बालेन्दु धीर,
रानी राजेन्द्र कुमारी थीं आन्दोलन की नेत्री सधीर।
कारावासी थे कर्मवीर, बलिदान भावना अकथनीय,
जागरण पूर्ण बुन्देलखण्ड, वह वीर भूमि है बन्दनीय।
विकसित अपना जीवन-प्रसून तारुण्य पूर्ण हर्षित ललाम,
कंटकारण्य उत्तीर्ण पन्थ, जीवन का यात्री पूर्ण काम।
सूखे सरवर का मृदु मृणाल, करुणा की पावन वृद्धि हुई,
आकंठ नीर, उत्फुल्ल पद्म, सौरभ पराग की सृष्टि हुई।
जगदीश्वर की अनुकम्पा से संघर्ष विषम तम पन्थ पार,
जीवन यात्रा का राज मार्ग नत शीश पांथ उपकार भार।
अन्तर के प्रेरक इष्टदेव-प्रेरणा, परिश्रम सानुकूल,
झंझा हिलोर बाधा व्यतीत, जीवन की तरणी लगी कूल।
मां का प्रसून, मां के चरणों पर चढ़ने का सौभाग्य हर्ष,
आया अपना भी स्वर्ण योग, पुण्योदय का वह धन्यवर्ष।
सक्रिय दर्शक था राजनीति का केन्द्र उस समय कानपूर,
देवी सरोजिनी विकसित थीं कांग्रेस अधिवेशन कानपूर।
ऐसी चुनाव की कींच मची, फँस गये केशरी भी अपने,
सहयोग, एकता, एक कर्म हो गये देश भर में सपने।
हारा पशु बल छलबल, जीता जनमत जयका था श्री गणेश,
मोती का पानी बना रहा, जीता शंकर, जीता गणेश।
माता का लाल दुलारा था, प्यारा भोला मानव गणेश,
उसके चरणों के निकट बैठ कर पाया था कुछ श्री गणेश।
कोमलता की परिपुष्टि हुई, भावुकता की सन्तुष्टि हुई,
परमार्थ, प्रेम मय जीवन की सात्विकता अपनी इष्ट हुई।
आजाद मन-चले, शुक्ल वीर, मां के सच्चे हीरे शोभन,
चरणों की सेवा का अवसर, उत्कर्ष पूर्ण जीवन दर्शन।
विन्ध्या के सुन्दर गिरि कानन, आनन्द पूर्ण स्वाधीन भ्रमण,
उन्मुक्त वायु, उन्मुक्त गगन, शिव शान्त भाव सर्वदा रमण।
मन सघन भाव का नीरद था जल भार कहीं बरसे सरसे,
जिस बसुधा का विकसित प्रसून उस पर बरसे हरसे हुलसे।
जीवन की गंगा का बहाव, था कल्लोलित गंभीर शान्त,

मुसकाते थे नव चारु चन्द्र भावों के कोमल करुण कान्त ।
गिरि ऊपर सुन्दर स्वच्छ शिला अध्ययन, ज्ञान-बर्द्धन, दर्शन,
कैसे सुन्दर स्वर्गीय सखा मेरे गुरु थे कुंजित कानन ।
गिरि शिषर शान्तस्वर्गीय छटा नव वरद जलद हिलमिल आते,
चातक, मयूर, कोकिल विहंग आनन्द गान गाते जाते ।
धरणी की साड़ी हरीहरी, सुन्दर फूलों से जड़ी कढ़ी,
निर्भ्रान्त शान्त एकान्त बनी थी बनस्थली में मञ्जु मढ़ी ।
सरवर सरोज से भरे हुये रक्खे हों जैसे दुग्ध पात्र,
रह सकी वन-श्री अमल अक्षत, कर सका न कोई मलिनगात्र ।

बुन्देले

बुन्देलों की वीरता कीर्त्ति कण-कण दल दल में भरी हुई,
उनकी गौरव महिमा महान शिषरों के ऊपर धरी हुई ।
बापू का रण आह्वान सुना, आये बुन्देले शूर वीर,
कारावासी थे अनुगामी गान्धी जी के गंभीर धीर ।
आन्दोलन के सन्चालन का मेरे शिर पर दायित्व भार,
पाया प्रिय सेवा का अवसर, आया निरस्त्र व्रतप्रेमधार ।
ले चुका बहुत श्रीराम नाम करना था उनका आज काम,
मानव की सेवा मुक्ति हेतु लग सका धन्य मानव ललाम ।
सुन्दर जीवन का आयोजन, मेरे धन मेरे करुण भाव,
दो पग सन्तों के साथ-साथ, जीवन की गंगा का बहाव ।
वीरों के अद्भुत वीर कर्म, जागा, जागा बुन्देलखण्ड,
गान्धी के अनुयायी अनेक, बलिदान त्याग उनका अखण्ड ।
बुन्देलों की पवित्र धरणी, गूंजा गान्धी का अभय नाद,
जन-पथ घर घर पर होता था निर्भीक और मंगल-निनाद ।
खादी का शुभ उत्पत्ति केन्द्र सब के तन पर शुभ खादी थी,
सब के तन उज्वल शान्त कान्त, मन में पूरी आजादी थी ।
थे वस्त्र विदेशी व्यापारी, उनकी दूकानों पर धरना,
'आजाद' महोबा का जवान, उसकी हिम्मत का क्या कहना ।
सब को समझाता हाथ जोड़, था उग्ररूप, अब विनयी था,

गान्धी का सैनिक शान्त धीर, निज कष्ट सहन से विजयी था।

आते शराब लेने वाले वह पैर पकड़ समझाता था,
पैरों पर टोपी रख देता, पूरी नम्रता दिखाता था।

गर्वीले और हठीले कुछ वह पृथ्वी पर पड़ जाता था,
लेने शराब अविवेकी दल छाती पर चढ़ कर जाता था।

वह रहा एक नर भृत्य, जहां पर न्याय नीति नाटक होता,
है जहां मुकदमा वाजी में अज्ञानी अपना धन खोता।

उसकी रिश्वत थी मनमानी, जीवन की अधम कमाई थी,
उससे पालित पोषित शरीर मन जमी क्षुद्रता काई थी।

कुल पहाड़

सामाजिक पूरा वहिष्कार था एक हो गया कुल पहाड़,
सब राज कर्मचारी हारे, पा सका न देश द्रोह आड़।

पांडव जन की अज्ञात भूमि सम्राट यशस्वी था विराट,
कैसे न अग्रणी हो आता दिखलाता अपना ठाठ राठ।

बाँधा शिशु अपनी पीठ अश्व पर कूद चढ़ीं आगे आईं,
स्मृति पुनीत रणहेतु चलीं, चिर बन्दनीय लक्ष्मी बाई।

नूतन अनुपम, आधुनिक दृश्य, गान्धी की दुर्गा सौम्य रूप,
गोदी में प्यारा लाल लिये राजेन्द्रकुमारी दिव्य रूप।

बढ़ रही पुलिस डंडा ताने रानी थी अपना प्रण ठाने,
मिट जाये मेरा लाल प्राण, हम पैर हटाना क्या जाने।

क्षत्राणी वीर सिंहिनी की गर्जना सुनी शासक सहमें,
स्वाधीन भावना वीरों की, कर सकता कौन गुलाम हमें।

मीलों घुटनों तक पानी में जाती थी महलों की रानी,
गोदी में अपना लाल लिए, दिन दिन बढ़ता उसका पानी।

ज्वाला नव शक्ति प्रलयिनी थी, वह शान्ति विजयिनी कल्याणी,
नर होते थे पानी पानी, घर करती थी उसकी वाणी।

तीज

जुट आये शतशत बुन्देले, उत्सव ले आयी तीज धन्य,
नूतन इतिहास रचा जाता, था कीर्ति-सरोवर कूल धन्य।
आल्हा-ऊदल थे साधु वेश, पूजी भगिनी ने वीर भुजा,
जो बहिनों की रक्षा करती, चाहिये वहाँ थी वीर भुजा।
ले तीक्ष्ण खड्ग क्षत्रिय जूझे थे बहिनो की ललकारों पर,
आये नर नारी पुनः आज माता की मूक पुकारों पर।
लहराता पद्म-सरोवर था, आनन्द मुग्ध पर्वत विशाल,
सुरभित पराग वितरित करता सरवर का सुन्दर पद्म-जाल।
थे इन्द्रतुष्ट या असन्तुष्ट, वह वीर परीक्षा पूर्ण हुई,
जलवृष्टि निरन्तर पूर्ण हुई, कान्फ्रेन्स सफलता पूर्ण हुई।
बापू की आज्ञा पूर्ण हुई, केवल इतनी इच्छा अपूर्ण,
अविराम काम करता ललाम, कारा में हो विश्राम पूर्ण।
माफी लिख कर घर आया था, उस वीर भूमि का एक दास,
गड़ती, असह्य थी, वीरों के कोमल घावों में एक फांस।
आन्दोलन का इतना प्रभाव, रानी ने दी थी जान फूंक,
घर की देहली गीली कर दी क्रोधित जनता ने थूंक थूंक।
वृक्षों पर औ पाषाणों पर घर घर पर औ मन्दिर मन्दिर,
राष्ट्रीय पताका फहर उठी, जागरण ज्योति फैली सुन्दर।
राष्ट्रीय ध्वजा फहराने पर कितने ही गोली काण्ड हुए,
काली करतूतों से रीते शासन के भारी भाण्ड हुए।
शिर पर धर स्वेत मुकुट मन्जुल, निर्भीक अहिंसा व्रत धारे,
कर में राष्ट्रीय पताका ले, चलते आजादी मतवाले।
शासन की नित्य अवज्ञा थी, बापू का उत्तम अनुशासन,
बलि-बेला प्रतियोगिता हुई, किसका हो पहले पूरा प्रण।

क्षत्रिय

मैं क्षत्रिय हूँ, मैं प्रथम रहूँ मैं पहले कारागृह जाऊँ,
क्षत्राणी रानी जेल जायँ, मैं यों ही बाहर रह जाऊँ।

बोले सगर्व क्षत्रिय-कुमार, बोले तत्काल तिवारी जी;
क्षत्रिय के बाद सही आयें इस ब्राह्मण जन की बारी भी।
सज गये साज, रण क्षेत्र बनी गोदाम मद्य की थी भारी,
तैयार हुयी नौकर शाही, वीरों ने भी की तैयारी।
चल दिये प्रमुख वीराग्र गण्य क्षत्रिय जी और तिवारी जी,
उत्तुङ्ग तिरंगा शोभनीय, वीरों की शोभा न्यारी थी।
अगणित नर नारी साथ चले, राष्ट्रीय पर्व अद्भुत उत्सव,
जन-पथ में बरसे पुष्प माल गूंजा जय जयका निर्भय रव।
बुन्देलखण्ड के युगुल वीर थे बन्दनीय, आरती हुई,
थी सुमन-वृष्टि, अर्चन वन्दन, कृत कृत्य आज भारती हुई।

गोदाम

घिर गयी अहिंसक वीरों से ऐसे शराब की वह गुदाम,
जैसे लंका को घेर रहे हों बानर दल के साथ राम।
दस बीस सिपाही क्या करते, शासक का पशुबल व्यर्थ हुआ,
जाग्रत जनता के निश्चय का संकल्पों का कुछ अर्थ हुआ।
क्षत्रिय ब्राह्मण, आजाद, कामदा, शास्त्री, पंचम जेल चले,
सुकुमार दुलारे माता के करने कारा में खेल चले।
पहले पकड़ा था दोसौं को फिर उनको यो हीं छोड़ दिया,
मचले थे वीर निराश हुए, उन सब ने धरना वहीं दिया।
हड़ताल तीन दिन पूरी थी, व्यापार सभी बाजार बन्द,
दिन रात सभायें होती थीं, लहराता था झण्डा बुलन्द।
इन्साफ हुआ धरना देना हम सब का था अपराध एक,
अपराध मद्य का वर्जन भी ! दुश्शासन का ऐसा विवेक।
छै मास कठिन कारागृह का मिल गया जेल में राज दण्ड,
जन सेवक को उपहार यही देती नौकर शाही प्रचण्ड।
निश्चिन्त जेल का वासी था, मां का रक्षक छोटा भाई,
मिल गये महोवा में सहृदय सच्चे साथी मिथिला भाई।

फैजाबाद

भगवान राम का पुण्य धाम, सरयू की जलधारा 'ललाम',
दलदल प्रति पल जपता रहता, अविराम जगतपति राम राम।
श्री राम नाम लेने वाले श्री राम काम करने वाले,
एकत्र हुए थे शान्त-वीर, माता के दुख हरने वाले।
संयुक्त प्रान्त के शूर वीर, गान्धी के अनुयायी सधीर,
शिक्षित, वकील, डाक्टर, समस्त कवि, चित्रकार लेखक गभीर।
आये थे फैजाबाद जेल जनता के प्यारे हृदय राज,
राष्ट्रीय वाटिका के प्रसून बन्दीगृह में थे बन्द आज।
ससुराल माल खाने आयी थी वीरों की बारात बड़ी,
टल रही विदाई घड़ी घड़ी, नौशे की बड़ी जमात अड़ी।
सरकारी एक अतिथि शाला या होस्टेल फैजाबाद जेल,
कवि सम्मेलन, नाटक, विनोद होते रहते थे खूब खेल।
हंसते गाते, पढ़ते, सुनते सानन्द खेलते औ खाते,
उस कष्ट दायिनी कारा के दिन रात बीतते थे जाते।
कब कैसे बीत गये दिन वे, था श्रेष्ठ जनों का नित्य संग,
गाढ़ा होता था चढ़ा हुआ मन में जननी का प्रेमरंग।
उज्जल भविष्य की आशा से पुलकित होता था अंग-अंग,
प्यारे स्वदेश के वीरों पर था चढ़ा तीव्र वैराग रंग।
जो वीर त्याग कर सकते हैं, जीते हैं जो मर सकते हैं,
वे देश पीर हर सकते हैं, अवसर पर शिर धर सकते हैं।
यह स्वार्थ त्याग, बलिदान-भरा, यह प्रेम समर्पण है पुनीत,
गायेंगे इसके ही बल पर जन सुख समृद्धि ऐश्वर्य, गीत।
कर सकता कौन गुलाम भला हैं अमर यशस्वी सन्तानें,
अपना सुख मोद विनोद भला ये तरुण तपस्वी क्या जानें।
परमार्थ, लोक-सेवा जन हित, सन्यास कर्म का पंथ नया,
बलिदान देश की सेवा का खोला बापू ने पंथ नया।
पैंतिस हजार कारा वासी, शासन से लोहा लेते थे,
जागरण, अभय वरदान, प्राण वे वीर देश को देते थे।
परदेशी वस्त्रों की बिक्री सब ओर मलिन व्यापार बन्द,

मैनचेस्टर, लंकाशायर के मिल, शोषण के उपचार बन्द।
भारत की लूट कमाई पर जीने वाले बेकार हुए,
आजादी के सुन्दर प्रयास अब सफल हुए साकार हुए।
हारी पशुता तानाशाही, हारी नंगी नौकर शाही,
जीती जनता की निर्भयता जीता सत्याग्रह व्रतधारी।
बापू का सफल प्रयास हुआ, मृत-प्राय दासता रोग हुआ,
जग-राजनीति में धर्म तत्व का व्यवहारिक संयोग हुआ।

अभिसन्धि

गान्धी इरविन की सन्धि हुई, संघर्ष रुका, अभिसन्धि हुई,
राष्ट्रीय सरोवर से वितरित जगती में पुण्य सुगन्धि हुई।
लिखते थे लीडर आदि पत्र गान्धी जी को पथ भ्रष्ट सन्त,
वे आज समझ पाये उनका कितना सुन्दर था शान्त पन्थ।
छूटे थे बन्दी पूर्ण काम, छूटा सेवक बन्दी ललाम,
छूटे माता के क्लेश फन्द, प्यारा स्वदेश आनन्द धाम।
आनन्दित हर्षित नर नारी स्वागत की अनुपम तैयारी,
अपने लालों पर बालों पर भारत जननी थी बलिहारी।
घर आये, जय लेकर आये, निश्शस्त्र देश के लक्ष वीर,
महिलाओं के माताओं के रोमाञ्चित थे पुलकित शरीर।
करते निज बल पर अविश्वास, आशा-विहीन संशय धारी,
वे आज देखते फूल उठी कैसी स्वदेश की फुलवारी।
दो मुट्ठी भर हड्डी तन में, कौमी फकीर, नंगा फकीर,
संसार देख कर सहम गया, विजयी निरस्त्र था एक वीर।
राजाओं के अभिमान चूर, सम्राटों के मद मान मिटे,
मानवता के शुभ चरण बढ़े, दानवता के व्यापार हटे।

सफल काम

मानव के हितकारी मानव, उन्नत प्रशस्त एवं विराट,
थे सफल-काम, लोका भिराम, सब देश भक्त उन्नत ललाट।

जगती में सत्य अहिंसा की इतनी व्यापक थी प्रथम विजय,
सदियों के थे पाषाण आज मानवता से पूरित सहृदय।
मन, संशय, झंझावात घात, निर्बाध प्रेम का दीप जला,
कितनी शताब्दियों में भारत का विषम दासता रोग भगा।
माना कांग्रेस का बल, मानी जागृत जनता की शुभ सत्ता,
झुक गई वीर के चरणों पर मदमत्ता, वह शासन-सत्ता।
प्राकृतिक नमक लेने खाने का स्वयं सिद्ध अधिकार रहा,
धरना देने का शान्ति पूर्ण सब को पूरा अधिकार रहा।
जुरमाने की रकमें वापस, सब दमन अस्त्र कुंठित वापस,
अन्याय पूर्ण पृथ्वी पर का कर और लगान हुआ वापस।

गोलमेज

शासन-विधान निर्माण-हेतु सब दल की बैठक गोलमेज,
कांग्रेस का प्रतिनिधि एक मात्र गान्धी सशक्त एवं सतेज।
मजदूर मन्त्रि मण्डल उदार, अनुदार रही नौकर शाही,
यह सन्धि देश में विफल रहे करती प्रयत्न नौकर शाही।
करने जाती थी अधिवेशन कांग्रेस कराची में अपना,
जिसमें जनमत स्वीकृति देता, करता नूतन निश्चय अपना।
भड़काने को वह पुनः अग्नि, करने को इरविन सन्धि व्यर्थ,
दिखलाने को अब भी तो है, नौकर शाही अंकुश समर्थ।
श्री भगत सिंह से शूर नरों को निष्ठुर असमय फांसी दी,
तरुणों के उर तिलमिला उठे, यह चोट भयानक खासी दी।
फांसी के बदले शूरों को दे दिया जाय काला पानी,
सब की अनुनय, प्रार्थना विफल, हो गयी भगत की कुरबानी।
फिर भड़काये जाहिल जवान, जो लेते देते तुरत प्राण,
धर्मान्ध लुटेरे कानपूर था भीषण दंगे में प्रधान।

श्री गणेश

बलिदानों का था श्री गणेश,
बिखरे थे दामन के मोती, मां क्यों न विकल होती रोती?
जिसके लुट जायें एक साथ, प्रिय लाल दुलारे चार चार

वह क्यों न विफल धीरज खोती ?
दुखिया के दुख का श्री गणेश।
उन्मत्त प्रलय के प्रेत उठे, बर्बरता के बहु केतु उठे।
घातक नृशंस के शुंड उठे, धर्मान्ध अन्ध नर मुण्ड उठे।
शंकर प्रलयंकर रुद्रवेश,
पैशाचिकता का श्री गणेश।
हंसती थी दारुण दानवता, रोती थी व्याकुल मानवता।
उस दिन पैशाचिक ताण्डव था, मानव क्या उस दिन मानव था ?
दानवता चण्डी नग्न वेश,
हिंसा - पशुता का श्री गणेश।
मच गयी भयानक लूट मार निबलों पर प्रबलों के प्रहार,
अबलायें करती थीं पुकार, बालक करते थे चीत्कार।
था कहाँ दया का लेश शेष,
निर्दयता नागिन कुपित वेश।
ये अग्नि काण्ड की ज्वालायें, कहती थीं पीड़ित गाथायें,
जिह्वा यें दारुण खोल खोल, जपतीं विनाश की मालायें।
प्रासाद हुए थे भस्म शेष,
हा, सर्वनाश का श्री गणेश।
चिल्लाये कातर नर नारी, है कहां हमारा भय-हारी,
शिव शंकर मेरा व्रतधारी, मानवता जाती है हारी।
आओ गणेश, धाओ गणेश,
है कलह-प्रलयिनी मुक्त केश।
दौड़ा भागा भागा पागल देखे हैं एक जगह पागल,
मानव को देते मसल मसल प्रलयंकर की थी चहल पहल।
रोया रोया मानव-गणेश,
बलिदान यज्ञ का श्री गणेश।
कुछ को बाहर ले आया था, कुछ और बचाने आया था,
प्रलया-नल पूर्ण प्रज्वलित था, वह भी तो मरने आया था।
उसका था सुन्दर वीर-वेश,
शंकर-लीला का श्री गणेश।

अनुपम अधरों पर थी लाली, भावना हुई थी मतवाली,
थी काल रात्रि भीषण काली, यह पहुंचा करने दीवाली।
प्राणों का दीपक ले गणेश,
दीपावलि का था श्री गणेश।
कैसे जीतेगी दानवता, कैसे हारेगी मानवता,
वह जन-समूह तो दानव था, यह एक वहां पर मानव था।
उसकी विभूति का श्री गणेश,
गर्वित पीड़ित सारा स्वदेश।
लो तृप्त रहें अब ज्वालायें, हों शान्त अग्नि की जिह्वायें,
हो गया नीर शीतल शरीर, बुझ जायँ विनाशक ज्वालायें।
अब तो प्रसन्न हों श्री महेश,
बलिदान हो गया श्री गणेश।
वह मृत्यु! नहीं जीवन सुखकर, जिस पर मरते हैं कोटि अमर,
'बापू' को ईर्षा थी उस पर, मर मर नर होते अजर अमर।
वह अमर-मरण का श्री गणेश,
जीता है जिससे प्रिय स्वदेश।
पायी थी जग ने 'एक भुजा,' जिसने ऊँची की राष्ट्र ध्वजा,
अधजली विषम ज्वालाओं की, झुलसी 'शंकर' की एक भुजा।
अंकित था उस पर श्री गणेश,
वह राष्ट्र यज्ञ का श्री गणेश।
इति का यह अथ, पथिकों को पथ, संकेत विश्व निर्माता का,
ज्वालामय है सेवा का पथ, कंटक से जाएगा वह रथ।
जिसका गणेश से श्री गणेश,
बलिदानों का था श्री गणेश।

नंगा फकीर

घुटनों तक खादी का कपड़ा तन पर खादी की चादर थी,
पैरों में चप्पल हाथों में लकड़ी थी एक सहारा सी।
निर्धन, सर्वथा अकिञ्चन थे या धन कुवेर अपने बापू,
जाते थे दिव्य विचार लिये, इंगलैंड देश अपने बापू।

जो कहलाते थे विद्रोही जो थे प्रसिद्ध नंगे फकीर,
सम्राट सुनेंगे और सभी उनके मुख से अब देश पीर।
अपने को भारत का रक्षक औ भाग्य विधाता माने थे,
अपनी पर-बशता पर होते जिनके कटु तीखे ताने थे।
जिनको इतना अवकाश नहीं, भारती समस्या सुन भी लें,
इतने पीड़ित शोषित मानव, इनकी दुख-गाथा सुन भी लें।
वे बाध्य हो गये कुछ करना उनको अब तो अनिवार्य हुआ,
भारती भाग्य का निर्णायक गान्धी ऐसा आचार्य हुआ।
रण का सन्चालक देश पूज्य, सत्याग्रह अधिनायक, विजयी,
अति विनयी था वह विजय भार, नत था अपना उन्नत गान्धी।
प्रेरणा, उन्हीं की अनुकम्पा, उनका निदेश, नव आत्म शक्ति,
उनका ललाम प्रिय पुण्य धाम, पा गया निराली मुक्ति युक्ति।
लहरों पर इठलाता चलता था गान्धी को लेकर जहाज,
मंजुल मयंक मुसकाता था, आकाश मुग्ध गंभीर, आज।
जलकी चंचल कल्लोल, लोल लहरें लघु लगती थीं महान,
या सोते सात्विक शान्त भाव चांदी की चादर तान तान।
मिल गया किसी का चरण परस जागे वे निद्रित लहराये,
धर कर अनेक उद्वेग रूप, आनन्द-सिन्धु मिलने धाये।
बैठा था वीर अजात शत्रु, परिपूर्ण प्रतिष्ठा योगि राज,
भारत जननी का भक्तराज, था कर्णधार तरणी स्वराज।
किसमें कितना ज्यादा पानी, है कौन अधिक गंभीर धीर,
हंसती थी लखकर होड़ वायु, सागर के उर को चीर चीर।
भारत की विद्या सात्विकता प्राचीन तपस्या मूर्तिमान,
बतलाने को इंग्लैंड गयीं, मानवता का प्राथमिक ज्ञान।

इंगलैंड

देखे श्रमजीवी धन-विहीन, पूँजीपति थे आनन्द लीन,
हाँ भारत के ऐसे दुखिया कंगाल नहीं वेदीन हीन।
फिर भी इतना वैषम्य भरा, था एक उच्च दूसरा अधम,
यदि थीं विलासकी सुविधायें, क्या रहीं वासनायें कुछ कम।

अनवरत परिश्रम, ज्ञानार्जन, विज्ञान, प्रकृति धन का दोहन,
हो सके तृप्त या उज्वल मन? पास के शान्ति सुख मानव जन।
इतने साधन, ये उत्पादन, फिर भी जीवन में असन्तोष,
क्यों हैं प्रसन्न? आनन्द-वदन, गान्धी से शंकर आशुतोष।
देखे बापू ने श्रमिक-वास, मजदूर दुखीं बेकार मिले,
पटु-शोषण के सब थे शिकार, पीड़ित मानव से गले मिले।
बतलाया उत्तरदायी है यह दोष पूर्ण शासन-शैली,
इसके द्वारा ही पृथ्वी पर दुखदायी द्वेष अग्नि फैली।
जब एक ओर उत्पीड़न हो, शोषण हो एवं दोहन हो,
दूसरी ओर तब राज भोग, ऐश्वर्य, रास हो नर्त्तन हो।
यह सत्य, प्रेम का पन्थ नहीं, यह विश्व क्षेम का कर्म नहीं,
मानव का मानव से पीड़न, जग का कोई भी धर्म नहीं।
सम्राट विश्व का शासन है, जिसमें रवि कभी नहीं डूबे,
आनन्द, तेज, मुख ज्योति कहाँ क्यों मुख दिखते ऊबे ऊबे।
वक्षस्थल में है उदित दिव्य मानवता का मंजुल मयङ्क,
है शुभ्र ज्योत्स्ना छिटक रहीं, मुख पर प्रसन्नता अमिट अंक।
हर समय दबा सा मरता है मानव ढोता है व्यथा पीर,
हर समय चहकता फिरता है उन्मुक्त गगन में विहंग कीर।
मानव क्यों इतना दीन हीन, जीवन-विहीन केवल मलीन,
वासना-लीन, अविराम क्षीण, प्रतिपल इच्छायें पुष्ट पीन।

मिलन

मानवता की थी एक मूर्ति दानवता की दूसरी मूर्ति,
दोनों का मिलन परस्पर था, हो रही समस्या विषम पूर्ति।
श्रमिकों के रुधिर पसीने से नभ चुम्बी थे प्रासाद बने,
उनको मिट्टी में मिला अहो ये धृष्ट कठोर वितान तने।
उस अधम धवलता पर होता मानवता का न कदापि स्पर्श,
नव युग का नव सन्देश दिया नव युग के ईसा ने सहर्ष।
मन पर जिसका शासन होगा, तन पर उसका शासन होगा,
क्षणभंगुर, निश्चय छिन्न-भिन्न, पशुबल का अनुशासन होगा।

प्रारंभ हो गई राजनीति की युक्ति भरी नाटक-लीला,
निपुणों की थी कौटिल्य-नीति, विद्वेषपूर्ण छल बल शीला।

गोल मोल

मन्तव्य, व्यवस्था और ध्येय सब कुछ था उसका गोल मोल,
वह गोल मेज अधिवेशन था या कुचक्रियों का मोल तोल।
मालिक के नहीं नौकरों के थे चाटुकार, प्रतिनिधि भारी,
एकत्र हुए स्वार्थांध सभी, भारत के बहु संस्था धारी।
कोई कहता था राजाओं आ धनिकों का हो संरक्षण,
कोई कहता था जमींदार के हित का हो पहले रक्षण।
धार्मिक कहते थे, सम्प्रदाय मजहब का हो समुचित रक्षण,
कोई कहता ये दलित वर्ग, इनका पहले हो संरक्षण।
गांधी जी बोले, एक मार्ग सब का इसमें ही संरक्षण,
स्वाधीन देश हो, परदेशी का रह न जाय दोहन शोषण।

मदारी

संकेतों पर नर्त्तन करते, संकेतक बृटिश मदारी था,
आये थे शासक के प्रतिनिधि तन मन का वह अधिकारी था।
जनता के दुख वे क्या जानें, जाने भी तो कैसे मानें,
वे सीखे थे स्वार्थी गाने, वे क्यों न व्यर्थ की हठ ठानें।
पूरी विद्वेष पूर्ण लीला, मिल गया विदेशी को हीला,
आपस की खींचा तानी में क्यों हो शोषक पञ्जा ढीला।
इस ओर देश में पुनः दमन, आन्दोलन का आरम्भ हुआ,
नौकर शाही छलबल-शीला, संघर्ष, दमन आरम्भ हुआ।

द्वन्द्व

उस सन्धि पत्र की शर्तों को तोड़ा था नौकर शाही ने,
ले लिया निमंत्रण-रण सहर्ष कांग्रेस के शूर सिपाही ने।
कारा में वीर जवाहर औ पुरुषोत्तम ऐसे देश भक्त,

गान्धी जी भी लौटे निराश, देखी शासन-सत्ता प्रमत्त ।
वेलिङ्गटन से मिलना चाहा, उसने कोरा इन्कार किया,
जब शान्ति योजना विफल हुई, छिड़ गया पुनः संग्राम नया ।

स्वयंभू

परदेशी रचते थे विधान, वे कूटनीति-पंडित महान,
बन गये स्वयंभू निर्णायक, उनके हाथों में कोटि प्राण ।
वे जग को नाटक दिखा चुके, सब भारतीय हैं एक नहीं,
कैसा शासन हो, क्या विधान, इतना भी इन्हें विवेक नहीं ।
आपस में लड़ते रहते हैं, स्वार्थों का है संघर्ष सदा,
अंग्रेजी शासन के द्वारा ही सब का है कल्याण सदा ।
चित भी मेरी पट भी मेरी, वह तर्क न्याय था मनमाना,
पशुबल का अभिमानी शासक, कौटिल्यशास्त्र पंडित, दाना ।
सब कुटिल नीति में पूर्ण विज्ञ परदेशी रचते थे कुचक्र,
फँसने को थे भोले भूखे, थी राजनीति सर्वथा बक्र ।

विष-कन्या

वह कैसी विकट बञ्चना थी, बिष कन्या, छलकी ललना थी,
कितना मोहक, मादक स्वरूप, विष-बेलि फूलना फलना थी ।
गान्धी जी कारागार गये, मोहक मादक तीखे निकले,
रण-वीर देश के वीरों के उद्गार पुनः अद्भुत निकले ।
अधरों पर थी मुसकान मधुर आँखों में प्रणय निदेश भरे,
इठलाती मिलने को धायी, वक्षस्थल में अङ्गार भरे ।
था एक हाथ तो सन्धि हेतु, दूसरा लिए पिस्तौल गुप्त,
करना था जन-आन्दोलन को सर्वथा विफल औ व्यर्थ सुप्त ।
मजदूर मन्त्रि मण्डल उदार, यह सब उसकी ही लीला थी,
नौकरशाही तो सदा उग्र प्रबला थी, छलबल-शीला थी ।
भारत के पतन, गुलामी पर लिख मारे सारे लेख ग्रन्थ,
मैकडानल्ड ने वतलाया था, भारत को सुन्दर मुक्ति पन्थ ।

वह पुस्तक थी हो गयी ज़ब्त, ऐसी अंधी सरकार रही,
वह उदारता, वह सहृदयता, केवल लेखक की कला रही।
थे स्वयं बृटिश मंत्री उदार, भूले अपने उत्तम विचार,
बहते थे सब के साथ साथ भारत दोहन की तीव्रधार।
जैसे थे लिबरल वैसे ही मजदूर रहे औ टोरी थे,
भारत धन धान्य बहाने को, वे परनाला, वे मोरी थे।

विधान

रच दिया अजब शासन-विधान जिसमें शासक का समाधान,
थे मूल स्वत्व अधिकार हीन, इंग्लैंड देश का प्रमुख ध्यान।
इतने दल धार्मिक, सम्प्रदाय, भाषा संस्कृति सब भिन्न भिन्न,
परदेशी पर उपकारी थे ! सब के हितकारी दे अखिन्न।
भारत जननी के कोटि पूत कहलाते थे जग में अपूत,
उनका छूना भी पाप रहा, उनकी छाया भी थी अपूत।

वैकुम

वैकुम, था ट्रावनकोर राज्य, ब्राह्मण देवों का दम्भ, मान,
वर्जित था जाना राज पन्थ ऐसा धार्मिक अभिमान ज्ञान।
गांधी जी का नेतृत्व मिला, अनुशासन सत्य, अहिंसा का,
हट गया धीर दल सम्मुख से अभिमान द्वेष का हिंसा का।
धरना देते थे शान्त वीर डूबे छाती भर पानी में,
उस ओर पुलिस नौकाओं पर घूमा करती थी पानी में।
इस कष्ट सहन से प्रस्तर से ब्राह्मण जन हृदय हिले पिघले,
विजयी थे हरिजन सेवक गण, मानवता के अधिकार मिले।

चरण-कुठार

हरिजन सुधार का राज मार्ग तो कुचक्रियों ने खोज लिया,
राष्ट्रीय शरीर बनाने को प्रिय चरण चक्र से काट लिया।
मुसलिम हित भारत से बिभिन्न, यह बृटिश राज्य की शिक्षा थी,

होंगे अछूत दल-स्वार्थ भिन्न, प्रारम्भ दूसरी दीक्षा थी।
हरिजन का हितकारी महान, हरिजन का जीवन और प्राण,
कैसे सहता उनका वियोग, हरिजन उसके ईश्वर समान।
उसने ही उनको नाम दिया, उसने ही सुन्दर धाम दिया,
भोलों को मलिन अपूतों को उसने ही सुघर ललाम किया।

हरिजन

वे पतित अछूत अपूत दीन ? उनसा है जग में धन्य कौन,
जग का वैषम्य सहा करते वे शान्त तपस्वी धीर मौन।
उनकी शबरी से राम बने, उनके कुबरी से श्याम बने,
अभिराम उन्हीं की सेवा से कितने घनश्याम 'ललाम' बने।
उनके हित नारायण नर हो पृथ्वी तल पर अवतीर्ण हुए,
उनके पद प्रक्षालन करके पुरुषोत्तम भव-उत्तीर्ण हुए।
उनकी सेवा-मेवा खाने जगदीश्वर धरणी पर आये,
उनके कारण ही दीनबन्धु माधव पुरुषोत्तम कहलाये।
विषका प्याला पीकर अथवा सूली से सन्तों की पुकार,
मानव-विद्वेष, विभाजन तो है निराधार एवं असार।
जो जितना दीनहीन जगमें उतना ही प्रभुका प्यारा, है
जो इनको दीनहीन रखता वह स्वार्थी है हत्यारा है।
मानव मानव सन्तत समान,सन्तान एक की एक प्राण,
सब का है मानव धर्म एक, जीवन केहित सबके समान।
राष्ट्रीय अंग से सुदृढ़ चरण काटे किसका दुस्साहस है,
आमरण, ठन गया रण अनशन, हरिजन सेवकका साहस है।

पर्ण-कुटी

पूना पुनीत की पर्ण कुटी लेटा व्रतले लकुटी धारी,
व्याकुल था जग के पापों से प्राणों का आन्दोलन-कारी।
मेरे अछूत, मेरे सपूत, मुझसे ये कैसे विलग रहें,
ये मेरे हैं, हम इनके हैं, शासक जो चाहें करें कहें।

ये राष्ट्र अंग इनका कटना घातक है और असंभव है,
इनके रहते स्वदेश शिव है, इनके हटते ही वह शव है।
जीवन का रक्त बहें मेरा, अक्षुण्ण स्वदेश रहे मेरा,
मेरे रहते हो छिन्न-भिन्न परदेशी द्वारा घर मेरा।
या तो अविभाजित औ अखंड होगा यह भरत खण्ड मेरा,
या द्वेष, द्वेष के दूतों पर तन होगा खण्ड खण्ड मेरा।
आबाद हुई भगवान राम की वह पवित्र नव पर्ण कुटी,
जग सहमा और सशंक हुआ जब बंक रंक की थी भृकुटी।
पल पल क्षण क्षण, घुलना, मरना, जीवन का रक्त बहा देना,
निज शान्त मौन बलिदानों से जगती के हृदय हिला देना।
बापू का अनशन था चलता, मन मन्दिर प्रेम दीप बलता,
बढ़ता प्रकाश मिटती जड़ता, घनता, पशुता, ममता, खलता।
पूना का पैक्ट बना, हरिजन भारत के सुन्दर अंग रहे,
अपने प्राणों के बल बापू अपने बेटों के सँग रहे।

प्राण-प्रतिष्ठा

मानवता का मन्दिर विशाल, प्राणों का दीपक जग मग था,
आये सुन्दर कल्याण पथिक वह सत्य प्रेम पावन मग था।
मन्दिर के इष्ट देव बोले, पाषाणों के भी हृदय हिले,
करुणा की नव हिम-गंगा में, कल्मष कंटक शत कोटि गले।
टूटीं थोथी मर्यादायें, मानव विभेद की सीमायें,
हरिजन की कंठ हार बनती गान्धी के भक्तों की बाहें।
खुल गये हृदय के पट एवं खुल गये कोटि मन्दिर-कपाट,
प्रतिमा में प्राण-प्रतिष्ठा थी, शोभित थी मानवता विराट।
सेवा के शत शत पंथ खुले, फिर दलित दीन के भाग्य जगे,
हरिजन तो स्वयं जनार्दन थे, कल्याण पंथ पर पथिक लगे।
युग युग से मानव दीन हीन, मानवता की थी अवहेला,
आया सुन्दर जागरण काल, आयी सुन्दर सेवा-बेला।
करते समाज की जो सेवा, केवल तन से रहते मलीन,
ऐसा कृतघ्न निष्ठुर समाज, सेवक अछूत थे दीन हीन।

अवसर न मिला, वह कर न मिला, जो उनका उचित भाग देता,
स्वार्थी समाज सेवा लेता, बदले में तिरस्कार देता।
शिक्षा, संस्कृति से हीन, क्षीण, उच्छिष्ट, त्याज्य खाते खाते,
जननी धरणी के दूर्वादल दिन दिन दबते रहते जाते।
उनको छूना भी पाप रहा, ऐसा सामाजिक ताप रहा,
दिन दिन मिटता जाता समाज, यह उनका हीतो शाप रहा।
बापू ने उनको अपनाया, सद् मार्ग देश को दिखलाया,
हृदयों में प्रेम जलद उमड़े, माता का अंचल लहराया।

ग्राम

बापू चिर काल उपेक्षित उन अगणित ग्रामों की ओर चले,
सेवा के पथ पर देश-वीर, उनके निदेश पर शीघ्र बढ़े।
वे रहे ग्राम जो शान्ति धाम, जो प्रकृति केलि ग्रह, सदाराम,
अविराम जहां वितरित प्रसाद शिव सत्य और सुन्दर ललाम।
बिस्तीर्ण प्रकृति के प्रांगण में जिनके प्राणी करते प्रमोद,
नक्षत्रों की स्वर्गीय सभा, ऊषा सन्ध्या दर्शन विनोद।
शुचि शीतल मन्द सुगन्ध वायु, वाटिका मनोरम बन उपवन,
रहते प्रसन्न जैसे प्रसून, ग्रामीण सुखी उज्वल तन मन।
सम्पन्न स्वस्थ सब श्रम जीवी सहयोगी संतत सहभोगी,
शिक्षित संस्कृत ग्रामीण वीर सब अनासक्त कर्मठ योगी।
अब कहां रहे वे शान्त कान्त मानव अब तो म्रियमाण म्लान,
उद्यान हमारा उजड़ गया जैसे संध्या तैसे विहान।
कूड़ा करकट के लगे ढेर, मल मूत्र प्रदर्शित स्थान-स्थान,
वे श्मशान, भीषण. उजाड़, भूंका करते दिन रात श्वान।
तन भूखे सूखे अस्थि प्राय, मन भय संशय का संप्रदाय,
मिल जाय एक ही बार अन्न, इतनी भी होती नहीं आय।
शिक्षा दीक्षा से हीन निरक्षर, निरानन्द जीवन-प्रतीक,
मुख पर विषाद की अमिट छाप, जैसे गाड़ी की धूलि लीक।
अब सान्ध्य गीत, संगीत कहां? मन्दिर का कीर्तन, कहांगान,
सन्ध्या को अशिवा शिवा मुक्त हो छेड़ा करती तीव्र तान।

वे सुन्दर शीतल चौपालें, रामायण की चर्चा होती.
अब वहां चतुर चाईं बैठे गृह दाह कलह वार्ता होती।
रजनी विषाद दुख देख देख रोई सोई पट धर काला,
कुछ घर करते हैं धुआं पूर्ण टिम टिम दीपक का उजियाला।
मुसकाते हैं नभ के तारे, ये भी हैं मानव ! दुख धारे,
ये दिव्य तेज के पुञ्ज आज ये तेज और साहस हारे।
मानव हो रहना दीन ही न, इससे गुरु तर है पाप कौन ?
हो पुरुष और पुरुषाथ हीन इससे भीषण अभिशाप कौन ?
उन सब के केवल दो कर हैं, दो पग दो नेत्र कान दो हैं,
वे क्यों इतने सम्पन्न सुखी हम दीन हीन इतने क्यों हैं ?
हम भूले पुरुषों का स्वरूप, हो गये रंक हम स्वयं भूप,
यह विश्व वाटिका नन्दन वन हम नेकर ली परिताप कूप।
संगठन हीन चेतना-हीन सब ओर मलिनता घेरे है,
क्या आश्चर्य यदि पराधीनता और दीनता घेरे है।

सेवा ग्राम

सेवा के पथ पर खड़ा हुआ देखो वह सेवा ग्राम सन्त,
कर ही देगा वह ग्राम मलिनता औ अशौच का पूर्ण अन्त।
जिसके संकेतों पर उठती जन आन्दोलन की विकट लहर,
जिस पर जगती की दृष्टि लगी, जिसका अमूल्य प्रत्येक पहर।
जिसके कर में है चक्र और लेखनीं विश्व कम्पनकारी,
जिसके दो अक्षर क्रान्ति भरे अक्षय एवं निर्भय कारी।
दार्शनिक विश्व की विषम समस्याओं का करता समाधान,
जिसके श्वासों से हासों से झरता रहता है शान्त ज्ञान।
वह लिये मार्जनी खड़ा आज, विप्लवकारी है अवतारी,
आश्चर्य चकित हो देख रहे गान्धी की सेवा संसारी।
नारायण नर बन कर आये, सेवा के ये अवसर पाये,
सेवा से पद प्रक्षालन से माधव पुरुषोत्तम कहलाये।
इस युग का मोहन दास खड़ा धोने को कल्मष मलिन पाप,
अपने शिर अपने भोलों का ढोने को वह सन्ताप आप।

मुरली पीताम्बर मुकुट कहां, है आज सुदर्शन चक्र कहां,
मार्जनी लिये मेरा मोहन है खड़ा ग्राम के पन्थ यहां।
"ओ भाई कैसी दुखदायी यह अधम मलिनता घोर पाप,
यह ग्राम पन्थ है ग्राम निकट क्यों मलिन कर रहे इसे आप।
मल मूत्र निरन्तर करते हो दुर्गन्धि दूर तक भरते हो,
रोगों का घर तुम करते हो, अस्वस्थ सर्वदा रहते हो।
वह खेत बनायी है मैंने खांई, अरहर की टट्टी है,
मल मूत्र वहीं करना भाई, छोड़ो उस पर यह मिट्टी है।
मलमूत्र व्यर्थ क्यों जाय भला, समझो तो भाई, सोना है,
उसके सब ओर फेंकने से सर्वदा मलिनता होना है।

दुराग्रह

युग की पशुता का यह प्रमाण, जग की जड़ता का यह निशान,
बोले क्रोधित हो नर उससे जो उन पर देता सदा प्राण।
है परंपरा से प्राप्त हमें यह तो अधिकार हमारा है,
हम जैसे चाहें जहाँ रहें यह सारा ग्राम हमारा है।
हैं आप बड़े यह मलिन काम, इस ओर आप कुछ ध्यान न दें,
वह तो ऐसे ही होना है इस पर यों अपनी जान न दें।
मरना, जीना, सुख दुख पाना, अस्वस्थ स्वस्थ रहना जग में,
यह एक भाग्य का चक्कर है, है कौन सुखी जग के मग में।
वे मलिन मलिनता करते थे, बापू थे स्वस्थ किया करते,
फिर भी उनकी जड़ेता न गयी, हठपूर्ण अशौच किया करते।
सेवक दल उद्यत रहता था, यह सुबह शाम की सेवा थी,
बदले में गाली मिलती थी, सुन्दर सेवा की मेवा थी।
जब हारे मलिन पन्थ गामी, जीते गान्धी के अनुगामी,
तक हठ परम्परा-पालन को कर बैठा यह उनका स्वामी।
बापू सेवक दल ले लौटे तब भंगी को आदेश दिया,
उस स्वच्छ स्थान पर मल छोड़ा, इस भाँति दुराग्रह पूर्ण किया।
सत्याग्रह रत विनयी विजयी ग्रामीण दुराग्रह से हारे,
रहता था पूरा ग्राम स्वच्छ बापू के ये कौतुक प्यारे।

जिस ओर दृष्टि थी बापू की, जग दृष्टि लगगयी उसी ओर,
जिस ओर उठाता पग गान्धी, चल पड़ा शूरदल उसी ओर !

कर्म-धाम

अब ग्राम हो गये कर्म धाम, सेवा का पावन पथ ललाम,
तंडुल के भूखे डोल रहे कितने ग्रामों में राम श्याम।
खुलते ही ग्रामोद्योग संघ ग्रामों के लघु व्यवसाय खुले;
कितने ही सरल सुघर सुन्दर उद्यम धन्धे व्यापार चले।
चक्की, चूल्हा, चरखा, करघा घर घर में अब तो पूज्य हुए,
गांवों के सब सामान बने थे देश भक्त को पूज्य हुए।
घर घर चक्की का सुन्दर श्रम, स्वादिष्ट अक्लिष्ट मिला आटा,
श्रम से था स्वास्थ, स्वास्थ्य से सुख, सुख से थी शान्ति कहाँ घाटा।
चरखे से अपना वस्त्र मिला चक्की से भोजन पुष्ट मिला,
घानी से बढ़िया तेल मिला, बढ़ई लोहार का इष्ट मिला।
खेती में श्रम सहयोग मिला कारीगर को भी काम मिला,
प्रिय स्वावलम्ब से पूर्ण सुखी गान्धी को सेवाग्राम मिला।
साक्षरता का सुन्दर प्रचार नर नारी विज्ञानी ज्ञानी,
हां वस्त्र समाता के रोगी, वे नहीं, धर्म के अभिमानी।
उन्मुक्त प्रकृति के प्रांगण में जीवन आनन्द उठाते हैं,
सन्तोषी श्रम फल सुखभोगी, ग्रामीण सुखी कहलाते हैं।
अब किलक किलक खेले उनके गोपाल बाल कोमल कुमार,
उनकी सुन्दर गोशाला है, वे खाते हैं नवनीत सार।
उनकी श्रद्धा पूजा महान, कितने कम उसके उपादान,
केवल जल का निर्माल्य अहो कितना है उनकासरल ध्यान।
तुलसी की पूजा परिक्रया करती हैं उनकी कल्याणी,
दीपक कर में ले घूम रही हैं धाम धाम धवला वाणी।
सुन्दर है शुभ्र ज्योत्स्ना की धरणी पर नवल धवल सारी।
फूली है श्वेत प्रसूनों की अम्बर में प्यारी फुलवारी।
मंथरगति शीतल मन्द पवन हंसते हैं अग जग बन उपवन,
श्वेताम्बर श्वेत प्रसून सजे शुक्लाभिसारिका रुन झून रुन।

बन सके ग्राम कुछ स्वर्गधाम, बापू का था अविराम काम,
दिखलाया एक पदार्थ-पाठ, भावी भारत का पथ ललाम।

नारी

जीवन की शुभ्र ज्योत्स्ना थी, घिर आये घनतम मेघ माल,
नाचे किलके कामुक मयूर, सकुचे सिमटे मानस मराल।
मन वन निर्भ्रान्ति शान्त सुन्दर बहती मञ्जुल शीतल समीर,
हिल गये मूल दल पात पात आयी व्याकुल झंझा अधीर।
जलती थी दीपित दीप-शिखा निवति पूर्णतः मन मन्दिर,
चंचलता छायी चपल चटुल आगमन प्रकंपनपूर्ण मदिर।
मधु मौन पान करने वाले थे घंचरीक चंचल विह्वल,
अनुरागी से आकुल अनूप बन रहे विरागी से पल पल।
शिव शान्ति वादिनी वीणा में छेड़ा किसने अनुराग राग,
लेने को हुआ अग्रगामी यह कौन साधना त्याग-भाग।
विश्राम धाम जीवन उपवन कर भी लो दो क्षण का विराम,
उत्तप्त मेदिनी में देखो सुषमा निधि की सुषमा ललाम।
श्रम-शिथिल हुए से सजग भाव विरमें, जीवन पट परिवर्तन,
चातक को बस दो बूंद मिले, बरसे सरसे वे श्यामल घन।
लघु वैभव का वरदान मिला, सुन्दर सुखमय स्थान मिला,
विन्ध्याचल का शीतल समीर, गंगा जल का प्रिय पानपिला।
जिनके जीवन ने देखा हैं ज्योत्स्ना मण्डित बस शुक्ल पक्ष,
वे भाग्य वान, वे पुण्य वान, वे जीवन के आचार्य दक्ष।
यह लघु जीवन, मानव जीवन, दुख सुख एवं उत्थान पतन,
देखा करता है शुक्ल कृष्ण, दोनों ही गहन विनाश सृजन।
अपनी दुर्बलता औ लघुता, सीमित मानवता का प्रमाण,
कितना अपूर्ण, मानव जीवन, कितना सीमित विज्ञान ज्ञान।
तन पर मनका, मन पर तन का, यह द्वन्द्व और संघर्ष नित्य,
मायावी मोहक आकर्षण यद्यपि असार एवं असत्य।
कितना मादक मोहक प्रचार, तन मन खिंच जाते उसी ओर,
यतियों के भी आसन हिलते लखते नेत्रों की चपल कोर।

क्या होता मानव जीवन में यदि होती नहीं एक नारी,
क्यों जीवन भार वहन करते रहते। शोकाकुल संसारी।
विधि ने जब विश्व सृजन ठाना आधी योजना रही सारी,
परिपूर्ण हुई जब रच डाली जीवन तरु की लतिका नारी।
वन उपवन सुषमा के निकुञ्ज रहते उत्तप्त मरुस्थल ही,
जीवन जल निष्फल ही रहता, रहता संसार मरुस्थल ही।
ऊष्मा की श्यामल मेघ छटा सी छटा न दिखलाती नारी,
तो शुष्क वृन्त से अर्द्ध-दग्ध रहते अविकारी संसारी।
जग सरवर के नर हैं मृणाल, उत्फुल्ल कुमुदिनी है नारी,
इनके पराग अनुराग राग के संसारी हैं आभारी।
कमला स्वरूप की मादकता हरि भी उपाय कर हर न सके,
जा सोये क्षीर समुद्र मध्य, कमलाकर स्वयं ठहर न सके।
तब मिट्टी के पुतलों की क्या मिट्टी का तन. मिट्टी का मन,
चंचला मोहिनी के सम्मुख ऋषि मुनि भी धीरज धर न सके।
आपदा-संगिनी जीवन की सहचरी ग्राम्या थी नारी,
यौवन-विहीन दुख सहते ही असमय थी वृद्धा बेचारी।
मां करुणा की प्रतिमा निर्मल, दुख सहते जीवन जल सूखा,
जननी क्या जानें, है कुपूत कोई कामुकता का भूखा।
देवी तपस्विनी विधवा थी, जीवन संयम की मूर्ति बहिन,
जीवन गंगा बहती प्रशान्त, संकट के पत्थर तोड़ कठिन।
फीजी प्रवासिनी बरसों से हारा थी अपनी ही एक बहिन,
वह एक कहानी निष्ठुर है, निर्दय, पैशाचिक, करुण कठिन।
था कान्यकुब्ज कुल कुलांगार अपना सम्बन्धी नर पामर,
धन का लोभी, लज्जा-विहीन, किम्पुरुष, कपटधारी कायर।
स्वर्गीय पिता जब नहीं रहा, अपना कोई रक्षक त्राता,
विधवा माता, छोटे बच्चे, केवल परमेश्वर का नाता।
तब पामर ने कलकत्ते में बेची थी दुख दीना नारी,
कुल मिले पांच सौ रुपये थे, वह पाप कमाई थी सारी।
लेकर दहेज फिर व्याह किया नारी का जीवन-नाश किया,
मां क्या जानें सुन पायी थीं, कन्या ने जीवन अन्त किया।

दस वर्ष बाद चिट्ठी आई 'भाई ! मैं तेरी एक बहिन,
फीजी में कष्ट उठाती हूँ दुर्दैव दिखाता है दुर्दिन।
जी भर रोया, बांधव रोये, रोये सहृदय मानव गणेश,
कितना लोभी राक्षस समाज, है कहां दया का लेश शेष।
पनपेगा क्या समाज पादप इस नादानी के पानी से,
जल जायेगा नारी ! तेरी आंखों के खारी पानी से।
भारत लाने का यत्न किया बीमारी ने बाधा डाली,
माता सुन कर यह व्यथा पीर, करती थीं करुणा घट खाली।
कैसे कह दें उनकी कन्या फीजी में कष्ट उठाती है,
यह वंश प्रतिष्ठा के विरुद्ध फिर भी जलती तो छाती है।
करुणा के कोमल भाव सदा करते थे मानस में निवास,
सब की सेवा का यथा साध्य करता था जीवन में प्रयास।
पहले से ही व्याकुल विपन्न सब थे, स्वदेश, बांधव, माता,
कैसे जन सेवक का होता केवल अपने सुख से नाता।
सच्ची सेवा का व्रतधारी, सेवा जिसका व्यापार नहीं,
अपनी ही मौंज उड़ाने का उसको कदापि अधिकार नहीं।
आजीवन जिसने कष्ट सहे सद्भाव सर्वदा सखा रहे,
जिसके जीवन में उज्वल तम बलिदान प्रेम के कर्म रहे।
अपने हित जीवन श्रेष्ठ भोग, जिसका जीवन आदर्श नहीं,
रुक सका कभी कंटक-पथ में जिसका जीवन उत्कर्ष नहीं।
बलि की बेला में वेदी पर जो सदा अग्रसर हो जाता,
एवं प्रसाद-वितरण-बेला में मौन खड़ा ही रह जाता।
उसको अपना सुख भोग इष्ट ! लघु स्वार्थ नहीं है शोभनीय,
मृग तृष्णा की लोलुपता ही मानव-जीवन में क्षोभनीय।
फिर भी मानव तो मानव है, दुर्बलता झाँका करती है,
उसकी मानवता का हिसाब ऐसे ही आंका करती है।
ऐन्द्रिय सुख की वासना सुप्त जागी, विवेक-बल सुप्त हुआ,
चञ्चल मन प्रणय पिपासा कुल, प्रिय शान्त भाव था लुप्त हुआ।
गंगा की लहरें सम्मुख ही हिलमिल उठती लहराती थीं,
अब श्याम घटायें मद माती, चञ्चल मन को उकसाती थीं।

मिल गया प्रणय का केन्द्र, बाल विधवा मालवि तरुणी नारी,
स्वेच्छा रत पाणि-ग्रहण किया, स्तंभित थे सब संसारी।
टूटीकुल परम्परा, छूटी जड़ रूढ़ि, समाज तिलमिलाया,
माता, भाई, पहली पत्नी का दुख पहाड़ शिर पर आया।
वे रोते थे, मैं प्रणय-लीन हंसता, नाता, इठलाता था,
अब कामुकता का नाता था, छूटा सब से प्रिय नाता था।
जीवन में सुख ही सुख विलास, परिहास रास, आनन्द मोद,
संसार दिखायी पड़ा मदिर सुख लीन, प्रकृति की मधुर गोद।
निस्सार जगत में सारभूत था प्रणय केलिका राग रंग;
लहरता प्रेम-सरोवर था, उठती थी जीवन की उमंग।
कितना मादक, कितना मोहक आकर्षक यौवन का बन्धन,
जलती थी संतत ज्वाला सी, तन मन विवेक का था इन्धन।
जब बाहु-पाश परिरंभण में दो हृदय एक हो जाते थे,
मिथ्यावादी के ज्ञान पान नीरस से मिथ्या होते थे।
मन काम और वासना-धाम अब वह ललाम, निष्काम नहीं,
इस मृग मरीचिका में भाई मिलता है आत्माराम कहीं।
तन को सुख था मन को दुख था, जीवन जल का यह दुरुपयोग,
जिसके सब साधे कष्ट-योग, उसको इच्छित सुख राजयोग।
यह क्या थी, भवितव्यता, नियति, परमेश्वर मुझको क्षमा करे,
पावन ललाम, का हृदय धाम-अभिराम राम ही रमा करे।
कुछ दिन का रमा-विलास रहा, जीवन का यह उपहास रहा,
जगदीश्वर का सुन्दर निवास, कामुकता का आवास रहा।
होकर सचेष्ट, जाग्रत विवेक अपना प्रियपथ फिर अपनाया,
उस जीवन में थी आत्म ग्लानि, वह थी कुछ ही दिन की माया।
उपदेशक परम विरोधी बन, कटुता कृपाण लेकर धाये,
कर दिया मनो मालिन्य प्रकट वे अब तक मेरे कहलाये।
पग पग पर प्रति पल होते थे जिनसे प्रमाद अपराध पाप,
वे मुझे सिखाने आये थे, देते थे जी भर कोटि शराप।
असहिष्णु निपट वे सह न सके मेरे जीवन का एक छिद्र,
शिव, शिव उनका व्यवहार कुटिल वे रहे असंस्कृत औ अभद्र।

सद्भाव चिरन्तन आत्मदेव, कल्याण पन्थ पर ले आये,
बिगड़ी बन गयी हमारी भी हम फिर से उनके कहलाये।
रूठे भाई माता, पत्नी को बिनय प्रेम से समझाया,
भाई तो पागल बना रहा, दस वर्ष घोर संकट आया।
दो बर्ष बाद, आपदा-संगिनी, वह सुहागिनी बिदा हुई,
वह वन्दनीय नारी महान आपदा जिसे सम्पदा हुई।
उसकी सेवा शुश्रूषा तो हम दोनों थे कुछ कर पाये,
वरदान रूप उसके आंसू प्रेमाकुल होकर बह आये।
यह क्या मेरी सेवा करके मुझको तुम नर्क पठाओगे,
मैं रही सेविका जीवन भर, तुम मेरे ही कहलाओगे।
देवी! तुम सुखी रहो मेरे प्यारे बच्चे चिरजीवी हों,
मैं सुखी इसी में हूँ संगिनि मेरे वे सुख के सेवी हों।
अन्तिम सुन्दर वरदान मिला, अपराधी भी कृत कृत्य हुआ,
हो गया क्षमा अपकृत्य हुआ, विनयी विजयी था भृत्य हुआ।
देवी की मंगल गोद भरी, कल्याणी सी लीलारानी,
आयी शैशव अनुराग लिये, निर्धन की कुटिया की रानी।

नारायण

प्रांगण का भूषण नारायण जब आया, सभी प्रसन्न हुए,
प्रभु कामृदु परम प्रसाद प्राप्त दम्पति सानन्द अखिन्न हुए।
गंगा तट सुन्दर स्वच्छ भवन, पावन मन्थ शीतल समीर,
माता बांधव सन्तुष्ट, हृष्ट, सुख साधन संयुत, विगत-पीर।
जीवन का नभ विस्तीर्ण नील वह इन्द्र धनुष सा चित्रित था,
अपने घर का कोना कोना उसके सनेह से सिंचित था।
नारायण का ही बाल रूप, सुन्दर विनोद, आनन्द-रूप,
उसको गोदी में लेकर ही हो जाता था यह रंक भूप।
उपवन की कलियां हंसती थीं, चिड़ियां सानन्द चहकती थी,
चंचल की नैन पुतलियां भी चंचल थीं खूब मटकती थीं।
तितली उड़ती वह गोदी से धरने को उसे उछलता था,
आनन्द लीन, उपकार-भग्न प्रेमी का हृदय उछलता था।

आते ही पावन उषा काल वह गोदी में आ जाता था,
दैवी संगीत सुना करता तुतला तुतला कुछ गाता था।
सौरभ सुगन्धि से पूर्ण वायु, आनन्द हर्ष से पूर्ण चित्र,
नारायण ही अपना धन था उससे बढ़कर था कौन वित्त।
सुख की शैय्या पर प्रेम-मग्न गाता था प्रभु के प्रेम-गीत,
झांका करता वातायन से चुपके चुपके दुख का अतीत।
दुख में रहते हृदयासन पर वेदना चेतना जाग्रत कर,
सुख में उनका कुछ परस मात्र वैभव की मदिरा मदिर मधुर।
सुख दुख दोनों जगदीश्वर के हैं मधुर तिक्त पावन प्रसाद,
दुख जाग्रत रखता है संतत सुख लाता है मन में प्रसाद।

निर्झर

आनन्द केलिका मधुर धाम विन्धाचल की बन श्री ललाम,
अविराम प्रकृति के प्रांगण में कीर्तन नर्तन शिव सत्यकाम।
गंभीर ध्यान में मग्न खड़ी वे आत्म तृप्तसी आत्मायें,
पर्वत श्रेणी या मौन लिखित अपने गौरव की गाथायें।
उन्मदनद जीवन जल भर कर 'टांडा' नर्तन करता सदैव,
हर हर हर निर्झर झर झर झर परिताप ताप हरता सदैव।
लुंठित होती गिरती बहती जलराशि समुज्वल दुग्धश्वेत,
साकेत धवल सा उज्वल सा बन सुषमा का मन्जुल निकेत।
चातक मयूर कोकिल विहंग आनन्द मान करते कुन्जन,
'शिव तांडव, सा होता रहता बन में टांडा निर्झर नर्तन।
दस पांच मित्र जन साथ लिये हम देख रहे थे विमल दृश्य,
आनन्द लीन सब मुग्ध मौन, सम्मुख सुन्दर स्वर्गीय दृश्य।
सब ओर दिखायी देता था वितरित बनदेवी का प्रसाद,
सब ओर सुनायी देता था आनन्द वाद, आनन्द-नाद।
बहते जाते थे व्यथा गीत, बहता जाता दुख का अतीत,
सुख ही सुख का संसार रहा संकट कंटक बाधा-व्यतीत।

जग के नाटक का सूत्रधार उठ पड़ा शीघ्र ही नाट्यकार,
आया जीवन के रंग मंच, निष्करुणा का अवतार धार।

दुखान्त

पल भर में जीवन का नाटक हम समझे थे जिसको सुखान्त,
दुर्दान्त ! निठुर एवं अशान्त हो गया अहह, ऐसा दुखान्त।
बद्री, मामा का कुल-प्रदीप, ले गया कौन अपने समीप,
निर्झर शिर से गिर पड़ा फिसल, हो गया रंक क्षण में महीप।
कितने क्षण भंगुर, मदिर मधुर सुख के ये गिने हुये कुछ क्षण,
चिर जीवन की वेदना भरे, जग के तृण तृण जग के कण कण।
यह जीवन है जिसके बल पर इतना प्रमाद, उन्मादवाद,
दो क्षण में भैरव-रव होता वीणा-वादन, आनन्द-नाद।
वन एवं झरना हंसता था छिप खड़ी मृत्यु भी हँसती थी,
जब हम सब की वह मस्ती थी, वह पाश लिये थी कसती थी।
चिरदीन ! अभागे ! पीड़ितनर ! तुझको सुखका अधिकार कहां,
होगा जिन का उनका होगा, तेरा सुख का संसार कहां।
'दुख ही जीवन का नियम रहा अपवाद रहा सुख, किन्तु आज,
गिर गई हमारे हीशिर पर यह कठिन नियति की निठुर गाज।

सावधान

जीवन फूलों की सेज नहीं, जीवन-पथ-यात्री सावधान !
संसार सुखों का सार नहीं, आनन्द-प्रमादी सावधान !
दुखमें आमुख प्रत्यक्ष देव कहते हैं जीवन बन्धु सखा,
वेदना हमारा संबल है हम तुम चिरयात्री-बन्धु सखा।
जग के मग में हम तुम दोनों हैं अविश्रान्त चलने वाले,
सहयात्री जनके रिक्त पात्र जीवन जलसे भरने वाले।
रुकने का है अवकाश कहां, अनवरत प्रयत्न विराम कहां,
हो गयी सुबह यदि आज यहां, क्या जाने होगी शाम कहां।
जब मानव, जो ईश्वर की है सुन्दर-रचना लोकाभिराम,

मानव से मर्दित होता है, मानव बनता दानव, 'ललाम'।
तब रुद्र केलिसा करता है, जगभार सर्वदा हरता है,
जगमें विनाश का भैरव-रव होता है घोर घहरता हैं।

भूकंप

वह प्रलय-काल की ज्वाला थी, वह था बिहार भूकम्प नहीं,
संहार विनाशक लीला थी दैवीं प्रकोप, भूकम्प नहीं।
भ्रू बंक किये थे रुद्रदेव दुःखिनी मेदिनी कांप, उठी,
नरकी सीमा को वह भीमा संतप्त त्रस्त हो नाप उठी।
हिलते थे नभ चुम्बी विशाल सभ्यों के वे प्रासाद और,
डुलते थे धीरों के आसन आतंक त्रास था ठौर ठौर।
डग मग डग मग डोली धरणी झंझाकुल जीर्णा नौकासी,
दुर्दैव आपदा ग्रस्त त्राहि करते थे पृथ्वी के वासी।
खड़ खड़ धड़ धड़ विघटन-लीला, पत्थर ईंटों के ढेर ढेर,
लो यह संसार तुम्हारा है कहते थे नीरव टेर टेर।
चूर्णित, घूर्णित मर्दित मानव पत्थर ईंटों में मिला हुआ,
मृत, अर्द्ध-मृतक, विकलांग, त्रस्त, दारुण विपाक में पिसा हुआ।
बच गया एक परिवार त्रस्त कहता शुकराने की नमाज,
गिर पड़ी शीश पर टूट फूट दीवाल भयंकर कठिन गाज।
पति अपना हृदय-खण्ड बालक अपनी पत्नी को देता था,
मेदिनी फटी बालक दह में, दुखही दम्पति को देता था।
जलती ज्वाला में भस्म हुए नरनारी कीट पतंग हुए,
सब मृत्यु सिन्धु में समा गये, दो क्षणकी लोल तरंग हुए।
जो बचे भूख से मरते थे, गृह हीन शीत दुख सहते थे,
राजेन्द्र बिहार रत्न, सेवक, पीड़ित की सेवा करते थे।
बापू कहते थे दैव-कोप है, अपने कर्मों का फल है,
निर्बल पर ही दुर्दैव कठिन दिखलाता अपना भी बल है।
यह क्या था ज्ञानी, विज्ञानी समझें, इतना स्पष्ट हुआ,
पल भर में उस अज्ञात शक्ति से जग का वैभव नष्ट हुआ।
यह है अपने बल की सीमा यह है अपने धन की सीमा,

यह है अपने कल की सीमा, नाची काली उग्रा भीमा।
पल में विध्वस्त त्रस्त वैभव, बिज्ञान पंगु था ज्ञान मौन,
अज्ञात हमारी दुनियां को उलटा पुलटा कर गया कौन।

निर्वाचन

शासन बिधान नव-निर्वाचन जनता की अश्रुत पूर्व विजय,
भारत भर में रव गूंज उठा कांग्रेस की जय, गांधी की जय।
उस ओर शस्त्र पशुबल, धनबल नौकर शाही सत्ता संचय,
इस ओर एक निर्बल का बल कांग्रेस की जय, गांधी की जय।
मीलों पैदल चलते जाते गांधी गीता गाते जाते,
मोटर पर और सवारी पर जनमत दाता हँसते जाते।
नव सुमनमाल, पूजोपहार, गांधी जनहित धरते जाते;
निर्भय निर्वाचन थल आते मत देकर फिर हँसते जाते।
निर्भयता का वरदान मिला दैबी संपति का मूल मंत्र,
चुनते थे अपने सेवक को गांधी के अनुगामी स्वतंत्र।
दिन रात एक तूफान चला था वीर जवाहर का दौरा,
कूरों का दिल दहलाता था वह वीर जवाहर का दौरा।
जिसको समझा था त्रस्त देश, जिसको माना पद दलित देश,
दुश्शासन ने जिस जननी के निर्दय खींचे थे हाय केश।
मां भाग्य शालिनी गर्वोन्नत, मां का विशाल था आज भाल,
उसके सच्चे सपूत लाखों ही बाल लाल करते कमाल।
अभिमान सफल, बलिदान सफल, वीरों का निर्भय गान सफल,
बापू का निर्मल ज्ञान सफल, भारत जननी का मान सफल।
संयुक्तप्रान्त, सीमान्त प्रान्त, मद्रास, बम्बई मध्यप्रान्त,
आसाम, उड़ीसा में विजयी कांग्रेस जनसेवक धीर शान्त।
प्रान्तिक शासन अधिकार रहे, संरक्षण इतने कुटिल जटिल,
कैसे चलती शासन शिविका जनपथ कंटकमय, नहीं सरल।
प्रान्ताधिप के अधिकार रुके, जन मत की थी संपूर्ण विजय,
जन सेवक शासन आसन पर निर्भय थे सहृदय और सदय।

सेवक-शासक

खोले थे कुछ स्वार्थान्ध जहां सीमित स्वार्थों की दूकानें,
पहुँचे सेवक निस्वार्थ वहां, उलटीं कपटी की दूकानें।
शासन-प्रासादों पर अपना प्रिय तरल तिरंगा लहराया,
जन सेवक-वीर सदस्यों ने राष्ट्रीय गान सुन्दर गाया।
गांधी टोपी का मुकुट धरे पहुंचे माता के वीर लाल,
युवराज हृदय अधिराज आज विजयी वीरों के उच्च भाल।
लाठी गोली खाने वाले, कारामें घर करने वाले,
अब शासन के संचालक थे, पीड़ित का दुख हरने वाले।
जग समझा उनका मूल्य और उनके बलिदानों का महत्व,
प्राणार्पण करने वाले ही लेते हैं अपना वीर स्वत्व।
संयुक्तप्रान्त का पुरुष सिंह पुरुषोत्तम प्रिय गंभीर धीर,
निर्वाचित सौम्य सभापति था, हरता माता की व्यथा पीर।
श्री पन्त साइमन स्वागत में शिर पर लाठी खाने वाले,
प्रान्ताधिप के प्रधान मन्त्री, कल्याण पंथ चलने वाले।
किदवई प्रान्त का वीर, शेर, निर्वाचन में करता कमाल,
मन्त्री शासन का सूत्रधार, विजयोन्नत सेवक उच्च भाल।
आनन्द-भवन बलिदान-भवन,श्री कीर्त्ति स्वरूप विजय लक्ष्मी,
मंत्राणी थीं भारत पूज्या नारी, प्रत्यक्ष विजय लक्ष्मी।
संपूर्णानन्द महानवीर वाग्मी, वाणी के प्रेम पात्र,
मंत्री थे वीर मनस्वी अब, गंभीर प्रतिष्ठा-प्रेम-पात्र।
श्री इब्राहीम काटजू जी मंत्री थे कांग्रेस अनुयायी,
जन सेवक शासन पदारूढ़ आशा की लतिका लहरायी।
बापू सब के अनुशासक थे, सब पर उनका अनुशासन था,
सबके वे थे सब उनके थे उनका तन था, उनका मन था।
आजाद वीर राजेन्द्र और श्री युत पटेल थे कर्णधार,
इनके आदेशों पर चल कर करना थे कुछ व्यापक सुधार।
जो सबसे अधिक मलीन हीन, पद दलित उपेक्षित वर्ग आज,
उसको सेवा कर सुख देना होगा यह प्रारंभिक स्वराज्य।
श्रम जीवी साहस खोल उठे जग उठे आज निद्रित किसान,

उनके हित का सबसे पहले शासन में रक्खा गया ध्यान।
कितने हितकारी नियम बने दुखियों को कुछ सान्त्वना मिली,
शासन प्रस्तर से मर्दित थी, उन्मुक्त गगन में कली खिली।

सुधार

साक्षरता का सुन्दर प्रचार, बेसिक शिक्षा का शुभ प्रसार,
कल्याणी जागृति ज्योति लिये आयी भारत के द्वार द्वार।
कारा के कर्कश कष्टों को हरने में रत कारावासी,
आनन्द मग्न कर्त्तव्य-लीन थे निर्वाचित भारत वासी।
डाक्टर खां साहब, रविशंकर जी शुक्ल खेर, श्री राजा जी,
बरडोलई औ श्री कृष्णसिंह श्री विश्वनाथ, मंत्री त्यागी।
भारत के आठ प्रान्तों में कांग्रेस का पूरा शासन था,
निर्धन भारत का धन-कुबेर गांधी उसके तप का धन था।
बंगाल और पंजाब सिन्ध संयुक्त मंत्रि मण्डल शासन,
फजलुलहक और सिकन्दर सर, अल्लाह बख्श करते शासन।
आजादी का कुछ फल पाया जागृत जनता में बल आया,
सदियों में सुन्दर भारत की आशा-सरिता में जल आया।

मुक्त

उन्मुक्त हुए कारागृह से प्यारे काकोरी के कैदी,
जोगेन्द्र शुक्ल जोगेश वीर विख्यात क्रान्तिकारी कैदी।
बख्शी जी, श्री सान्याल, वीर यशपाल देश सेवक कैदी,
छूटे थे परमानन्द वीर तेइस वर्षों के चिर बन्दी।

मुजतबा

वर्मा विप्लव के सूत्रधार वे रक्त क्रान्ति के कर्णधार,
उनको फांसी की आज्ञा थी, फाँसी के तख्ते पर सवार।
भारत में मांटेगू आये लेकर कुछ शासन के सुधार,
फांसी न रही, काला पानी, तेईस वर्ष का दंड भार।

आजीवन कारावास कष्ट, यौवन-बल जीवन नष्ट भ्रष्ट,
रोमांचित होता है शरीर सुनकर उनके बलिदान कष्ट।
अज्ञात मौन बलिदान विशद वे कितने सच्चे देश वीर,
हम जान नहीं पाये आहा कट गये बहुत अपने शरीर।
कारा के भीतर कारागृह जिसमें प्रकाश का लेश नहीं,
थे बन्द हुए सांसत घर में जिसमें था वायु प्रवेश नहीं।
गल गल कर तन के वस्त्र फटे चिथड़े थे, घोर पसीना था,
दिन रात घोर आतंक, कष्ट, बन्दी का प्रस्तर सीना था।
सूराख एक था उसमें से भोजन दो बार दिया जाता,
भोजन में छिपा छिपा कर हा बन्दी को गरल दिया जाता।
वे माता की ममता वाले माता के हित मरने वाले,
कहते थे हम मरने वाले हैं, मां के हित जीने वाले।
स्वागत है आये मृत्यु भली, वह है वीरों की एक गली,
जीवन भी मानव जीवन है, मन्दिर उपवन की एक कली।
अत्याचारी के हाथों से फाँसी हम चाहे पा जायें,
वह वीर जन्म का मुक्ति मार्ग प्यारे स्वदेश को दिखलायें।
विष लेकर प्राणों का देना तो आत्मघात कहलायेगा,
निष्चेष्ट मृत्यु के स्वागत से यह सेवक क्या कर पायेगा।
ऐसी थी उनकी दृढ़ प्रतीति, हारी थी उनसे ईति भीति,
वे वीर वंश के मानव थे, सीखे थे सुन्दर वीर नीति।
भोजन आया, खाया परन्तु पानी का तो था नाम नहीं,
विष भोजन में था दिया गया, उपचार यही है और नहीं।
जल पीने से विष कम होगा, ऐसा निस्वाद गरल वह था,
बन्दी व्याकुल जल से पीड़ित, सम्मुख प्राणों का संकट था।
प्रति दिन दो चार मरा करते, विष देने की यह लीला थी,
नौकरशाही तो प्रखर उग्र एवं संवेदन-शीला थी।
कौमी फकीर सच्चा फकीर, परहेजगार वह मुसल्मान,
प्यासा बेचैन तड़पता था, प्यारी थी उसको नहीं जान।
होता हँस हँस बलिदान वीर उसको जीवन का मोह नहीं,
क्षण भंगुर है मानव-जीवन, ज्ञानी को उसका छोह नहीं।
जीवन भर संकट ही संकट, सहना औ जीना दुष्कर है,

कितना विशाल सत्तम सहृदय इस धरणी का धरणीधर है।
जल कहाँ, कौन देगा, प्यासा आजादी का प्यारा हुसेन,
जननी के शिर का शुभ्र मुकुट, ईश्वर की सुन्दर श्रेष्ठ देन।
पेशाब भरा गमला सम्मुख पीलो जीवन की रक्षा हो,
विष मिटें, बचे जीवन जिससे भारत जीवन की रक्षा हो।
वीभत्स, करुण, या रौद्र अरे, कोमल कृति सुन्दर शांत प्राण,
पी गया मलिन तम वस्तु और कर दिया देश का परित्राण।
हो गया वमन फिर दाह जलन, जल कहां मृत्यु सम्मुख आयी,
फिर नयी चेतना, कर्म ज्ञान, कर्त्तव्य-परायण तालायी।
छाना जल वमन क्रिया फिर से पी लिया, आह मेरे शंकर,
तुम युग युग को हो अजर अमर मेरे प्रलयंकर अभयंकर।
जीवन-पालक, जीवन-दायक तुम भारत के जीवन ज्वलंत,
तेईस वर्ष कारागृह के कर सके न तेरी अग्नि शान्त।

अमरशहीद

तुम ऐसे कितने अमर वीर! मिट गये आह जिनके शरीर,
केवल कारा ही कहती है कौमी शहीद कौमी फकीर।
कितने नीरव बलिदान पंथ के अनुगामी सानन्द हुए,
कितने भूले पथ भ्रष्ट हुए या भाई परमानन्द हुए।
जानेगी कब स्वार्थी दुनियाँ आजादी के दीवानों को,
पहचानेगी कैसे दुनियाँ पागल प्रेमी परवानों को।
मुजतवा सन्त प्रार्थना एक स्वीकार देश की हो जाती,
तो ज्योति, तुम्हारी ज्वाला से तमसावृत जगती पाजाती।
तुम को यश की परवाह नहीं तुम से यश स्वयं यशस्वी है,
उत्सर्ग करे जो जीवन का बलिदानी कौन तपस्वी है।
लिख डालो मेरे सन्त वीर लिख डालो जीवन लीलायें,
जिनको पढ़ कर सुन कर स्वदेश के धीर वीर पथ पाजायें।
सब जाने कितनी प्यारी थी आजादी की सुन्दर देवी,
कितने बलिदानों पर आती है आजादी की प्रिय देवी।
आखें खोलें देखें समझें कुछ टुकड़ों पर मरने वाले,

लेते हैं अपना स्वत्व आप आजादी पर मरने वाले।
कारागृह से थे वीर मुक्त-जन सेवक थे सानन्द मुक्त,
होता था सारा देश मुक्त, पीड़ित थे कुछ कुछ कष्ट मुक्त।

सेवा

शिक्षा, खेती, वाणिज्य और व्यवसाय प्रसार योजनायें,
बनती थीं सेवा में रत थीं जाग्रत राष्ट्रीय चेतनायें।
होता था गांवों का सुधार, होता था शिक्षा का प्रसार,
मंगल कारी सेवक द्वारा बन पाए थे शासन-सुधार।
अत्याचारी थे अन्यायी लाठी के बरसाने वाले,
कारा में शासन के पुरजे निर्दयता दिखलाने वाले।
त्रासित शासित अब शासक थे शासित अब थे अत्याचारी,
गांधी के अनुयायी परन्तु थे सत्य अहिंसा व्रत धारी।
कहते थे अपनी भूलों को, तुम भूलो, हम तो भूल गये,
हम क्या, अपने कितने सैनिक हंसकर फांसी पर झूल गये।
अवसर पर देश-द्रोह न हो पद का मद या सम्मोह न हो,
कल्याण पंथ के पथिक चलें तब उनका पथ-अवरोह न हो।
तुम सब जनता के सेवक हो सच्चे सेवक बनते जाओ,
जगदीश्वर तुम को क्षमा करे मैंने तो क्षमा किया जाओ।

अवहेला

राष्ट्रीय यज्ञ से श्री सुभाष जीवन-होता की अवहेला,
दलबंदी का पंकिल-पथ था खोई हमने स्वर्णिम बेला।
बापू की सत्य, अहिंसा का उनके रहते ही दुरुपयोग,
स्वार्थों की प्रतियोगिता बढ़ी बढ़ गया देश में स्वार्थ-योग।
थाथे, ओछे शासन-सुधार निस्सार स्वत्व वे हीन पीन,
पीड़ित किसान शोषित श्रम कर रह गये दीन एवं मलीन।

जय मानव

द्वितीय चरण

एक चरण में विजित हो गया है आधा संसार,
एक चरण रख और तुम्हारा है सारा संसार।

दानवी

संहार प्रलय ज्वाला फैली मिट रही सभ्यता की खेती,
विज्ञान ज्ञान में प्रखर प्रचुर यूरुप में रणचंडी चेती।
धम धम बम ऊधम सर्वनाश, आतंक वक्र किसकी भृकुटी,
लो दानवता खुल कर खेली मानवता थी सकुची सिमटी।
खड़ खड़ ईंटें खडहर प्रस्तर प्रासाद गगन चुम्बी विशाल,
लड़ लड़े गिरते मरते प्राणी, कंकाल आह मानव विशाल।
बहता मानव का गरम खून वैज्ञानिक की यह प्रगति चरम,
है दया धर्म भी श्रेष्ठ परम, कह सकते हैं कुछ नरम नरम।
जीवन संघर्ष द्वन्द्व पग पग, पशुओं का यह अनुसरण अंध,
सब अन्धकार की ओर चले जनता औ नेता निपट अंध।
जग तल विशाल नभथल विशाल तल अतल महासागर विशाल,
इनमें है नहीं समा सकता आहा मानव कितना विशाल।
विज्ञान, ज्ञान के अन्वेषण सब करते मानवता-मर्दन,
सब की इतनी ही सार्थकता, मानव से मानव का पीड़न।
जड़वाद, सभ्यता संस्कृति के, पार्थिविकता के ये अभिमानी,
खूंख्वार भेड़िये से लड़ते हैं मानव ज्ञानी विज्ञानी।
आविष्कारों का यह प्रयोग, संहार परस्पर नाश-योग,
हो गयी संस्कृति एक रोग, हो गयी सभ्यता जड़-प्रयोग।
सुबिधायें बनतीं बाधायें, बढ़ती हैं प्रबल वासनायें,

सुख भोगों के ही साथ साथ बढ़ती हैं प्रबल कामनायें ।
सम्पूर्ण विश्व का धन, वैभव साम्राज्य और ऐश्वर्य भोग,
क्या कर सकते हैं तृप्त एक प्राणी को, भी ये भोग योग ।
तब सब के सब जब भोगवाद के अनुयायी कर चले होड़,
कैसे उनको परितृप्त करें चाहे हों सुविधायें करोड़ ।
तृष्णा से तृष्णा बढ़ती है, घृत की आहुति सी पड़ती है,
मानव तृष्णा के आयुध हैं, तृष्णा की सेना लड़ती है ।
इतना न सीख पाया मानव, सन्तत है बन्दनीय मानव,
मानवता मर्दन सर्वनाश, है केवल दानव का लाघव ।
अविराम काम, परिणाम एक वैज्ञानिक शस्त्रों का प्रसार,
चलता मानव चलती मशीन संहार यही व्यापार सार ।
लड़ने कटने को मानव का होता लालन पालन शिक्षण,
यह काल कूट है प्राप्त हुआ कर प्रकृति पयोनिधि का दोहन ।
विष पायी सब रण मत्त हुए, मिटने को धीर सशक्त हुए,
सब महाकाल के अग्रदूत से सर्व-नाश-अनुरक्त हुए ।
जो वायुयान मरुथल में भी सुख-साधन बरसा सकते थे,
जो शीत देश में भी जाकर मानव के दुख हर सकते थे ।
वे मानव निरपराध मानव पर भीषण बम बरसाते हैं,
वैज्ञानिक के ये अन्वेषण तो हाहाकार मचाते हैं ।
भूखों मरते मानव प्राणी अन्न भी न प्राप्त हैं अन्न वस्त्र,
लेते जहाज हैं जल-समाधि भर अतुल राशि धन अन्न वस्त्र ।
जैसे राजासन पर कोई अविवेकी स्वार्थी आ जाये,
सब राज्य-कोष कर छिन्न-भिन्न उत्पात भयंकर कर जाये ।
वैसे ही जग की सम्पति के अधिकारी वे हैं बन बैठे,
जिनके मन में कल्याण प्रेम के भाव नहीं पहुँचे पैठे ।
जग का कर देना सर्वनाश, उनका कौतुक उनकी लीला,
वे परम निरकुश हैं नृशंस, जग की पींड़ा उनकी लीला ।
जग के वैभव, विज्ञान, ज्ञान, उनके चगुल में धर्म पोप,
निर्बाध घोर दुर्द्धर्ष विकट प्रलयंकर उनका कठिन कोप ।
संकीर्ण राष्ट्र की मर्यादा के बल पर वे करते पुकार,
वे धर्म देश का नाम लिए, हत्याओं का करते प्रचार ।

कल से बनते हैं अस्त्र शस्त्र, कल से चलते मानव महान,
लड़ना मरना ही जीवन है सिखलाते मानव शास्त्र ज्ञान।
विज्ञान बढ़ा पर ज्ञान नहीं, भूलों का अनुसंधान यहीं,
उन्नत मानव भी मानव पर करता प्रहार स्वार्थान्ध कहीं।
युग बीते जब मानव पशु सा लड़ता मरता था रहता था,
वर्षातप एवं शीत कोप पशुओं सा दिन दिन सहता था।
अब प्रकृति-जयी मानव नव है उसकी जय जय का ही रव है,
फिर भी वह पशुता नहीं गयी अब भी रण का भैरव रव है।
नैतिकता उपयोगिता बनी, है सृष्टि सर्वथा स्वार्थ सनी,
इसका ही फल है लड़ती है मानव से मानव बन्धु अनी।
मानव मस्तिष्क विशाल हुआ, होना वक्षस्थल भी विशाल,
नर क्यों होता कंकाल यहां, क्यों रण का होता महाकाल।
मानव मानव भाई भाई, इतनी न समझ हम में आई,
हम क्यों बनते हैं धर्म ध्वज, क्यों नाम मात्र के ईसाई।
क्या प्रेम शान्ति से हिल मिलकर मानव न सभी रह सकते हैं,
क्या एक प्रेम की धारा में मानव न सभी बह सकते हैं।
तृष्णा तरुणा, तृष्णा तरुणा, वृद्धा दीना क्षीणा करुणा,
अपने पुत्रों का रुधिर भरे वक्षस्थल में, धरणी अरुणा।
वैज्ञानिक के ये चमत्कार गन, टैंक, ऐरो प्लेन चले,
सदियों के ये पुरुषार्थ प्रबल, करने मानव संहार चले।
जगती को करने भस्म क्षार, निकला रण-घोषी भस्मासुर,
अपनी ज्वाला से आप जलां, विज्ञानी का तन मन धन पुर।
दो चार विश्व के रंग मंच के शक्तिमान हैं सूत्रधार,
दो एक विश्व की तरणी के मद मत्त हुए हैं कर्णधार।
जिनके अन्तर में जलती है बस युद्ध युद्ध की ही ज्वाला,
प्रेरित करती है उसी ओर जिनको मधुशाला मधुबाला।
जिनके हाथों में दुनियाँ के मानव बन रहे खिलौने हैं,
वे भीम-काय उनके आगे नर बानर केवल बौने हैं।
सब ज्ञानी और विचार-वान कहते हैं उनको ज्ञानवान,
वे चाहें जग संहार करें, चाहें कुछ को दें प्राणदान।
उनकी इच्छा मच गया युद्ध सब शक्ति लग गयी उसी ओर,

मिल पायेगा कैसे किसको इस नाश चक्र का ओर छोर ।
दो एक नहीं ऐसे मानव, जिनका होता ऐसा प्रभाव,
रुक जाता कठिन कर्मनाशा का, प्रलयकारिणी का बहाव ।
क्या मानव को रण ही प्रिय है ? संघर्ष हीन वह निष्क्रिय है,
परिणाम रक्त-रंजित रण का फिर कैसे लगता अप्रिय है ।
क्यों पीड़ा उठती है मन में, सुन रण- विधवाओं की पुकार,
क्यों व्रीड़ा लगती है उर में, लखकर बम वर्षा त्रास भार ।
बालक बूढ़े, रोगी, भोगी वनितायें सब विकलांग त्रस्त,
प्रासाद गगन चुम्बी विशाल, बम वर्षा से आक्रान्त ध्वस्त ।
आश्वस्त अरे इतने में ही, चढ़ धायेगी अपनी सेना,
दूना उत्पात मचायेगी, मारेगी नर अपनी सेना ।
यह शैतानों का कारबार, अपने पग पर अपनी कुठार,
संसार बन गया समर भूमि, संहार सार, संहार सार ।
बम बरसाते विष, अग्नि ज्वाल, पीड़ित मानव कलपे तड़पे,
यह महानाश की ज्वाला है, कैसे मानव लतिका पनपे ।
शत शत पीड़ित आहत मानव, शत शत हृदयों के हार लुटे,
सत्ताधारी भृकुटी-विलास में दीनों के संसार लुटे ।
दुष्काल भयंकर, रोग बढ़े, रण-शेष चिता की सेज चढ़े,
मानव उन्नति के मार्ग बढ़े या महाकाल के गाल पड़े ।
सब व्याकुल करते हैं पुकार, रण निष्कारण एवं असार,
क्यों विफल चेष्टायें होतीं है शान्ति व्यवस्थायें असार ।
रण सर्वनाश का क्रीड़ा स्थल, मानव का भारी बक्षस्थल,
जिसमें सूखा मानवता का शुभ शान्ति प्रेम का सुन्दर जल ।
रण की रचना होती उस थल जो मानवता का वध्यस्थल,
पशु मूक नहीं, मानवता ही मारी जाती जिनमें प्रतिपल ।
पशु की वे मूक करुण आंखें मानव को नहीं हिलाती हैं,
चलती निष्करुणा की कुठार मानवता पास न आती है ।
तड़पा कलपा यह जीवित पशु पीड़ा से आह 'छटपटाया,
टांगें हिलती ही रहीं, छील दी खाल रक्त बाहर आया ।
यह खून ! मर गया पशु अथवा मानव के अंतर का मानव,
दिन दिन पशुओं को उदर मध्य देता समाधि केवल दानव ।

यह उस पशुता की पूर्ण पुष्टि संहार नाशकी चरम कोटि,
मानव लड़ते मरते कटते, इस महा समर में कोटि कोटि।
मधुशाला, मधुबाला करती मानव विवेक को नष्ट भ्रष्ट,
जीवन का इतना लक्ष्य ! सोचने का क्यों कोई करे कष्ट।
पोलैंड ध्वस्त, बेलजियम ध्वस्त, नार्वे स्वीडन होते परास्त,
हालैंड गया, वह फ्रांस गया जिसके सैनिक नामी समस्त।
हिटलर रावण की रण-कंडू, रण की अभिलाषा जय आशा,
विध्वस्त सन्धि वार्साई थी, हो गयी व्यर्थ जग की आशा।
कुछ रहे लुटेरे शक्तिमान वे लूट विभाजन कर बैठे,
अपने ही घर में जगती का धन लूट पाट कर ले बैठे।
उठ पड़ा लुटेरा एक और कहता है देखो बल मेरा,
या तो दो लूट-भाग मेरा या लो रण-आवाहन मेरा।
गिरते बम लन्दन, नन्दन-बन गिरते गिरिजाघर राज भवन,
यह रण है जिसमें मरते हैं बालक, बूढ़े, रोगी सब जन।
सेनायें ही अब युद्ध भूमि में रण न मचाया करती हैं,
सारी जनता पर शत्रु सैन्य, अब बम बरसाया करती है।
विस्मय से दुनियां ने देखे, असमय रण के भीषण बादल,
उठ पड़ा प्रबल होकर जग के संहार हेतु सारा पशु बल।
सुन कर रण सहमें, रण का क्या कारण है देते कभी ध्यान,
क्षण क्षण तो रण के साज सजे, रण संचालक मानव महान।
सब के सब रण के उपदान, उद्योग और विज्ञान ज्ञान,
दिन दिन रचते रहते मानव अपने विनाश के विष महान।
जब विज्ञानी ने खोजे थे, विष के बम, गैस, टैंक या गन,
तब क्या समझा था नहीं मचेगा इनसे जग में भीषण रण।
जब पृथ्वी के उर से निकाल कोयला तेल, लोहा, गन्धक,
मानव ने सृष्टि वनायी थी पर-पीड़क शोषक बंचक।
तब क्यों न उठे थे विमल भाव, मानव क्या करने जाता है,
अभिमानी मद में मत्त आप अपने से मरने जाता है।
जिस विष को वह था बना रहा वह ही लेता उसके सुप्राण,
मारेगा अपने ही भाई वह सैनिक गन धारी जवान।
जो उसको अन्न खिलाते हैं जो उसे वस्त्र पहनाते हैं,

इतना भी उसको ज्ञान नहीं, वे उसकी गोली खाते हैं !
उसको इतना अधिकार कहाँ, उपयोग कर सके आत्म-ज्ञान,
पर बश होकर वह हो न सका मानवता-मंडित हृदय बान
उसके तन मन धन का तो है अधिकारी कोई एक और,
उस अधिकारी का अधिकारी हैं बना हुआ दूसरा और।
इस बक्र-चक्र में फँसा हुआ अपने से ही है मिटा हुआ,
शोषण, दोहन का है शिकार पद-मूल सर्वथा कटा हुआ।
भर्राए बम वर्षक जहाज थर्राए नर-नारी-समाज,
गुर्राए थे 'तैमूर सभ्य' कल जहां रहे हम वहीं आज।

माँ आनन्दमयी



माँ आनन्द शतदल कमल ।
शान्त सरवर सहज विकसित, शुभ्र शाश्वत सरल,
ज्ञान, प्रेम-पराग वितरित, मधुर मधुमय अमल ।
शान्ति-सीता, प्रेम-गीता, जान्हवी सी धवल,
राम, श्याम, 'ललाम' शोभा, नित्य नूतन नवल ।

लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद

मानवी

विज्ञान वाद, जड़ वाद, विश्व की एक ओर विघटन लीला,
दूसरी ओर सात्विकता एवं शान्ति पूर्ण मां की लीला।
विन्ध्याचल है नयना-भिराम, जननी दुर्गा का शक्ति धाम,
पर्वत पवित्र के चरणों पर लुंठित गंगा धारा 'ललाम'।
चलती है मन्द सुगन्ध पवन, सात्विक शीतल पद सम रमरम,
आनंद भवन, आनन्द कुंज, आनन्द मयी मां का आश्रम।
भारत की भव्य भारती सी, युग युग की नवल आरती सी,
मां की मंजुल मोहक प्रतिभा, अग जग को जननि तारती सी।
नेत्रों में करुणा, वत्सलता, स्वर्गीय सात्विक मादकता,
बैठी थी सम्मुख नारी में वह मूर्तिमान सी मानवता।
श्वेताम्बर शुभ्र, श्वेत ज्योत्सना जननी थीं श्वेतांबर धारे,
गौरांग शुभ्र सुन्दर ललाट, कुंकुम पर कवि उपमा हारे।
मां, मुक्त-केशिनी, मुक्त-हासिनी, चिर-विलासिनी, मोदमयी,
आनन्द रूप, सात्विक स्वरूप, आनन्द मयी, आनन्द मयी।
परितृप्त अमृत सा पान किये, पद्मा सी मधु का दान दिये,
विकसित जगती के सरवर में आ-कंठ प्रेम स्नान किए।
आश्रम की वायु पवित्र स्वच्छ, बहती थी भावों की गंगा,
अन्तर-सलिला, विमला, सरला, बहती नीरव करुणा गंगा।
आते थे शत शत भक्त वृन्द मधुकर से मां सरोजिनी थीं,
आनन्द मयी, आनन्द मग्न वार्तायें प्रिय विनोदिनी थीं।
चरणों के निकट सरल बालक से बैठा करते एक व्यक्ति,
साधना देहली पर होती पांडित्य ज्ञान, श्रद्धाभिव्यक्ति।
देखे हैं कितने चित्र और कितने जग के मानव विचित्र,
अनुपम प्रसन्नता की प्रतिभा मैंने देखी प्रत्यक्ष मित्र।
कल्पित सी हृदय पटल पर हैं श्री राम श्याम शोभा 'ललाम',
भगवान, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद सब की नव छवि लोकाभिराम।
पगली मीरा की प्रेम मूर्ति, चैतन्य देव की शान्त मूर्त्ति,

'तुलसी', 'कबीर', 'नानक', फकीर श्री सूरदास की प्रेममूर्ति।
वेदान्त, ज्ञान-अवतार धन्य श्री राम तीर्थ आधुनिक सन्त,
श्री राम कृष्ण से परम हंस अपने युग के अवतार सन्त।
पावन विवेक की नवल मूर्ति धीमान विवेकानन्द सन्त,
श्री दयानन्द ऋषिवर पुनीत आनन्द रूप आधुनिक सन्त।
इन चर्म चक्षुओं ने देखी मां के शरीर में वह प्रतिभा,
जो व्यक्त न शब्दों से होगी अनुपम छवि की अनुपम सुषमा।
पाकर त्रैलोक्य संपदा भी होगा कोई इतना प्रसन्न,
आनन्द कमल ही विकसित था शाश्वत अनन्त एवं अविछिन्न।
वक्षस्थल में करुणा-जल था, आनन्द-बदन नव उत्पल था,
गुञ्जरित अंग से शान्त-भाव, सुन्दर मुख मंडल पल पल था।
दो क्षण को ही कर कर प्रयास जब अपनी हृदय कली खिलती,
तब लघु आभा प्रसन्नता की अपने मुख मंडल पर मिलती।
सच्चिदानन्द साकार हुआ, वत्सलता का अवतार हुआ,
जिसको हरने जननी आयी वह धन्य धन्य भूभार हुआ।
करते ही उनका चरण परसत विद्युत सी तन मन मैं दौड़ी,
थे मुक्ति धाम, युगपद 'ललाम' शीतल सुन्दर हरि की पौड़ी।
तन के विकार, मन के विचार, उड़ गये वायु से यथा अभ्र,
अन्तर नभ में ज्योत्स्ना छिटकी नीरव विशुभ्र एवं निरभ्र।
मन मुग्ध मौन मधु पान लीन, दो क्षण को तो वासना हीन,
इतना सुन्दर दर्शन-प्रभाव, मन शान्ति प्रेम पद समासीन
धीरे धीरे अन्तर तल में सौम्यता सुरसरी बहती थी,
निर्मल भावों का था पराग वाटिका सुगन्ध सरसती थी।
दर्शक जन नेत्रों से प्रसन्न पुलकित उनको मां कहते थे,
माता के मौन निदेश शान्त, अन्तर धारा में बहते थे।
भूले थे हम सब समाचार विध्वंसक बम वर्षा प्रहार,
कहती थी मां की शान्ति मूर्ति, संसार अरे केवल असार।
जिसमें मानव का प्रेम नहीं, मानव सेवा का नेम नहीं,
मानव पर मानव का प्रहार होता है दारुण आह यहीं।
जग के वैभव के नाम लिखा मेरी मां का घोषणा पत्र,
सुख शान्ति विनश्वर धरणी पर तुम खोज रहे हो यत्र तत्र।

खोया है अपना मनोराज्य, क्या देगा तुमको विश्व राज्य,
जगदीश्वर तेरे अन्तर में, अपना अन्तर ही तुझे त्याज्य।
यदि विश्व शान्ति की इच्छाएँ, मानव मानव बनने आओ,
यह विश्व क्षेम का मार्ग नहीं, मारो एवं मरने जाओ।
सुख की कुन्जी सन्तोष ज्ञान, विज्ञान बढ़ाता इच्छायें,
इच्छाओं पर यदि जगत-जयी मानव अब भी जय पा जायें।
तो स्वर्ग हृदय के भीतर है, कुटिया बन जाये नन्दन बन,
दे सके शान्ति बर्लिन, पेरिस से नगर शिकागो औ लन्दन।
नर जीवन में अमरत्व यही, पुरुषार्थ यही है स्वत्व यही,
पालेना अपना मनोराज्य नर का है सत्य नरत्व यही।
दो क्षण का सुख मां के दर्शन से ऐसा पाया आत्मिक सुख,
जिसकेसम्मुखसबक्षणिकत्याज्य,थाअतुलनीयआध्यात्मिकसुख।
मां की जीवन-गंगा उज्वल, वे काम क्रोध के ग्राह प्रबल,
डूबे रहते थे नीचे ही ऊपर था गंगाजल निर्मल।
निर्मल जल में शरदेन्दु हास उत्तम आध्यात्मिक चिर-विलास,
देखेगी क्या अपनी दुनियां यह ज्ञान प्रेम का नव प्रकाश।
ईश्वरता का वत्सलता का यदि खीचें हम काल्पनिक चित्र,
तो वह होगा आनन्द मयी मुख मंडल सा सुन्दर पवित्र।
जितने दर्शन हैं, जो प्रसिद्ध हैं धरणी पर धार्मिक सुतत्व,
जितने साधन हैं जो प्रसिद्ध हैं मुद्रायें शिव शान्त सत्य।
मां मुख मंडल पर उद्भासित सुन्दर दैवी उत्तम प्रकाश,
आलोकित था नव दिव्य तेज, वह शान्तिपूर्ण था चिदाकाश।
थीं शान्त ज्ञान, वैराग्य पूर्ण जननी तपस्विनी सीता सी,
बहती अक्षर अव्यय धारा गंगा की, निर्मल गीता सी।
आश्रम का वातावरण शान्त, मां की मुख मुद्रा परम शान्त,
आपूर्ण अचंचल था समुद्र, शिव चन्द्र कान्त गंभीर शान्त।
अधरों से सुन्दर नेत्रों से व्यंजित होते वात्सल्य भाव,
अद्भुत, अनुपम आनन्दमयी अमलानन पर आनन्द-भाव।
वह कौन संपदा है जिसको पाकर जननी इतनी प्रसन्न,
जगती का सुख-विलास तज कर माता क्यों थीं इतनी अखिन्न।
बतलाये कोई भी उत्तर संशय वादी अथवा नास्तिक,

वह कौन सम्पदा है जिस पर सब कुछ तज देते हैं आस्तिक।
'भ्रम ? केवल आत्म-वञ्चना है, यह एक मानसिक है विकार,'
है सत्य जगत क्षण भंगुर यह ? यह काम क्रोध मद का प्रसार।
इस पार्थिव जीवन के ऊपर जीवन का भी कुछ हो विचार,
दैवी सम्पति सरलता का जीवन निर्मम है निर्विकार।
अति दिव्य ज्ञान, आनन्द प्रेम का यह ज्वलन्त जीवित प्रमाण,
वह सब कुछ केवल हेय त्याज्य जिस पर देते हैं पुरुष प्राण।
जिस सुख की ओछी छाया में नर बन बैठे चंचल वानर,
संसार वृक्ष ही वह क्या है, कांपा करता है थर थर थर।
अन्तर तम मानस की गंगा, आनन्द शान्ति का श्रोत मूल,
आनन्द-वाद, आनन्द-नाद होता है इसके युगुल कूल।
मृग तृष्णा का मृग भ्रमित थकित वासना पिपासाकुल व्याकुल
चिर शान्ति प्रेम की धारा में पायेगा निश्चय तृप्ति विपुल।
जग को मां का सन्देश मौन, सुख शान्ति प्रेम के अभिलाषी,
अपने अन्तर तम में खोजो काबा, मक्का, मथुरा, काशी।
कुछ क्षण उपराम रहो, बैठो एकान्त शान्ति सुख आसन पर,
सोचो तो तुम हो यहां कौन, इस धरणी के सिंहासन पर।
तुम राजेश्वर, तुम परमेश्वर, तुम कहां दीन एवं गुलाम,
आनन्द धाम, तुम पूर्ण-काम, लोकाभिराम तुम हो ललाम।
अग जग जीवन जल में छाया, तुम से निर्मित सारी माया,
भूले हो तुम आनन्द-मूल, तुम पकड़ रहे अपनी छाया।
आनन्द-प्रेम का उत्सव है, मानव जीवन का शैशव है,
अपने अन्तर तम में सुन लो, आनन्द प्रेम का हीरव है।
सब पृथ्वी के मानव अनूप, अपने स्वरूप सब रंक भूप,
जीवन तो नाटक-शाला है, क्यों कहते इसको अन्ध कूप।
हँसते, मिलते, सेवा करते जीवन की लीला हो समाप्त,
अपने वैभव का ध्यान धरो, तुम स्वयं देव तुम स्वयं आप्त।
जग के दुख ये वैषम्य विषमे इनके तुम हो केवल कारण,
तृष्णा की ज्वाला ने ही तो नन्दन-बन कर डाला निर्जन।
अर्थ तुम्हारा दीन दास तुम हो उसके स्वामी समर्थ,
लघु अर्थ और उसका संचय करना करना है जन्म व्यर्थ।

परमार्थ लक्ष्य है, अर्थ नहीं, वह तो जीवन-यात्रा साधन,
बलिदान भोग के साथ रहे तो क्यों हो जग में रण भीषण।
आस्तिक, श्रम जीवी सन्तोषी, सुख भोगी होकर भी योगी,
चेतन क्यों हो जड़ता-योगी क्यों कोई हो मानस-रोगी।
विज्ञान विश्व में मानव को प्राकृतिक दुग्ध सुख वैभव दे,
शुभ ज्ञान, आत्मिक शान्ति प्रेम का सुन्दर मधु उसमें भर दे।
मानव मानव भाई भाई सब प्रेम शान्ति से सदा रहें,
उज्वल जीवन, उज्वल तन मन सब सौम्य साम्य में सदा बहें।
भय, संशय, जग विद्वेष क्लेश, रह जायेंगे तब नाम शेष,
सब स्वस्थ सुखी चिर शान्त कान्त, सब मानव हों शंकर महेश।
अविराम अचंचल बहती थी आनन्द प्रेम घन की धारा,
गंगा जल का पीयूष-पान होता था भक्तों के द्वारा।
सम्मुख गंगा की गोदी से निकला आता था बाल चन्द,
जननी की गोदी भरने को बढ़ता आता था विमल चन्द।
शीतल किरणें तन को शीतल करती थीं शान्त बनाती थीं,
मां की वत्सल मंगल किरणें नेत्रों से हिय हुलसाती थीं।
प्रारंभ हो गया आश्रम में भक्तों का प्रेम पूर्ण कीर्तन,
आनन्द-लीन थी प्रकृति-नटी, करतीं मयंक किरणें नर्त्तन।
मां सम्मुख नीरव शान्त मुग्ध, निर्मल करुणा जल से छल-छल,
भक्तों के पावन वक्षस्थल, जननी के कोमल शीतल पद।
जीवन में दुख सुख दोनों का मेरा अनुभव है तीव्र विकट,
सोया हूँ एवं रोया हूँ शैया, मरघट के परम निकट।
आनन्द शान्ति अनुभूति आज यह थी अपूर्व ही लोकोत्तर,
दो क्षण का था सत्संग किन्तु इतना परिवर्तन था सत्वर।
उज्वल साड़ी उज्वल तन मन, पाटलि की थी विशाल माला,
मन मन्दिर करती है सुरभित मां प्रतिमा करती उजियाला।

संकट-बेला

फैलाई थी हिंसक जग ने निज सर्वनाश क्षय की ज्वाला,
जपते यूरुप के नर नारी अपने ही स्वार्थों की माला।

भारत का नेता गांधी था, अवतार नवीन अहिंसा का,
उनको उनके प्यारे स्वदेश को युद्ध सर्वथा अप्रिय था।
इस दीन हीन आधीन देश को, बरबस रण-पथ पर ठेला,
आयी थी दुख दायी भारी संकट की भारत में बेला।
रण की घोषणा हुई भारत भी समरांगण का भागी था,
भारत जो सत्य अहिंसा का अनुगामी था अनुरागी था।
मंत्रीगण परदेशी शासक के अनुगामी यदि बने रहें,
तो युद्ध-कार्य में संचालन के यंत्र-मात्र वे बने रहें।
धन जन की पूरी आहुति हो, आधीन देश की दुर्गति हो,
रह सकता अब शासन-पद पर कोई भी पूरा दुर्मति हो।
आजादी की प्यासी जनता, करती आजादी की पुकार,
पानी के बदले पत्थर था, थी राष्ट्र-नाव ही मध्य धार।
'याञ्चाऽमोघा था' असफल प्रयत्न, थे सारे अनुनय विनय विफल,
बापू सन्तप्त निराश हुए, सब भारतीय विक्षुब्ध विकल।
'भारती अहिंसक हैं, रण से हिंसा से अपना काम नहीं,
हम देंगे एक जवान नहीं, हम देंगे एक छदाम नहीं।
बापू का रण आवाहन था फिर देश भक्ति अवगाहन था,
फिर मातृ भूमि की वेदी पर अर्पित वीरों का तन मन था।
मन्त्री आदिक पद छोड़ चले, यह बापू का अनुशासन था,
कारा औ शासन-पद समान ! वह तपस्वियों का शासन था।
कंदुक सा पदाघात खाता शासन-पद-वैभव फिरता था,
थे भरत वंश के भारतीय कारा-बन पर मन चलता था।
वे वीर वंश के मानव थे, बलिदान तपस्वी के लाघव,
था भोग त्याग के साथ साथ आदर्श देश के श्री राघव।

त्याग

सातों प्रान्तों के मन्त्री गण जिनके शासन अधिकार विपुल,
वे प्रान्त सुविस्तृत महादेश, शासन पद वैभव शक्ति अतुल।
कौमी फकीर सब एक वीर गान्धी का सुन सन्देश विमल,

तृण सम मंत्री पद त्याग चले, उनके चरित्र उज्वल निर्मल।
मंत्रीगण कारागार चले, सुन कर सब संसारी दहले,
वे आजादी के सैनिक थे, आजादी पर मचले निकले।
उनका भारी अपराध यही कर देना निर्भय शंखनाद,
'भारत भी महा समर-भागी यह कुचक्रियों का है प्रमाद'।
श्री पन्त चले, श्री पुरुषोत्तम एवं संपूर्णानन्द चले,
काटजू, विजय लक्ष्मी पंडित श्री इब्राहीम सहर्ष चले।
किदवई, जवाहर लाल चले, श्री कृष्ण सिंह सानन्द चले,
राजा जी एवं रवि शंकर श्री विश्वनाथ श्री खेर चले।
पंजाब वीर थे इफतिखार श्री आसफ अली सहर्ष चले।
श्री कृष्ण दत्त, सक्सेना जी, श्री वेंकटेश जी जेल चले।
श्री श्री प्रकाश, कमलापति जी, शत्रुघ्न सिंह जी जेल चले,
करते जीवन का खेल चले करते जीवन का मेल चले।
प्रत्येक प्रान्त में नगर ग्राम सत्याग्रहियों की धूम मची,
प्रति ग्राम ग्राम में धाम धाम सुन्दर बलिवेदी गयी रची।
जीवन होता आते अशंक, राष्ट्रीय यज्ञ रच रहे रंक,
बलिदान त्याग की ज्योत्स्ना थी, जन सेवक थे मंजुल मयंक।
बलिदान, प्रदर्शन हीन रहा, सब शान्त वीर कारावासी,
गान्धी के सेवा-पथ-गामी थे कोटि कोटि भारतवासी।
भूखे सूखे नर नारायण, सेवा व्रत का है पारायण,
नर की सेवा से ही प्रसन्न होते हैं सच्चे नारायण।
बलिदान त्याग की ज्योति जगी, जनता अपने कर्त्तव्य लगी,
भावना, कामना तरुणों की थी देश भक्ति के रंग रंगी।
निरुपद्रव एवं शान्त हुआ हिंसा का वह प्रतिरोध शान्त,
बापू का अस्त्र अमोघ रहा, सैनिक दीक्षित थे वीर शान्त।
एकत्र ग्राम जन धाम धाम, सुनते बापू आज्ञा ललाम,
हिंसा का रण, यह आयोजन, हमको हराम सब को हराम।

निरंकुश

हँसते हँसते चल देते थे कारागृह को वे वीर शान्त,
करते जाते थे पग पग पर दुश्शासन उपसंहार अन्त।

शासन-सुधार इतने असार, हमको इतना अधिकार नहीं,
हम कह दें विश्व समर में है हिंसा अपना व्यापार नहीं।
यह पराधीनता, परवशता, सर्वत्र निरंकुशता समर्थ,
करती थी शान्ति चेष्टा को नव उद्‌गारों को पूर्ण व्यर्थ।
गान्धी-वाणी, युग की वाणी, सर्वोदय-कारिणि कल्याणी,
पा सकते हैं सुख शान्ति सभी सन्तप्त त्रस्त भूतल-प्राणी।
हिंसा के आराधक! तृष्णा के व्यवसायी ओ व्यापारी,
रुक जाओ शिर पर भार धरे किस ओर तुम्हारी तैयारी।
लेकर कर में जलती ज्वाला तुम किसे जलाने जाते हो,
मन को कुछ तो शीतल कर लो, तुम कैसे मद के माते हो।
जीवन सरिता का सलिल सरल गति से भूतल पर बहने दो,
पृथ्वी विशाल, पर्याप्त प्रचुर, तुम रहो, सभी को रहने दो।
अपनी मानवता दिखलाओ, मत पन्थ कुटिल करते जाओ,
जीवन का सुन्दर पन्थ सरल हँसते आओ हँसते जाओ।
जग पुष्प-वाटिका सुन्दर है तृण तृण कण कण अति सुन्दर है,
अन्तर मलीन हो दीन हीन है, अशिव असत्य असुन्दर है।

शोषण

कैसी वैज्ञानिक दुखद सृष्टि जिसमें पग पग पर है पीड़ा,
परदोहन पर अपहरण नित्य दानवी सभ्यता की क्रीड़ा।
हैं धूम्र उगलते दानव से भू घराकार वे यन्त्रालय,
हैं तने व्योम तक आज व्यर्थ वे बने विराट यंत्रणालय।
हैं सने स्वार्थ पर शोषण से उनमें जलते मरते मानव,
विकराल वृकोदर मानव को दुख के देने वाले दानव।
यह दौड़ धूप! यह आतुरता! गन्तव्य तुम्हारा अन्ध कूप,
इतना विनाश! यह असन्तोष! मानव तेरा ऐसा स्वरूप।
रण-आयोजन, रण-उत्पादन, रण ही रण की उद्धत पुकार,
तुम सुन न सके ओ बधिर मदिर पीड़ित मानवता की पुकार।
देखो देखो रण के मदान्ध, मानव ये कोटि कोटि मानव,
भूखें, नंगे, जड़, ज्ञान-हीन, ये नाम-मात्र को हैं मानव।

कंकाल डोलते जन पथ पर कुछ चिथड़े कटि पर टँगे हुए,
आनन्द-हीन, चेतना-शून्य, जीवन-विशाद में रँगे हुए।
कूकर भी उनको देख देख भूंका करते वे अस्थि-मात्र,
चाटा करते जूठी पत्तल, पाला करते हैं क्षीण गात्र।
गोबर से दाने बीन बीन कर खाता है भूखा मानव,
कूकर से जूठन छीन छीन कर खाता है सूखा मानव।
उसके खंडहर ऐसे घर में जब घुस आता है शीत काल,
वह अपनी जान बचाने को घुस जाता है भीतर पुवाल।
पृथ्वी के फोड़े से टूटे फूटे मिट्टी के गंदे घर,
वे घर हैं अथवा करुणा के निर्धनता के नीरव खंडहर।
उनके टेढ़े मेढ़े बच्चे शिक्षा कैसी, दीक्षा कैसी,
जीवित तो रह लें वे कीड़े यह कठिन परीक्षा है ऐसी।
मर्दित मानवता का मन में उठता न तुम्हारे है विचार,
रण-मत्त हुए तुम निकल पड़े करने मानवता पर प्रहार।
मानव प्रधान, मानव, महान कहता है कोटि कठ गांधी,
जलने दो मन में प्रेम-दीप रोको यह शैतानी आंधी।
इस कहने पर भारत वासी हो जाते हैं कारावासी,
कै दिन चल पायेगी अनीति अत्याचारी सत्यानाशी।

जीवन-दान

थोथे ओछे अधिकारों पर, स्वार्थी लोभी व्यापारों पर,
मरते रहते हैं जहाँ कोटि धन पर धन के आगारों पर।
अपने जीवन का दान वहां अपने हार्दिक उद्गारों पर,
शीतल जल छिड़का वीरों ने जलते दाहक अंगारों पर।
विद्वेष, कलह, हिंसा, रण से उपराभ विश्व जब चेतेगा,
तब विश्व शान्ति के मन्दिर के इन उपासकों को देखेगा।
संपूर्ण विश्व कल्याण हेतु जो अपना तन मन वार चुके,
अब भी तृष्णा व्यापार रुके अब भी मानव संहार रुके।
दानवी सभ्यता अपने में ही सर्वनाश के दंश लिए,
जा रही काल के महा गाल मानव शोषक के वंश लिए।

विन्ध्याचल

अनुकूल जान्हवी कलित कूल, विन्ध्याचल है आनंद मूल,
सोई है कब से आदि शक्ति नीलाम्बर का ओढ़े दुकूल।
मधु कैटभ, शुंभ, निशुंभ दैत्य, मानव शोषक मानव पीड़क,
दानवता के थे उग्ररूप, मानव-शिर थे उनके कन्दुक।
दुर्गा, जन जन की संघ शक्ति, हृदयों की श्रद्धा प्रेम भक्ति,
जन जन की जाग्रत कुंडलिनी थी विश्व-विजयिनी योग शक्ति।
असुरों के थे व्यापार मिटे, हिंसा तृष्णा के भार मिटे,
संहारक रक्त बीज पापी अत्याचारी-उत्पात हटे।
पन्नों में स्मृति है शेष आज, भूली सच्ची दुर्गा पूजा,
जब मूल शक्ति है छिन्न भिन्न, किसका मंदिर, कैसी पूजा।
निर्द्वंद्व विचरते रक्त-बीज जो पीकर नर का रक्त जिये,
मानव का बस कंकाल मात्र नीरक्त और निर्बीज किये।
मां के आराधक कोटि कोटि, अद्भुतपूजा, अद्भुत साधन,
जननी के मन्दिर से होता, जग की जननी का निष्कासन।

बलिदान

मां, मां, मेमना पुकार उठा मन्दिर में मां की मूर्ति कहां,
निष्प्राण हो गयी पाषाणी कब से है अन्तर्ध्यान वहाँ।
मां पाप, पोप-लीला लखकर मंदिर से आज विलीन हुई
मां की सन्तानें कलप कलप, मरती हैं दिन दिन दीन हुई।
बहता मूकों का गरम रुधिर, साधक करुणा से हीन बधिर,
पीते निरीह का उष्ण रुधिर, आराधक हैं धर्मान्ध मदिर।
दो दिन भी जननी का जीवन-प्रद दूध नहीं पीने पाया,
दो दिन भी हँस कर उछल कूद मेमना नहीं जीने पाया।
गोदी में उसको भक्त लिए आयी देवी के प्रांगण में,
या धर्म क्षेत्र के बध्य स्थल में, दानव के समरांगण में।
शिर पर चन्दन, जल, पत्र, पुष्प, बलि-पशु की पूजा होती है,
या मानव-तृष्णा दानवता की दिन दिन पूजा होती है।

आया रक्ताम्बर, रक्त वर्ण कर में भीषण करवाल लिये,
मानवता का विकराल बधिक, वक्षस्थल में बहु व्याल लिये।
उसकी आंखें हैं लाल लाल करवाल खून से लाल लाल,
कानों को खींचा, टांगों को ताना, दारुण घटना कराल।
झटके में शिर धड़ अलग हुआ बह गया खून हा गरम गरम,
धार्मिक साधन में लीन अहो मन्त्रोच्चारण गंभीर परम।
चूता था शिर से रुधिर अभी भैरव के शिर पर जा रक्खा,
शिर पर उस मृदुल मेमने के वह लो जलता कपूर रक्खा।
अन्तिम मुद्रा मेमना मरा, मुख खोला फिर हो गया शान्त,
उसके शव को अब छील छील ले रहे प्रसादी धर्म-भ्रान्त।
यह है धार्मिक बलिदान, अरे मां का मन्दिर या श्मशान,
इसके बल पर वरदान ज्ञान, बहु ऋद्धि सिद्धि वैभव महान।
प्रत्यक्ष साधना पूजा का परिणाम विश्व में हम गुलाम,
कूकर शूकर से डोल रहे हम दीन, हीन, मानव ललाम।

पूजा

युग-युग से है अभिशाप हमें, ऐसी पूजा तो पाप हमें,
लेते हैं सब कुछ छीन गैर, देते हैं बहु सन्ताप हमें।
हैं जहां धर्म के कर्म नित्य, है जहां दया-औ प्रेम नित्य,
है वहां सम्पदा जीवन की, सब का जीवन में क्षेम नित्य।
अध्यात्म नहीं दौरात्म्य भला धार्मिक बन सकता कभी बधिक,
धार्मिक अतिमानव होता है, जीवन में करुण उदार अधिक।
भूले हम मां की मूल शक्ति, भूले हम सच्ची प्रेम-भक्ति,
आसक्ति मलिन तम जीवन की, है कहां मुक्ति, है कहां सुक्ति।
जिसमें बलिदान त्याग होगा, जिसमें संगठन शक्ति होगी,
वह मानव अजर अमर होगा, जिसमें मानवी भक्ति होगी।
पूजा का इतना सरल पंथ, तज रे मानव वह कुटिल पंथ,
है सत्य दया सर्वत्र प्रेम, कहते सब धार्मिक श्रेष्ठ ग्रन्थ।

ज्ञान

जिनमें अध्यात्मिक, शक्ति-ज्ञान, जो कम वीर हैं वीर्यवान,
उनकी वसुधा वैभव विशाल जो कर्मठ हैं मानव महान।
संपदा ज्ञान की दासी है, ज्ञानी को सब जग काशी है,
ज्ञानी है तुष्ट प्रसन्न सदा, मानव मन्दिर-अधिवासी है।
जीवन में दुख आपदा घोर सब के हम हैं उत्तरदायी,
अज्ञान-निशा, आलस्य-घटा अपने जीवन-बन में छायी।
आयी है गांधी की आंधी दुख-बादल होंगे छिन्न-भिन्न,
मानवता का मंजुल मयंक चमकेगा जग नभ में अखिन्न।
दो पग सन्तों के साथ-साथ चल पाये जीवन-पथिक धन्य,
बापू से शान्त तपस्वी से था कौन मनस्वी अधिक अन्य।

सन्देश

कोलाहल जनगण ध्वस्त व्यस्त हैं अस्तव्यस्त मानव समस्त,
मानवता का सन्देश लिए कहता है गांधी व्यथित त्रस्त।
सुन लो, दो क्षण को तो सुन लो, रुक जाओ जग के प्रलयंकर,
तृष्णा-किंकर जग-पथ-बाधक कंकर बन जाओ शिवशंकर।
शिरभूषण हैं मंजुल मयंक, शीतल, सुन्दर उज्ज्वल मनहर,
छिटकाओ प्रेम, शान्ति ज्योत्स्ना जगती को करदो शिवसुन्दर।
भावों की मन्दाकिनी बहे शीतल सुन्दर संसार रहे,
सब की सेवा, सब से सनेह, सब का प्यारा संसार रहे।
सब का सेवा का पुण्य क्षेत्र, अपना अपना है धर्म क्षेत्र,
कोई माधव, कोई पाण्डव, सब का है अपना कुरु क्षेत्र।
कोई वेदी मंडप रचता, कोई है अग्नि ज्वलित करता,
कोई घृत, पत्र पुष्प धरता कोई जीवन, तन, मन धरता।
सब का महत्व, सब का गुरुत्व, राष्ट्रीय यज्ञ के संचालक,
कल्याण पंथ के पथिक धन्य हैं सत्य अहिंसा व्रत-पालक।

कितने थे चन्द्र वदन ऊने, कितने आनन्द-भवन सूने,
सहते थे कोमल राष्ट्र-फूल कारा में दिन दिन दुख दूने।
माई के लालों की लगती कारागृह में अब धूनी थी,
कितने गुलशन वीरान हुए, कितनों की गोदी सूनी थी।

नन्हा घर

तिनके तिनके को जोड़ बनाया, नीड़ एक छोटा सुन्दर,
आँधी आयी झूला डोला, टूटा टूटा नन्हा सा घर।
आये दो चार शान्ति के क्षण, रचना करते बैठा ज्यों ही,
उठ पड़ा बवंडर उग्र घोर, उड़ गये चार तिनके त्यों ही।
फिर कर बैठा उपवन डेरा, घोंसला मनोहर था मेरा,
तीसरी बार बनते गिरते, घर बना नितान्त सुघर मेरा।
जान्हवी कूल, आनन्द मूल, हंसते बालक, हँसते प्रसून,
हँसते से हँस कुमार सभी, था कौन अधिक, था कौन न्यून।
दैव संगीत, मधुर वीणा, संयोजित सुन्दर वाद्य यंत्र,
गुंजरित भवन, गुंजरित हृदय, आनन्द प्रेम का शांत मंत्र।
श्रम से, ईश्वर अनुकम्पा से मेरी कुटिया थी नन्दन बन,
पुलकित तन था,पुण्योदय था,विकसित था मेरा सरसिज मन।
जीवन-बन से उत्तीर्ण शान्त मन स्वस्थ और आनन्द धाम,
कंटकाकीर्ण जन उपवन में विकसित प्रसून सुरभित ललाम।
जिसका प्रसून उसकी सेवा में लग जाये अवसर रहते,
हो जाय न जीवन व्यर्थ कहीं, यों ही गिरते मरते झरते।
जो रंग चढ़ा है और गन्ध जो इसमें आन समायी है,
अनुराग-सुधा वसुधा-तल में इसने जितनी भर पायी हैं।
अवसर पर सब अनुराग-मयी जननी पद-तल पर चढ़ जाये,
सुमनों की पूजा-बेला में निज रूप रंग से बढ़ जाये।
कैसा उपवन ? कैसा प्रसून ? कैसा घर यह नादानों का,
मिट जाना ही तो जीवन है, स्वागत स्वागत तूफानों का।

कैसी सुख की आसक्ति तुच्छ? किस वैभव की अनुरक्ति तुच्छ,
बज गयी देश में रण-भेरी ये कोमल गाने तुच्छ तुच्छ।

धूनी

अब तो कुछ दिन को हे भाई धूनी अलमस्त रमाना है,
शत शत प्रासादों को वारूं उन जेलों की दीवारों पर।
रातें बीतें गी गिन गिन कर उन उज्ज्वल उज्ज्वल तारों को,
शत शत चित्रायें बलि जायें नभ के उन हीरक हारों पर।
बस शान्त शान्त, संगीत नाद, आह्लाद कलित कोमल प्रसाद,
शत शत वीणायें बलि जायें, वेड़ी की मृदु झनकारों पर।
सुन्दरता का मैं प्रेमी हूँ, कोमलता मुझको भी प्रिय है,
अब कोमलता, सुन्दरता को, वारुं कर्कश व्यवहारों पर।
निश्चय है पूर्ण विजय होगी, सर्वदा सत्य की जय होगी,
यदि हारा भी तो वारुंगा शत विजयों को इन हारों पर।
अपनी यह जीवन-नाव चली आनन्द सिन्धु की धारों पर,
वे जानें जिनकी टकराये चट्टानों और कगारों पर।
नारायण प्रांगण का भूषण, कर में लेकर राष्ट्रीय ध्वजा,
वह वीर बाल उत्साह पूर्ण, चिल्लाता रहता इनक़लाब।
बापू को उसने देखा था हँस बोला था ये गांधी जी,
मुस्काये थे उस चंचल पर बालक से चंचल गान्धी जी।
चलता था मेरे साथ साथ लेकर कर में राष्ट्रीय ध्वजा,
हरदम जलस का आनन्दी, चिल्ला कर गाता इनक़लाब।
नटखट था किन्तु सभाथल में बैठा करता गंभीर मना,
टेढ़ी खादी की टोपी देकर वह था नेता एक बना।
कहता था बाबू! जेल गये पांडे जी श्री भूदेव दुबे,
तुम घर में ही रह जाओगे बैठे, ऐसे ही दबे दबे।
आंगन में उसका खेल यही भाई बहिनों को जोड़ जोड़।
नारे भर जोर लगाता था गाना रहता जी तोड़ तोड़।

उसका मेरा समझौता था अब जाऊंगा मैं स्वयं जेल,
उसके खेलों की तरह जेल थी हमको भी अब एक खेल।

दे जाऊंगा तुमको बेटा जाने पर दो आने पैसे,
वह नित्य मनाता था आए वह दिन जल्दी जल्दी कैसे।

बिदा

चाची माता, भाई बहनों से मांगी थी कर जोड़ विदा,
माता, ममता की सजल मूर्ति, चाची सप्रेम दे चुकी बिदा।
जननी के शीतल करुण चरण उनका मार्मिक अनुराग अरुण,
आई थीं चलकर दूर आह ! उनकी आखें थी सजल करुण।
तीसरी बार कारा-यात्रा, घर एक अकिंचन की कुटिया,
जीवन भर दुख सहते सहते, अब थीं जननी बुढ़िया दुखिया।
लीला रानी उसकी माता को पढ़ने काशी जाना था,
हमको निश्चित दिन बापूकी आज्ञा से कारा जाना था।
प्रिय उपवन की पत्ती पत्ती, फूलों का मृदु प्रत्येक पटल,
परिचित था एवं सिंचित था मेरे सनेह से सुघर मृदुल।
जिसको दस वर्ष सजाया था उसको मैं आज उजाड़ रहा,
हँस हँस कर अपना भाग्य स्वयं मैं अपने आप बिगाड़ रहा।
फूलों के गमले बाँट दिये, फूलों से मेरा क्या नाता !
कंटक पथ का अनुगामी था, काटों से ही मेरा नाता।
चित्रों को नारायण, लीला कमरों से आज उतार रहे,
मेरा बस कारागार रहे, हो जिसका सुख संसार रहे।
दिन भर में वह आनन्द केलि का धाम हो गया था सूना,
हो गया हृदय कोना सूना, घर का कोना कोना सूना।
सन्ध्या को मित्रों ने मिलकर सह भोज बिदाई दी सुन्दर,
नारायण, लक्ष्मण, लीला थे मिष्ठान्न उड़ाते हँस हँस कर।
हृदयों का भीषण स्पन्दन था, देवी जी पर गुरु भार आह !
कुछ आंसू धृष्ठ निकल आए मनकी मनमें रह गई चाह।

घर से सत्याग्रह करने को चल दिया मुदित आकुल आतुर,
क्या जाने रह रह प्राण हुआ करते हैं क्यों योंही व्याकुल।
पागलपन, दीवाना पन है ? सुनते ही गान्धी की वाणीं,
सब कुछ तज बनते हैं फकीर भारत के कोटि कोटि प्राणी।
सत्याग्रह का शुभ समय हुआ, निश्चित था बापू का नारा,
उत्सुक थी स्वागत करने को अब मेरा भी प्यारी कारा।
"फरमान अहिंसा गान्धी का, हिन्सा है अपना काम नहीं,
हम देंगे एक जवान नहीं, हम देंगे एक छदाम नहीं"।
सब से सानन्द बिदाई थी, नट खट नारायण मुगल बना,
'मेरे दो आने पैसे दो, बाबू से अब मतलब इतना।
चंचल के खरे तगादे पर हँस दिये सभी माता रोई,
कैसा पैसा ! किसके बेटे ! क्या होगा कह सकता कोई ?
दो बूंद गरम आंसू सूखा था एक नेत्र के कोने में,
टपका दूसरा नितान्त धृष्ट मां के अंचल के दोने में।
लघु वैभव के वरदान बिदा, सुख के कोमल अरमान विदा,
वेदना संगिनी जीवन की, थोड़े दिन के मेहमान बिदा।

कारा

कारा में श्रीयुत विश्वनाथ श्री राम दुलारी देवी थीं,
श्री व्रज भूषण गङ्गा सिंह सब की पूज्य भारती देवी थीं।
श्री युत भूदेव दुबे पंडित हनुमान प्रसाद बिराजे थे,
श्री सीताराम नबी नूतन, बन्दी जीवन अनुरागे थे।
पृथ्वी पर कम्मल बिछे हुए ऊभड़ खाभड़ बैरक अपनी,
कम्मल के कोटों की सुन्दर थी जाड़े की पोशाक बनी।
झलरा रोटी का भोजन था, जलपान चने का होता था,
मिल जाता था गुड़ कभी-कभी मिषठान्न वही तो होता था।
दुर्गन्धि भरे झीने कम्मल, शर शिशिर चलाता था हम पर,
ताका करते आकाश ओर जागा करते थे रजनी भर।

शिक्षित वकील 'सी क्लास' सिर्फ छै पैसे में जीवन यापन,
अपराध ! अहिंसा का करना हिंसा के जग में आवाहन।
शिवधारी जीतनरायण नर, चक्की सानन्द चलाते थे,
शासन के शव को कसने को कुछ बन्दी बाघ बनाते थे।
कष्टों की कारा हंसती थी वीरों की अद्भुत मस्ती थी,
जिनसे बनती कौमी हस्ती, वह दीवानों की हस्ती थी।

महाप्राण

हे महाप्राण ! तेरे कर से होगा जगती का परित्राण,
कल्याण तुम्हारा साधु पंथ, उस ओर हो चुका है प्रयाण।
तेरे हैं पावन चरण चिन्ह उनके अनुयायी कोटि-कोटि,
तुम एक प्राण से उत्प्राणित होते हैं मानव कोटि कोटि।
हे चिर नवीन, हे चिर प्रवीण ! प्राचीन सरल पथ अनुगामी,
अपनी कर्मठ सात्विकता से तुम हो सब हृदयों के स्वामी।
अपने सुख का अपने यश का, तेरे भक्तों को ध्यान कहाँ,
जन जन में रमा जनार्दन है है और भला भगवान कहाँ !
सेवा दरिद्र नारायण की है सच्ची ईश्वर की पूजा,
सच्चा साधक कब करता है केवल आडम्बर की पूजा।
विज्ञानी अभिमानी पशु-सा मानव का रक्त बहाता है,
तब गांधी के भक्तों का दल कारागृह को अपनाता है।
देकर दुनियां को घोर कष्ट स्वार्थी जब मौज उड़ाता है,
तब नम्र अहिंसक सेवक दल कारा के कष्ट उठाता है।
कल तक जो थे प्रधान मन्त्री, शासन सत्ता वैभव वाले,
दुश्शासन का है वक्र चक्र, कारा में वे डेरा डाले।

काशी

काशी का डिस्ट्रिक जेल बना, आजादी का प्यारा मन्दिर,
एकत्रित सात आठ सौ थे सत्याग्रह के बन्दी सुन्दर।

बलिया के श्री चित्तू पांडे ओंकारानन्द वीर त्यागी।
श्री रामनाथ श्रीयुत प्रसिद्ध जमुना से सच्चे अनुरागी।
प्रति दिन शत शत की टोली लेकर बलिया वाले आते थे।
हुकारों से जयकारों से कारा की भूमि हिलाते थे।
गंगा शंकर, श्री बसु, दामोदर जगतनारायण श्री शीतल,
श्री राजाराम वीरवल जी, श्री खेदनलाल वीर निर्मल।
माखन जी एवं रमाकान्त श्रीमान अमोलकचन्द जैन,
बलिया के यूसुफ कुरेशी जिसके थे चंचल चपल नैन।
दिन रात हंसी, दिन रात खुशी कारा में थे बन्दी स्वतन्त्र,
हंस हंस कर जेल खेल समझो, सीखा था सबने वीर मंत्र।
श्री अभय जीत से साधु पुरुष सर्व प्रिय और विनोदी थे।
वे मुक्त हास्य के ही स्वरूप, सुन्दर आनन्द प्रमोदी थे।
मिल गये सभी दस वर्ष बाद इस महां कुंभ की बेला में,
आये थे कारा में बन्दी या आजादी के मेला में।
खटमल मीठी चुटकी लेते, मच्छर संगीत सुनाते थे,
कारा में बन्दी के संगी थे सारी रात जगाते थे।
कविता देवी हंसती आतीं, लेखनी नर्तकी होती थी,
बन्दी के उर में मूक हूक जब सारी दुनियां सोती थी।
वे जीवन ही कविता मय थे उनसे सुन्दर कविता क्या है,
जो अस्त नहीं होता दिनमणि, वह उदय शील सविता क्या है।
बन्दी प्रसन्न, उत्सव-निमग्न, होली हो अथवा दीवाली,
रँग लाल, गुलाल अबीर कहा पूजा की थाली थी खाली।
खाली करथे, मन भरे हुये, तन पर बस एक लंगोटी थी,
कुछ तोला गुड़ त्यौहारों पर खाने को झलरा रोटी थी।
बन्दी खेले थे खूब फाग फक्कड़ अलमस्त लंगोटी में,
सारे व्यज़ंन, सारी न्यामत शामिल कैदी की रोटी में।
तसले में पानी, दाल धरी पीतल की एक कटोरी में,
पृथ्वी पर खाने की रोटी, उस होली में हां, होली में।

प्रति बन्दी दो आलू आये, मुझसे रूठे मेरे आलू,
जिह्ना से टिन्नाए रूठे, पृथ्वी पर जा लेटे आलू।

आलू का विरह उठाता था मेरा होली वाला व्याल .
बन्दी हंसते, मैं कहता था मेरे आलू, मेरे आलू ।

चुनार

गंगा की गोदी में गौरव का गढ़ चुनार सुन्दर पुनीत ,
जिसके पत्थर कह देते हैं स्वर्णिम था वह प्यारा अतीत ।
राजर्षि भर्तृहरि की समाधि, शिव शान्ति निकेतन पुण्यधाम ,
अविराम प्रकृति लीला नर्तन, सुषमा निकुंज शोभा ललाम ।
सत्याग्रह के बन्दी हजार एकत्र हुए कारा बन में ,
संयुक्त प्रान्त के राष्ट्र वीर थे तपोलीन इस निर्जन में ।
जलती थी धरती जलती थी कंकड़ पत्थर वाली कारा ,
नंगे पैरों बन्दी रहते कंटक परि पूरित थी कारा ।
पैरों में छाले पड़े हुए, कांटे भीतर तक गड़े हुए ,
संकट पहाड़ के सम्मुख भी सत्याग्रह बन्दी अड़े हुए ।
भोजन का कहां ठिकाना था, सन्ध्या तक दो रोटी मिलतीं ,
जब दिन भर जलती भट्ठी में वीरों की थीं उँगली जलती ।
भोजन का कुछ सामान नहीं, बरतन प्रबन्ध का नाम नहीं ,
सब को तालों में बन्द किए जेलर वार्डर का काम यहीं ।
भोजन क्या पानी पानी कह हम रात रात भर तड़प गये ,
भूखे प्यासे आजादी के दीवाने, ऐसे कलप गये ।
जंगल था सांप और बिच्छू सब ओर जेल में भरे हुए ,
सत्याग्रहियों पर निर्विष थे वे सत्य अहिंसा धरे हुए ।

सेवक

सुन्दर सेवक शत्रुघ्न सिंह, जलती धरती नंगे पद थे ,
कन्धों पर दुर्वह भार धरे, कारा में वीर निरापद थे ।
बुन्देल खंड का शूर वीर वैभव शाली प्रतिभा शाली ,
गूंधा करता आटा सहर्ष, धोता जूठे बरतन थाली ।

बापू के थे आदर्श विमल, उनसे जीवन के पंथ धवल,
'कंटक' गंगा सहाय चौबे सेवक थे सुन्दर शान्त सरल।
कोलाहल, पारस्परिक कलह, भूखों का था चीत्कार गहन,
सारे अमानुषिक कष्टों को बन्दी करते थे शान्त सहन।
शासन की यह सुव्यवस्था थी ! सब को जंगल में घेर दिया,
भोजन, पानी, औषधि, प्रकाश का कुछ प्रबन्ध था नहीं किया।
बीमार हुये तो दवा कहां, दुख पर दुख थे पर दया कहां !
ये ऊधम अत्याचार घोर, थी सभ्य देश को हया कहाँ !
बूढ़े श्री चीतू पांडे को तोला भर गुड़ भी नहीं हाय !
भूखे सूखे पीड़ित बंदी ! पीड़ा देने का यह उपाय।

कवि

कवि, कर्मवीर, राष्ट्रीय वीर एकत्र मनस्वी कारा में,
बहते थे जन गण साथ साथ सब देश प्रेम की धारा में।
कल्पना जगत के शून्य जीव, नक्षत्र-लोक-गामी विहंग,
मर्दित मानवता से सुदूर, हाला प्याला रत भंग रंग।
कोमल विलास परिहास रास प्रेयसि पद ध्वनि प्रति क्षण रुनझुन,
मधुकर चंचल कवि चंचरीक रूपसि के गुण गायक क्षण क्षण।
वे नहीं, कर्म के कोरे कवि, राष्ट्रीय पद्म दल के वे रवि,
घन घटा टोप में पूर्णचन्द, निखरा करती थी उनकी छवि।
कवि सम्मेलन, जीवन-होता कर्मठ कवि के उद्‌गार विमल,
कवि की वाणी थी कल्याणी, मरुथल होता था सजल सफल।
निर्मल थे अन्तः करण शान्त, अन्तर की सच्ची सरल बात,
नैसर्गिक कविता का प्रसाद, दिन दिन थे सुन्दर रात रात।
हँसते थे ऊपर चन्द्र देव, हँसते थे नीचे कर्मवीर,
स्वर्गीय शान्ति का पुण्य स्थल, बन्दी, त्यागी, गंभीर धीर।
बहती थी सम्मुख ही कल-कल गंगा जल की उज्वल धारा,
था गढ़ चुनार, साकेत शान्त या राजवन्दियों की कारा।
गिरि ऊपर से विस्तीर्ण क्षेत्र दिखलाई देते दृश्य नवल,
भरते थे मानसरोवर जल, खिलते थे कविता भाव कमल।

वर्षा, पृथ्वी से स्वर्ग मिलन, पानी की परियों का नर्तन,
कवि और वियोगी के उर में स्पन्दन, सागर का मन्थन।
पी कहाँ पपीहा बोल रहा, कहता मयूर 'इस कारा में'
बहते जाते सन्ताप पाप, शीतल करुणा की धारा में।
गरजे नभ में घिर घन घमंड, विरही राघव की चौपाई,
रोए थे आकुल स्वयं देव, मानव तो था ही सौदाई।
रिमझिम वर्षा का दीर्घकाल, कुछ मास हो गये कोटि वर्ष,
कारा में कष्ट वियोग व्यथा, सहते थे सब बन्दी सहर्ष।
त्यागी जननी पद अनुरागी, रोने का था अधिकार नहीं,
होगा कुछ निपट स्वार्थियों का, उनका सुख का संसार नहीं।
साधनालीन थे देश भक्त सम्मुख थे अपने इष्ट देव,
मानव पूजा मानव-सेवा कहते थे जाग्रत आत्म देव।
नक्षत्र लोक की शान्त छटा, पावन विभावरी उषाकाल,
बांचा करते थे प्रेम ग्रन्थ, नाचा करते मानस मराल।

कारा-जीवन

बन्दी भावुक साधक, पूजक हमसा जग में था धन्य कौन,
आनन्द कन्द पीयूष-चन्द, भरते रहते मन-कलश मौन।
शीतल समीर पद ध्वनि गभीर, हरती मानस की व्यथा पीर,
अरुणोदय गिरि के शांत शृंग, गंगाजल कल कल युगुलतीर।
नीरव निशीथिनी श्रान्त कान्त नभ नील मौन विस्तीर्ण शान्त,
अन्तर में श्याम स्वरूप भरे था नील कमल शतदल सुकान्त।
देखा करते थे निर्निमेष तारा गण थे लोचन ललाम,
अवनी पर अम्बर के नीचे थे पुरुष पुरातन पूर्ण काम।
ललचाते थे लीला करने को आ जाते थे राम श्याम,
यह स्वर्गादपि गरीयसी मां जिसकी सन्तानें हैं गुलाम।
भावना-जगत का मुक्त जीव कारा में करता था बिहार,
संसार दिखाई देता था सुख शान्ति प्रेम का एक सार।

नभ के तारा गण मन्द मन्द ज्योत्स्ना मंडित मुसकाते थे,
गिरि पर सानन्द भ्रमण, चिंतन हँसते फिरते हम गाते थे।
आशाओं की उन्नत उमंग उठती थी मानसरोवर में,
अन्न मुक्ति मुक्ति की अभिलाषा कारागृह में थी कुछ दिन में।
आ जाते सम्मुख मिलन दृश्य, नारायण से फिर प्रेम मिलन,
कारा की बहुत कहानी है होगा उससे अब नित्य कथन।
वह चंचल पूछेगा हंस हंस कौतूहल कथा बताऊंगा,
कारा विनोद की सब बातें कह कर उसको ललचाऊँगा।
खिंच जाएगी उसके मुख पर आश्चर्य पूर्ण कौतुक रेखा,
लेगा वह नटखट मुझसे तो कारा का दिन दिन का लेखा।

कालरात्रि

थी काल रात्रि अथवा प्रभात वह दारुण हृदय विदारक था,
निष्ठुर विश्वंभर दीनबन्धु जो अपना रक्षक पालक था।
भीषणतम बज्राघात हाय! अत्यन्त भयानक समाचार,
नारायण छत पर से गिर कर कर गया मृत्यु का लोक पार।
रक्खी है उसकी लाश अभी आया है फोन कहो क्या हो,
स्तंभित किंकर्तव्य मूढ़ नारायण मृत्यु पाश में हो।
पैरोल फोन से ही आया भारी पग कारा के बाहर,
भग्नाशा घोर तुषार पात भावुकता-कलिका गई सिहर।
एकान्त घोर निर्जन बन में कारा से मुक्त घोर दुख में,
मेरे साथी सुन्दर रसाल सम्मुख दिनकर दुर्दिन दुख में।
बक्षस्थल का बह चला रुधिर आंसू बनकर पानी बन कर,
व्रत भंग सदाशा छिन्न भिन्न, जीवन बहता पानी बनकर।
पत्थर सा हृदय कठोर हुआ, हो गया न दुख पाकर विदीर्ण,
अभिलाषाओं की चिर समाधि, मन महल कल्पना क्षीण जीर्ण।
रोते रोते आंसू सूखे मूर्च्छा की शीतल गोद मिली,
जागा फिर देखा शून्य जगत पादप की मजुंल कली खिली।

पक्षी ने निठुर कुतर फेंकी मिट्टी में कोमल कली मिली,
यह जीवन है प्रेमी जनकी है संकट कंटक पूर्ण गली।
जलता संसार दिखाता था, अंगार पड़े थे पग-पग पर,
दुख का शिर दुर्वह भार धरे आया-देखा स्टेशन पर।
मित्रों की दुखित मंडली थी, आँखों में दुख आंसू भर कर,
कहती नारायण निधन कथा, उमड़ा दुख सागर रह रहकर।

रोहित

कितना भीषण था अस्पताल मां रोती रोती मूर्च्छित थी,
बच्चे अनाथ से घूम रहे, नारायण प्रतिमा खंडित थी।
लेटा तन पर शव-पट धारे, मेरा रोहित लोहित यों ही,
पहुँचा शव-पट का कर लेने, कारा से हरिसा निर्मोही।
मां क्या कहती, दुख भरे नयन, सूखाथा कंठ, विलाप करुण,
'बेटा बोलो बाबू आए, मेरे आंगन के प्रेमारुण!
सोया था नीरव नारायण, सुन्दर बालक केवल शव था,
वह मानव-हृदय-हीनता का निष्ठुरता का दारुण शव था।
नारायण! तेरी पूजा में, तेरी ही शुद्ध साधना में,
आजीवन मैं तल्लीन रहा, तेरी ही शान्त कामना में।
घर घरनंगे भूखे दुखिया, नारायण प्रांगण के भूषण,
वे कोटि प्राण निष्प्राण प्राय जननी के सुन्दर आभूषण।
उनकी शिक्षा उनके भोजन फल दुग्ध-अर्चना का उपाय,
बापू आज्ञा से होता था, नर नारायण-सेवा उपाय।
उस पूजा में यह विघ्न घोर, यह भीषण अग्नि परीक्षा है,
मैं कैसे स्थिर-चित्त रहूँ, भूली सब शिक्षा दीक्षा है।
जीवन उपवन के नव गुलाब, सूखी लतिका के नव प्रसून,
मुरझाए ऐसे असमय में, मेरे प्रसून मेरे प्रसून।
सूखा मुख मेरे लाल बाल दुर्लभ था तुमको हाय दूध,
मेरे बच्चे तुम रो न सके, माता दो मुझको और दूध।

सूखी रोटी खाते खाते सुकुमार हमारे सूख गए
मेरे उपवन के नौनिहाल दुख सह न सके हा, सूख गए ।
पथराए सूखे नेत्र हुए पथराया दुखिया दीन हृदय,
नारायण ! यह सूना जग है स्वार्थी लोभी निर्भय निर्दय ।
माँ दुखिया, बन्दी पिता सदा कारा के कष्टों पर हंसता,
बालक दुरवस्था संकट में धनहीन दीन होकर मरता ।
घर में कुल रहे चार पैसे, शिव शिव नारायण सोया था,
सूखी रोटी औ गुड़ खाकर वह मचल मचल कब रोया था ।
जो पैसों के हित मुगल बना, फल दूध मिठाई का प्रेमी,
हो गया शान्त गंभीर धीर निर्धनता देवी का नेमी ।
सुख के साथी बान्धव अनेक, विपदा में अब था कौन कहां,
दुख सकंट का बालक भोगी सम्मुख था शव ही मौन यहाँ ।
गोदी में लेकर चला हाय ! हिमशीतल हृदय-खंड का शव,
नारायण गंगार्पण माता भाई बहिनों का दारुण रव ।
पश्चिम में जहाँ मिला नभ से धरती का कोमल करुण अंक ,
जलती थी रवि की उग्र चिता अविराम अरुण एवं अशंक ।
नारायण ! यह पुष्पोपहार नव फूल हमारे मिले धूल,
अब भी गंगा लहराती थी वहती थी कल कल कलित कूल ।
माँ की गोदी में तैरे थे कितने दिन मेरे बाल लाल,
माँ की गोदी में लो समाधि, नारायण मन मानस मराल ।
हृदय स्पन्दन अति वेग बान, शीतल शव हृदय निकट लाया,
मिट्टी ने मिट्टी को रोकर धोकर नेत्रों से नहलाया ।
भर गया क्षितिज तक वह विषाद गोधूली थी अवसाद लिए,
लौटे घर खाली हाथ हृदय करुणा विषाद सुप्रसाद लिए ।
रोते विभावरी वीत गई आपदा अपूर्व अतीत नई,
कलपी थी शोक सरोवर के सन्निकट आह माता चकई ।

रावण-घट

देखा टूटा फूटा वह घर निर्धनता के कारण जिसमें,
रहते थे बालक छूट गया घर सुविधाएँ रहतीं जिसमें ।

गुनदेविया भी था भारतीय, कर दिया पाँच सौ जुरमाना,
'सी' क्लास जेल का कष्ट कौन हो गया कष्ट यह मन माना।
वेतन से जुरमाना लेना उस भारतीय ने ठाना था,
मुखबर था अपना ही साथी या जग का एक सयाना था।
दे आया उसको खबर जहाँ देवी पहुंची वेतन लेने।
ले गया सभी कुछ छीन निठुर शासक को घोर कष्ट देने;
निर्धनता, पूर्ण अकिंचनता, असहाय और परदेश हाय,
देवी जी थीं, प्रसूति-ग्रह में! पीड़ा देने का यह उपाय।
सब कष्टों को हंस कर झेला, साहस की प्रतिमा नारी ने,
दे दिया आज तो हृदय खंड, पूजा में मेरी नारी ने!
जो बच्चे सुख में पले भले वे दुख संकट में गले मिले,
सब काम खुशी से करते थे समझे थे दुख के बूंद भले।
चंचल नारायण खेल रहा, माता बोली ओ नारायण,
जाओ ये कपड़े फैलाओ सेवा व्रत में हो पारायण।
चल दिया खेल सब छोड़ छाड़ खेला उसने तो अजब खेल,
दंपति बांधव के उर में हा! दी नियति नटी ने मेल सेल।
वे सूखे कपड़े पड़े हुए, कापी के पन्ने पड़े हुए,
नारायण तेरे हित तेरे वे काठ खिलौने अड़े हुए।
अब किसका कौन रहा बाकी, रह गई कसक निकले आंसू,
तेरी मधुर स्मृति नारायण! मेरे जीवन के धन आंसू।
इनसे जीवन धो लेता हूँ, तन मन उज्वल कर लेता हूँ,
दुनियां की हृदय हीनता पर दो चार सांस ले लेता हूँ।
कह लेता हूँ देती जारी मुझको गिन गिन दुख के प्याले,
सेवक हम तेरे आराधक पीयूष पान करने वाले।
विष-पान करेंगे शान्त शंभु चन्द्रिका शुभ्र छिटकाएंगे,
तू अपने पथ पर बढ़ती जा हम अपने पथ पर जाएंगे।
रोते पैरोल अवधि बीती फिर कारागृह की ओर चला।
घर में दुख भार उठाने को थी नारी असहाया अबला।
सप्ताह एक में कम होती कैसे वह प्राणों की पीड़ा,
उस निष्ठुर नटवर की होती है भक्तों से ऐसी क्रीड़ा।

अग्नि-पंथ

सेवा पथ संकट विकट, अग्नी का पंथ पथिक ! चल सावधान।
विचलित डगमग पग हुआ जहाँ थोड़ा भी चंचल अनवधान।
संकट दुख जग में पग पग हैं वेदना भयानक भूरि भाग,
निकलेंगे पीड़ा के आंसू निकलेगी पद से रक्त धार।
आंसू पोंछेगा एक हाथ, दृढ़ पद दर्शक दूसरा हाथ,
बतलाएगा वह मुक्ति मार्ग आओ साथी लें हृदय साथ।
निर्मोही शव-पट-कर लेकर चल दिया सत्य के दृढ़ पथ पर,
शैव्या शोका कुल विकल विचल अपने प्रिय रोहित को खोकर।

विषाद

क्यों आती तेरी मुझे याद, तेरी स्मृति है तेरा प्रसाद।
लिख जाती है निशीथिनी भी तारा अंकों में निज विषाद।
क्यों छेड़ा करते हैं विहँग सन्ध्या प्रातः अवसाद-नाद,
धरणी का वह खूनी आंसू क्यों निकला करता क्षितिज पास।
क्यों हो जाते हैं तृण तृण पर पल्लव दलपर पानी आंसू,
आकाश ओर लखकर मयंक से क्यों ढलते जाते आंसू।
तेरा प्रसाद पीड़ा विषाद कवि व्यथित हृदय मानव ललाम,
मन तेरा उपवन एक धाम आँसू जल सिंचित सुबह शाम।
सम्मोह एक छवि पर इतना ! गंभीर धीर वस कवि इतना ?
क्रीडा-स्थल विश्व विराट नित्य बनता मिटता रहता कितना ?
दिन दिन नूतन दिन दिन नवीन उस कलाकर दी शतक्रांतियां,
मिट्टी की शोभा क्षण दो क्षण फिर मिट्टी में मानव मणियां।

अनशन

सीक्लास जेल छै पैसे में सब सभ्य, सौम्य शिक्षित सज्जन,
अविचार पूर्ण नौकर शाही-कर रही राष्ट्र के सुमन दमन।

गंगा सहाय चौबे, सुशील, जौहरी राम नारायण थे,
पांडे जी डाक्टर श्यामवीर, आमरण शान्त अनशन-रत थे।
सत्याग्रह वन्दी राजनीति के बन्दी माने जाएंगे,
या तो ये ऊभम जाएँगे या प्राण हमारे जाएंगे।
बाइस दिन शत शत वीरों का सहयोग संगठित अनशन-दल,
कारागृह में भी अटल अचल, था सत्य न्याय निर्बल का बल।
रावण के पापी-घट, मानव का गरम रुधिर भर पूर क्रूर,
देते थे नीरव अपनी बलि गांधी अनुयायी सत्य शूर।
हम पूर्ण काम अभिराम, धन्य मानव जीवन अपना ललाम,
अवसर पर आ जाता सदैव अपना तन मन धन किसी काम।
अनशन शैया, अनुभूति उग्र, नस नस की पीड़ा घोर कष्ट,
कब तक विश्वम्भर इष्ट देव देखें रहते निर्लेप रुष्ट?
देखें तो कैसे नहीं द्रवित होते हैं दीन दयाल आज
क्या उनका भी हो गया निरंकुश औ नृशंस साम्राज्य आज!
भक्तों की प्रेम परीक्षा है गान्धी की शिक्षा दीक्षा है,
मानव प्राणों का खेल करें, यह प्राणेश्वर की इच्छा है।
बापू की आज्ञा आश्वासन अनशन व्रत सकुशल पूर्ण हुआ,
मदमाती शासन-सत्ता का अभिमान पूर्णतः चूर्ण हुआ।

मुक्त

आया शुभ सुन्दर समाचार सत्याग्रह बन्दी छै हजार,
उन्मुक्त शीघ्र कारागृह से होंगे, घर घर उत्सव अपार।
बन्दी को मुक्ति प्राण तन को धन सुख विपन्न को निर्धन को,
वे ही अनुभव करते हैं सुख दुख की पीड़ा होती जिनको।
जीता था पुनः अजात शत्रु यह सत्य अहिंसा की थी जय,
हारा पशु बल शासक दल बल हारे अत्याचारी निर्दय।
आशाओं के संसार जगे अभिलाषा पूर्ण दुलार जगे,
वन्दी के उर में प्रेयसि के माता वहिनों के प्यार जगे।
कारा थी उत्सव पूर्ण सदा अब और अधिक आनन्द पूर्ण,
नाटक आयोजन प्रहसन का हो रहा कार्यक्रम नित्य पूर्ण।
कीर्तन-सुन्दर संगीत वाद्य गूंजा कारा में राम नाम,
आनन्द मग्न था हृदय भग्न आशा चातक बन्दी ललाम।

अबला-शान्ति

मसिमुखे ! यह दूसरा वृत्तान्त,
कोटिनर दुर्वृत्त कठिन कृतान्त ।
कोटि भीमों की गदा का पर्व,
कोटि बलिदानी नरों का पर्व ।
हर्ष हिंसा का, घृणा का हर्ष,
असुर देवों का विकट संघर्ष ।
सोई हुई शान्ति अबला सी बिधवा सी पड़ी,
रोती हुई चिता-भस्म लेप किये तन में ।
करुणा, दया के लिये कोमल किशोर गोद-
और लिये भस्मीभूत सत्य-शिव मन में ।
द्रौपदी सी निठुर नृशंस नर-ज़ंघा पर,
सीता सी सशोक थी अशोक-उपवन में ।
वीरों की गदा की ओर वाण प्रत्यंचा को,
देखती तूणीर-गत वीर दर्प रण में ।
शान्ति, सावित्री सी निराश, अश्रु विन्दुओं से,
करती थी सजीव नारी सत्यवान शव को ।
चाहती थी आह से तथैव खारी पानी से ही,
पत्थर हिला दे औ डुबा दे सब भव को ।
अन्तर की प्रेरणा से करुणा-गुहार करे,
शीघ्र ही दबा दे इस घोर रोर रव को ।
और हंसती थी खड़ी दानवी भयंकरा जो,
कहती थी दूर फेंक नारी सड़े शव को ।

ज्वालामुखी

दानवी के अंग अंग फूट निकली थी ज्वाला,
कोटि शीश, कोटि पग, कोटि कोटि कर थे ।

कोटि कोटि कर में विनाश संहार-कारी,
अस्त्र शस्त्र दारुण प्रचंड थे प्रखर थे।
रावण नृशंस कंस नीरो, तैमूर लंग,
बर्बरों की विजय के प्राप्त उसे वर थे।
कन्दुक से मानवों के शिर खेलती थी खड़ी,
दानवी के कर कोटि कोटि सभ्य नर थे।

आसुरी

दानवी विकराल सब में व्याप्त थी,
किन्तु उसको देखता कोई नहीं।
रूप में सम्राट वीर विराट के,
किन्तु उसको जानता कोई नहीं।
धूम्र शत मुख से भयंकर उगलती,
मुख बिना शत शत नरों को निगलती।
कर नहीं थे दृश्य, सब कुछ कर रही,
पग अदृश्य परन्तु जग में चल रही।
थी नहीं जिह्वा रुधिर औ मांस की,
चाटती नर रक्त सब को शल रही।
खल नहीं था रूप सुन्दर मोहिनी,
किन्तु यह अपरूप सबको खल रही।
कह रही यह युद्ध तो अनिवार्य है,
नाश, नर-संहार भी अनिवार्य है।
छान कर विज्ञान की सब पुस्तकें,
घोंट कर सब अर्थ शास्त्री पुस्तकें।
कह रहे थे सत्य दानवि सत्य है,
युद्ध नर-संहार निश्चय सत्य है।
आज जन-संख्या बढ़ी संसार में,
कम इसे करना मनुज संहार में।
संतुलन का एक ही सदुपाय है,

रोग हों, दुष्काल हों, भूकम्प हो।
या महामारी बढ़े संहार हो,
संतुलन का युद्ध ही सदुपाय है।

भृंग-हीन

बढ़े विनाश के सपूत दानवी प्रसन्न थी,
कौन शत्रु ? कौन मित्र ? युद्ध आज मित्र है।
कौन बन्धु ? कौन पुत्र ? युद्ध यत्रतत्र है,
एक देश ? एक प्रांत ? सृष्टि आज शत्रु है।
पंथ का पहाड़ आज घोर सिन्धु शत्रु है,
जो करे विरोध आज जों समस्त शत्रु है।
शान्ति-दूत शान्ति-पुत्र शत्रु आज शत्रु है,
झोंक दो समस्त अन्न क्योंकि आज युद्ध है।
झोंक दो मनुष्य को तुरन्त आज युद्ध है,
काल गाल है विशाल वृद्ध हो कि बाल हो !
युद्ध-वीर ! देश-वीर ! युद्ध युद्ध ताल दो,
बढ़ो विनाश के सपूत दानवी पुकारती।
उष्ण रक्त, उष्ण रक्त, उष्ण रक्त चाहिए,
भक्त, नहीं भीरु, आज तो सशक्त चाहिए।
ज्ञान वान, नीति वान, क्या प्रमत्त चाहिए,
लक्ष लक्ष कोटि कोटि आज वित्त चाहिए।
झोंक दो मनुष्य हैं हविष्य क्यों रुके कहीं,
अग्नि की ध्वजा विशाल है कहीं झुके नहीं।
चीखते पुकारते कुमार का न मोह हो,
नारियाँ कुमारियाँ पड़ी रहें न छोह हो।
आज युद्ध मित्र और पूर्ण विश्व शत्रु है,
युद्ध के विरुद्ध सन्त साधु आज शत्रु है।
एक भी मनुष्य युद्ध काम से बचे नहीं,
युद्ध-भीत, शान्त-गीत एक भी रुचे नहीं।

बढ़े विनाश के सपूत दानवी विमुग्ध थी,
चीरते विमान व्योम-वक्ष तीव्र जा रहे,
फाड़ते समुद्र-अंक थे जहाज धा रहे।
रक्त से मनुष्य के सुशैल थे नहा रहे,
औ मनुष्य रक्त तो मनुष्य ही बहा रहे।
रेंगते मनुष्य काल गाल में समा रहे,
शृंग-हीन जन्तु आज हर्ष हर्ष गा रहे।

सशंक

मौन गगन तारा लोचन से देख रहा था नाश,
सहम सहम रम रम चलती थी वायु सशंक उदास!
बड़वानल से दहक रहे थे भीषण महा समुद्र,
पदाघात से किसी रुद्र के यह भूमंडल क्षुद्र।
थर थर कंपित शान्त हिमालय डोल उठा था बोल,
"नर तेरे अमोल प्राणों का बस इतना ही मोल।

विष-दन्त

दबे हुए निष्ठुर पदतल से पीड़ित नर कंकाल पुकारे,
कहर उठे घायल पीड़ा से रुको रुको दानव हत्यारे।
गोली खाकर गिरा भूमि पर विश्वनाथ का शांत शिवाला,
दारुण अंधकार फैला था ऐसी प्रकट हुई थी ज्वाला।
यह था विज्ञानी का पानी ऊपर से शीतल सुन्दर था,
अन्तर से विष-वमन कर रहा कोई भीषणतम विषधर था।
पिया नहीं, छू गया जिसे भी घोर हलाहल विष का पानी,
गले अंग अधमरे मरे सब मानव ज्ञानी या अज्ञानी।
नहीं चाहिये विष का पानी विष का अन्वेषक विज्ञानी,
विकल विश्व तो खोज रहा है कालिय-मर्दन मानव ज्ञानी।
तोड़े दन्त घोर विषधर के छोड़े विषमय को निर्विषकर,
जिये अगर तो हित कर बन कर अपने शिर पर कौस्तुभ-मणि धर।

आँसू

दीन पीड़ित जर्जरित कंगाल की,
अस्थि-पिंजर-शेष नर कंकाल की।
आह और कराह बनकर बाष्प सी,
विश्व की काली-निशा में थी उठी।
वेदना के बूँद, पीड़ा पुत्र से,
मानसर के स्वच्छ मोती हार के।
विश्व के बाचालु अक्षर चार से,
वेदना के भाव पर लाचार से।
ओस बनकर विकल आँसू गिर पड़े।
चरण तल पर उस हिमालय अद्रि के,
जो प्रतिष्ठित शान्त अब भी अचल था।
नग निरा, निस्वन तथा निस्पंद था।
हिम-मयी जिसकी शिलायें कन्दरा,
मानवी-पीड़ा व्यथा से मुक्त सी।
हिम-किरीटी के शिषर पर चन्द्रमा,
गगन के पर्यंक से हँसता हुआ।
शान्त, सुन्दर किन्तु वह निर्लेप था।
अंक में अकलंक मंजु मयंक के,
विश्व के विध्वंस कारी पाप का,
झलकता प्रति रात्रि में प्रति बिम्ब था।
चल पड़ी प्रातः पवन की दूतिका,
देखती संसार में अब कौन क्या।
सुप्त, जाग्रत, जड़ तथा चेतन कहाँ।
निकल आयी किरण पट ले बालिका,
रजत हिम-गिरि हेम-मय करती हुई।
हँस पड़े खग वृन्द करते व्यंग से
विश्व में आनन्द का साम्राज्य है,
और पीड़ा पुंज नर-कंकाल है।

आज इतनी दूर तक विज्ञान है,
आह भरना ही मनुज का ज्ञान है।
ढलकते आंसू बिचारे जा रहे।

हिमालय

हिला नहीं नगराज, न किंचित तपस्वियों के आसन डोले,
विकल प्राण परि त्राण चाहते आँसू की भाषा में बोले।
हिला हमारा शान्त हिमालय जो मानव एवं सहृदय था,
सब के स्वर जिसकी वीणा में जिसका स्पंदन हृदय हृदय था।
जिसने अपनी ही आँखों से देखी थी मानव की पीड़ा,
शान्त किन्तु निस्पन्द नहीं था देख देख दानव की क्रीड़ा।
सहज समझ जाता था सब के अन्तर की, बूँदों की भाषा,
कुटिल जगत में सरल कर चुका था मानव जीवन परिभाषा।
जिसके वक्षस्थल से निकली थी करुणा की उज्वल गंगा,
इष्ट देव जिस नर का सच्चा नारायण भूखा औ नंगा।
चन्द्रमौलि वह नहीं, चन्द्रिका-शान्ति छिटकती उसके शिर से,
बहता शान्त ज्ञान पृथ्वी पर, श्वास श्वास सरिता निर्झर से।
अमुर अभय नर शिव शंकर सा तरल गरल पी जाने वाला,
अमर अहिंसा संजीवनि से मर मर कर जी जाने वाला।
कवि करुणा रस का जीवन की अमर कला का कलाकर वह,
मिट्टी से घट रचने वाला बाजीगर वह, कुंभकार वह।
निज श्वासों के तार तार से उसने द्रौपदि-वस्त्र बुना था,
दानव से लड़ने को उसने निज प्राणों का अस्त्र चुना था।
प्राण-यज्ञ का वह अध्वर्यु था नवजागरण मंत्र सृष्टा था,
दो आँखों से तीन काल की बातों का सच्चा द्दष्टा था।
वह दधीचि भी नहीं किन्तु कितने वृत्रासुर हुये पराजित,
दो मुट्ठी हड्डी वाला नर बिना धनुष प्रत्यञ्चा रिपु जित।
उसका जीवन ही गीता था, सरल विमल नव मानव गीता,
कैसे विकल रहें अबलायें कोटि कोटि द्रोपदियाँ सीता।

मनस्वियों के महा वाक्य में, तपस्वियों के स्वर में बोला,
सुनकर निष्ठुर बर्बर दानव का थर थर सिंहासन डोला।

उद्बोधन

कैसा क्षीण यह विश्वास ?
सुन्दर सत्य शिव की लाश ?
अमर नर तेरे हृदय में आज संशय-वाद ?
शान्ति अबला ? सत्य निर्बल ? यह प्रमाद-विवाद,
अग्नि सन्तानों ! तुम्हारी शक्ति का उपहास ?
आज बर्बर शक्तियों का ही अधम उल्लास।
अपनी शक्ति का यह ह्रास ?
कितने उठ चुके दश शीश,
जिनके थे विजेता कीश।
कितने मिट चुके हैं कंस,
डूबे बर्बरों के बंस।
जीवित राम श्याम ललाम,
जीवित बुद्ध ईसा नाम।
जीवित है नबी, सुकरात,
जीवित अमर दिव्य विचार।
जिनमें अणु द्विगुण है शक्ति,
जीवित प्रेम श्रद्धा भक्ति।
करता व्यंग है बातास,
नर तू बार बार निराश।
पाशव वृत्तियों का लास्य, मानव शक्तियों का नाश,
पार्थिव शक्ति का विश्वास, मारुत वेग जिसके श्वास।
बहते हैं पवन उनचास, यम है स्वयम्भू जिसका दास,
तेरी दिव्य शक्ति अखंड, जिसका तेज है मार्तंड।
अपनी शक्ति पर सन्देह ?
क्या तुम दीन केवल देह ?

इतनी बुद्धि की है शक्ति, इतनी खोज पूर्ण समृद्धि,
अणु की खोज पर अभिमान ! अणु विस्फोट पर अभिमान.
कण कण कोटि जिससे पूर्ण, नर ! वह शक्ति तेरा ज्ञान ।
दानव दर्प की हुंकार, मानव शक्ति को ललकार,
क्षण क्षण देव दानव युद्ध, पाशव, दैव दल का युद्ध,
मानव शक्ति को आह्वान, तवरण यज्ञ एक महान ।
रण के दूसरे सामान, रण का दिव्य एक विधान ।
सम्मुख हर्ष, हिंसा, द्वेष, दानवि उग्र तृष्णा वेष,
जिसका है उदर विकराल, भरते कोटि नर कंकाल ।
सम्मुख एक शिशु गोपाल,
करुणा प्रेम का यह बाल ।
हँसती पूतना फिर आज,
हँसता है खड़ा गोपाल ।

मानवी

बढ़ो मनुष्य के सपूत मानवी पुकारती ।
अस्त्र नहीं, शस्त्र नहीं, आज प्राण चाहिये,
अन्न नहीं, वस्त्र नहीं आज प्राण चाहिये ।
कोटि प्राण की पुकार आज त्राण चाहिये,
हृदयवान, ज्ञानवान, प्राणवान चाहिये ।
नहीं हविष्य, यज्ञकार वे मनुष्य चाहिये,
जो मरें मनुष्य के लिये मनुष्य चाहिये ।
ज्ञान शुद्ध, प्राण शुद्ध, त्राण शुद्ध चाहिये ।
एक क्या अनेक आज शान्त बुद्ध चाहिये ।
जो कहें मनुष्य हैं, हमें न युद्ध चाहिये,
जो मरें मनुष्य के लिये मनुष्य चाहिये ।
बढ़ो मनुष्य के सपूत मानवी सराहती
आज तो मनुष्य के विरुद्ध घोर युद्ध है,
नीति, धर्म, कर्म, ज्ञान के विरुद्ध युद्ध है ।

वृद्ध बाल, श्वेत कृष्ण के विरुद्ध युद्ध है,
युद्ध क्यों ! नृशंस कंस दैत्य आज क्रुद्ध है।

शान्ति वीर, धर्म धीर शान्ति शुद्ध लक्ष्य है।
एक एक शान्ति वीर एक एक लक्ष है।

शान्ति-श्रोत, शक्ति-श्रोत धीर-वीर वक्ष है,
सत्य नित्य, सत्य सत्य, चक्षु अंतरिक्ष है।

प्रेम की वसुन्धरा विशाल धन्य कुक्ष है,
शांति-वीर ! धर्म-वीर ! सत्य न्याय पक्ष है।

बढ़े मनुष्य के सपूत मानवी प्रसन्न थी।
कोटि कोटि मौन प्राण आज भी मनुष्य हैं,

जो जियें मनुष्य के लिये भले मनुष्य हैं।
जो मरें मनुष्य के लिये भले मनुष्य हैं,

रक्त के पिपासु नहीं जो मनुष्य भक्त हैं,
जो प्रमत्त तो नहीं परन्तु जो सशक्त हैं।

अंध भक्त जो नहीं महान ज्ञानवान हैं,
अस्थि शेष कोटि कोटि किंतु प्राणवान हैं।

जो सचेष्ट कर्मवीर हैं, नहीं हविष्य हैं,
विश्व की विभूति वे मनुष्य जो मनुष्य हैं।

ये निरस्त्र कोटि वीर प्राण अस्त्र ले बढ़े,
कोटि कोटि शान्त-वीर दुर्ग दुर्ग जा चढ़े।

क्रिप्स

"है प्रजा तन्त्र संकट में जातीं सभ्यता हमारी,
हे मानवता के पंडित ! हे सत्य, शान्ति-अवतारी !
रक्षा हो इस संकट से हम आये शरण तुम्हारी,
भारत के भाग्य-विधाता ! इतनी है विनय हमारी।
दे धन जन देश तुम्हारा, संकट में साथ हमारा,
बदले में स्वतन्त्रता का यह लो प्रस्ताव हमारा।

"हे क्रिप्स ! चिप्स फ्रीडम के तुम दिखलाते हो हमको,
यह दिवालिया की हुंडी तुम भरमाते हो हमको।
यह युद्ध तुम्हारा होगा इससे क्या काम हमारा,
हम सत्य अहिंसा धारी, इससे क्या काम हमारा।
कैसे गुलाम जायेगा दुनियाँ स्वाधीन बनाने,
मानव का रुधिर बहाने, मानव के रुधिर नहाने।

आवाहन

आओ प्राणों से खेल करो, इन प्राणों में परमेश्वर हैं।
इनमें शिव शंकर के स्वर हैं ये अजर अमर अविनश्वर हैं।
इनमें युग युग की आह भरी, इनमे हैं कसक कराह भरी,
इन वीणाओं में महाकाल भैरव के सब स्वर भास्वर हैं।
ठहरो सम्मुख आने वाले, इन प्राणों में ज्वालायें हैं,
प्राणों के पन्ने पन्ने में अंकित गान्धी गाथायें हैं।
ये नहीं कलित कोमल कलियाँ महिलायें या अबलायें हैं,
ये विना अस्त्र लड़ने वाली दुर्गायें हैं, दुर्गायें हैं।
ओ बधिर मदिर ! सुन सको सुनो इनमें पुनीत गाथायें हैं,
इन प्राणों में बज रही आज युग युग की शत वीणायें हैं।
ये नहीं खुली शासक-प्रमत्त तेरी मदिरा शालायें हैं,
इन प्राणों में गंगा जल की गतिवान धवल धारायें हैं।
तुमने छेड़ा ये बोल उठीं, तुमने छेड़ा ये धधक उठीं,
इन प्राणों में वीणायें हैं, इन प्राणों में ज्वालायें हैं।
इन प्राणों की गति क्या जानों, प्राणों में कसक कहानी है,
मत इन्हें छुओ छेड़ो देखो इन प्राणों में पीड़ायें हैं।
इनसे डोले थे सिंहासन, डोलेगा तेरा भी आसन,
इन प्राणों के सम्मुख बनतीं बाधायें भी सुविधायें हैं।

हुंकार

इन प्राणों की हुंकार सुनो भारत छोड़ो भारत छोड़ो,

इन प्राणों की ललकार सुनो भारत छोड़ो भारत छोड़ो।
रुक जाओ मां के नग्न बदन पर पड़ते ओ निर्दय कोड़ो,
वह जाओ मिट जाओ अनेक मां के तन के गन्दे फोड़ों।
टूटीं ये बन्धन की कड़ियां, आई आजादी की घड़ियाँ,
यह देखो प्राची का प्रकाश पश्चिम उलूक अब मुख मोड़ो।
युग युग का सच्चा धर्म ज्ञान संचित है प्राणीं प्राणी में,
युग बोल युग डोल रहा निर्भय गाँधी की वाणी में।
इन प्राणों से लड़ने वालो ठहरो ठहरो सुनते जाओ,
तुमने इनको ललकारा है कुछ सोच समझ लड़ने आओ।
इन प्राणों में गंभीर धीर ईसा की कोमल वाणी है,
ये सूली पर सोने वाले गाँधी के शत शत प्राणी हैं।
केवल मुट्ठी भर धूलि लिये सेना की जय करने वाले,
ये कोटि कोटि सेनानी हैं मुहमद के पथ चलने वाले।
बच्चे बूढ़े हैं नौजवान निखरी सब ओर जवानी है,
ये एक एक हैं लक्ष लक्ष गोविन्द सिंह के प्राणी हैं।
नर क्या बानर सेना लेकर सोने का दुर्ग ढहाया था,
संसार रुलाने वाले को जिसने भरपूर रुलाया था।
यह वही राम की सेना है यह वही राम की वाणी है,
जिसने पत्थर तैराये थे यह वही राम का पानी है।
सुनलो प्राणों में बोल उठी दुर्गा माता कल्याणी है,
शत शत प्राणों में बोल उठी युग युग की निर्भय वाणी है।
ये बाल बीर गोपाल खड़े जिनकी छीनी माखन रोटी,
दानवी पूतना खुल खेले करते अपनी करनी खोटी।
देखो तुमसे लड़ने वाले ये कोटि कोटि कंकाल खड़े,
जिनसे तेरे प्रासाद खड़े ये कोटि कोटि कंगाल खड़े।
ये कोटि सुदामा दीन हीन इन भोलों का भगवान कहाँ,
अपने प्राणों को छोड़ मिलेगा इन्हें और परित्राण कहाँ।
इन कंगालों की हड्डी है वह बज्र धनुष रचने वाली,
आहों से और कराहों से है घोर क्रान्ति मचने वाली।
नंगे भूखे कङ्गालों की यह सेना लड़ने आती है,

देखो अपनी सेना भय से सब ओर भागती जाती है।
ललकारों पर, हुंकारों पर, चीत्कारों पर आसन डोले,
बच्चों ने हंस हंस कर मां के बन्धन खोले बन्धन खोले।

नौ अगस्त

चिर बन्दनीय है नौ अगस्त।
उस दिन दुश्शासन सूर्य अस्त।
बोले उलूक, भागे उलूक। था तिमिर भयानक मूक हूक।
राजेन्द्र और अशफाकुल्ला, लहरी की आत्मा बोल उठी,
सन सत्तावन, बंगीय शूर वीरों की आत्मा बोल उठी।
आजाद, लाजपत, भगत, तिलक, गोखले स्वर्ग से बोल उठे,
बढ़ते जाओ भारती वीर शासन-सिंहासन डोल उठे।
उठ पड़ो वीर प्राणी समस्त।
देखो दुश्शासन सूर्य अस्त।
नर का जीवन अवसाद भरा ?
बिखरा जब मुक्त प्रसाद पड़ा।
देवता तुम्हारे द्वार खड़ा,
बरदान तुम्हारे चरण पड़ा।
वीरों स्वतन्त्रता वरण करो,
कर दो मानव जीवन प्रशस्त।
हे अग्नि-पुत्र किसका भय है !
भय का कारण तो संशय है।
जिसकी लू से झुलसे विनसे,
शासक का रवि है राहु-ग्रस्त।
संसार पड़ा है अस्त व्यस्त,
विकलांग पराजित घोर त्रस्त।
मानव ! तेरा पथ है प्रशस्त,
तेरे हैं अब तक स्वच्छ हस्त
ये स्वच्छ हस्त हैं वरद हस्त।

तेरे त्रासक का सूर्य अस्त,
चिर बन्दनीय है नौ अगस्त।

आगा खाँ महल

मेरी निधियाँ रक्षित रखना, बन्दीगृह आगा खान महल,
बापू, बा, वार जवाहर ये राजेन्द्र रत्न सरदार अटल।
आजाद तुम्हारे कारा की काटने गये शृंखल लड़ियाँ,
यह निखिल राष्ट्र है काट रहा दासता बेड़ियाँ हथकड़ियाँ।
यह निखिल राष्ट्र है छाँट रहा शासन के तरु की डाल डाल,
तोड़ने चला तरुणों का दल शासन का भारी इन्द्र जाल।
प्रत्येक भारती वीर धीर जीवन-होता है नेता है,
मर चुका कभी अत्याचारी अब अन्तिम साँसें लेता हैं।
झकझोर दिया इन वीरों ने वे गिरे पड़े हैं पीत-पत्र,
शासन के सारे तार तार टूटे हैं देखो य तत्र।

जन समुद्र

यह जन-समुद्र चल पड़ा भूमि पर कोटि कोटि भगवान चले,
आगे आगे अरमान चले, पीछे पीछे बरदान चले।
बोलते वेग से कोटि कंठ ऋषियों के पावन ज्ञान चले,
उत्साह पुकारा, बल बोला देखो ये वीर जवान चले।
ये वीर अनोखे नहीं तीर, हाथों में बिना कमान चले,
आग्नेय-विहीन महा-भारत, इसमें प्राणों के बाण चले।
इसका सेना पति नहीं, चली यह बिना अस्त्र अद्भुत सेना,
कंकाल माल पहिने शंकर भोले ये कोटि किसान चले।
राणा प्रताप की यह सेना पर ढाल नहीं तलवार नहीं,
सहती है सब के वार किन्तु करती है अपना वार नहीं।
अभिमन्यु चले पर बिना अस्त्र, जाते ही तोड़ा चक्रव्यूह,
नन्हें नन्हें सुकुमार चले या लव कुश से भगवान चले।

जय जय जय इनके कंठ कंठ जय जय जय इनके पग पग पर,
गान्धी वाणी, गान्धी पानी, भगवान नहीं इन्सान चले।
ध्रुव साहस, निश्चय भीम चरण, कुसुमों का वक्षस्थल विशाल,
आगे आगे इन्सान चले, पीछे पीछे भगवान चले।

प्रयाण

चलो तुम्हारे भी चलने का श्रान्त पथिक आबाहन आया,
नौ अगस्त का स्वर्ण-दिवस नर नर में जीवन साहस छाया।
सहोदेवि विस्तृत कारा के दुख रोको रोको ये आँसू,
रहो सहो जीवन के साथी अपना साहस अपने आँसू।
नारायण चित्रों से बोले बाबू फिर कारागृह जाओ,
अब की बार प्रसाद अनूठा बापू की आज्ञा से लाओ।
टूटी कमर कठोर दुखों से पागल की कुटिया की माता,
पागल जो सब छोड़ छाड़ कर बार बार कारागृह जाता।
गरम उसासें भरा हुआ मन भरा हुआ आँखों में पानी,
आँखों के पानी में वाणी जीवन था पानी ही पानी।
आँखों के पानी का ऐसा पावन-पारावार बढ़ा जब,
अंगारों पर अभय-चरण से दीनों का संसार चढ़ा जब।
कौन रुकेगा जिस में जीवन, जीवन की गति और जवानी,
पानी से लिखने जाती जब कल्याणी मां अमर कहानी।
पानी का समुद्र इसमें दे जिसमें हो जितना भी पानी,
पानी वाले कहलायेंगे मानव दानी, मानी ज्ञानी।

कारागार

वही पुरानी पर गिरती सी बन्धन की दीवार,
सह में से साहब जेलर भरमें से नम्बरदार।
बाहर भीतर मचा हुआ था भीषण हाहाकार,
बन्दी से रहते थे जेलर, बन्दी मुक्त हजार,

चारो ओर सुनाई पड़ती थी विप्लव हुंकार,
जन-गंगा बह चली वेग से कहां नाव पतवार।
तिनके से बह चले जिन्हें समझे थे लोग पहाड़,
परिक्रमा कर चले तोड़ने भीषण कारागार।
नव युवकों के हुँकारों से बदल रहा संसार,
हुंकारों से हिलता था शासन का कारागार।
बन्द हुए व्यापार और सब जीवन का व्यापार,

मेघदूत

ओ जन कवि के मेघदूत! जाओ देखो यह देश,
कहाँ नहीं पानी है दे दो बन्दी का संदेश।
यहाँ यदा है कौन किसे कारागृह में अवकाश,
किसे प्रेयसी की चिन्ता से देखा यहां उदास।
तप्त उसासें ये विचित्र हैं इनमें अद्भुत दाह,
भरी हुई इनमें युग युग की पीड़ित नर की आह।
ऊँचे उठो, बढ़ो देखो, मानव जीवन के दूत,
कात रहे होंगे कारा में मेरे बापू सूत।
मन मोरे सा बैठा होगा कोई कहीं कुपूत,
बड़ी शान से चलता होगा वीर ज्ञान से पूत।
कवि-कल्पना सत्य पंखों पर चलो बढ़ो जीमूत,
बन्दी की श्रद्धाञ्जलि आंसू अरमानों के सूत।

संगम

जन जान्हवी संगम, पर्व पवित्र है,
देखो प्रयाग का पुण्य खिला।
बलिदान का यज्ञ चला पहिला,
यह पद्म सा सुन्दर पुष्प मिला।
जन गंगा सरस्वती औ यमुना,

नर कोटि का जीवन वेग मिला।
पुरुषोत्तम और जवाहर की, नगरी है,
विराट जलूस चला।
नर पुण्य-कृती वर कीर्ति-ध्वजा;
यह राष्ट्र-ध्वजा फहराती हुई।
उभरे खुले सीने लिये जनता
संगीन के सामने जाती हुई।
निकली बन्दूक से गोली वहाँ
बढ़ती जनता यह गाती हुई।
प्रिय 'पद्म' का जीवन धन्य हुआ
वह देखो स्वतन्त्रता आती हुई।

आजाद

चन्द्रशेखर की अपूर्व समाधि,
मेघ! बरसो के नयन दो फूल।
बह रही गंगा पुलक से पूर्ण
आज जमुना का कलित है कूल।

प्रवाहिनी

वीर की पुकार है, धीर की पुकार है।
मार्ग खड्ग-धार है, अग्नि-पंथ प्यार है।
प्रेमियो बढ़े चलो। नेमियो बढ़े चलो।
प्यार तो सितार है, तार तार जोड़ दो।
शत्रु एक भार है, तार तार तोड़ दो।
मार्ग टोक रोक दो शत्रु सैन्य मोड़ दो।
वाहिनी बढ़ी चली, सैनिकों बढ़े चलो।
बालको, बढ़े चलो।
देवियों, बढ़ी चलो।

सभ्य वीर भेड़िये, रक्त के पिपासु हैं,
शान्त औ निरस्त्र का रक्त तो बहा चुके।
शान्त वीर साधुओं, रक्त से नहा चुके।
सिद्ध-मंत्र बोल दो, मुक्ति-पंथ खोल दो।
मानवों! बढ़े चलो।
साधुओ! बढ़े चलो।
देवता प्रसन्न हैं देवियाँ प्रसन्न हैं।
मुक्त-मुक्ति द्वार है, हर्ष द्वार द्वार है।
वेग धार धार हैं, पुष्ट तार तार है।
ज्योति प्राण प्राण है, प्राण प्राण बाण है।
प्राण प्राण शाण है, प्राण प्राण गान है।
मानवो, बढ़े चलो।
साधको, बढ़े चलो।
शत्रु क्षेत्र छोड़ते, यत्र तत्र भागते।
जीर्ण पीत पत्र से हैं सभीत काँपते।
शत्रु की ध्वजा कहाँ, बालको उखाड़ दो।
राष्ट्र की ध्वजा विशाल, दुर्ग दुर्ग गाड़ दो।
बालकों, बढ़े चलो।
साथियो बढ़े चलो।

काशी

यह काशी है विश्वनाथ की पुरी सुहावन,
नव उज्वल जलधार यहाँ गंगा जग पावन।
करता है संकेत गगन में देता पहरा,
हाथ उठा कर स्वागत सा करता धौरहरा।
मालवीय जी यहाँ तपोधन की यह धूनी,
शिवप्रसाद से हुई किन्तु यह काशी सूनी।
कुलपति का संकेत उन्हीं की शिक्षा दीक्षा,
विद्यालय के छात्र दे रहे विकट परीक्षा।

अनुतीर्ण है कौन छात्र उत्तीर्ण हुये सब,
ज्ञान केन्द्र से पुष्प पराग विकीर्ण हुये सब।
कर्मठ राधेश्याम वीर शिक्षक गैरोला।
मधशाला का सिंह द्वार मधुपों ने खोला,
स्वतन्त्रता की मधशाला विद्यालय देखो।
विश्वनाथ का यह नूतन देवालय देखो,
बरसो कुछ पीयूष मेघ! धाराधर धावन,
यह प्राणों का यज्ञ, यज्ञ के होता पावन,
श्री सम्पूर्णानन्द हुये हैं कारावासी।
काशी वासी आजहो रहे कारावासी।
क्षीर सिन्धु से अधिक आज का गृह देखो,
श्री कमलापित वहीं शयन करते हैं देखो।
तरल तिरंगा लिये चले ये गंगा शंकर,
जन गंगा बह चली बोलती हर हर शंकर।
माखन, राजनारायण ये जीवन-अभिनेता,
रमाकान्त रघुनाथ सिंह से वीर प्रचेता।
जगतनारायण वीर उमाशंकर ये देखो,
मची अहिंसक क्रान्ति, सफल जीवनधन! देखो।

धानापुर

जवानों की चली टोली, शहीदों की मची होली,
खुले सीने लिये जनता उधर संगीन है गोली।
तिरंगा नौ जवानों की उमंगों ने उड़ाया है,
महा जनक्रान्ति है जीवन सरों में वेग आया है।
गड़ेगा राष्ट्र का झंडा हमारा देश है सुर पुर,
बढ़े वे सूरमा आगे लिया वह दुर्ग धानापुर।
चली गोली, बढ़ी जनता, शहीदों ने जवानों ने,
विजय वरदान पाया था, मजूरों ने किसानों ने।

यहाँ आनन्द के दो बूँद जीवन-दूत ! बरसाओ,
बढ़ो आगे यहीं बलिया, रुको घन ! देखते जाओ।

बलिया

सिंहासन हिल गये राज्य-श्री ठोकर खाती फिरती है,
राजमुकुट मिल गये धूलिमें भीषण कारा गिरती है।
घिरी हुई रावण की लंका यह बलिया की जेल नहीं,
विद्रोही जनता से लड़ना है साधारण खेल नहीं।
'छोड़ो शीघ्र हमारे नेता परदेशी का नाश हुआ,
तार तार टूटे शासन के छिन्न भिन्न यह पाश हुआ।
कौन रोक सकता जनगंगा वेगवान यह धारा है,
हुंकारों से हिलती गिरती दुश्शासन की कारा है।
जनता के बन्दी हैं शासक, बन्दी कारा-मुक्त हुये,
सदियों के अत्याचारी अब जनता के अभियुक्त हुये।

वामन

क्रान्ति-अग्रणी चीतू पांडे बलिया के वामन नेता,
ऐसी क्रान्ति हुई है कब कब सतयुग या द्वापर त्रेता।
बिना अस्त्र की निर्भय जनता यह कंकालों की सेना,
तोड़ फोड़ बैठी शासन के पाप भांड क्षण में सेना।
टूटीं कटीं शिरायें सारी सड़कें, रेल, तार, चौकी,
क्रान्ति सफल, बलिया स्वतन्त्र सुनकर शासन-सत्ता चौंकी।

घोष

घन ! घोष रोष अपना जन-घोष से मिलाओ,
ज्वाला बरस रही है तुम नीर ही बहाओ।
घुमड़ो घमंड से अब गंभीर धीर बाँके,

ये सूरमा विजेता इन पर सुमन चढ़ाओ।
ये कर्मवीर नूतन इतिहास रच रहे हैं,
ये शाप दे रहें हैं, वे पाप पच रहे हैं।
अब भी निरीह नर के सन्ताप बच रहे हैं,
बरसो अखंड धारा परिताप सब बहाओ।
निर्भय निरस्त्र नर की यह सिंह वाहिनी है,
हुंकार कर रही है हुंकार तुम सुनाओं।
बढ़ते चलो, बढ़ी वह विजयी विशाल सेना,
चमको प्रकाश दो तुम, बढ़ती अपार सेना।

विजय

अमर कहानी न्यारी बलिया, बापू की प्यारी बलिया,
जनता के हुंकारों से ही भाग गये शासक छलिया।
खुले खजाने पड़े किसी ने जनता का धन छुआ नहीं,
बलिया में जो हुआ विश्व में अब तक ऐसा हुआ नहीं।
हिंसा नहीं विरोधी का भी रक्त जहाँ पर बहा नहीं,
कौन कष्ट था जिसे यहाँ जनता ने हँसकर सहा नहीं।
संयम से साहस से शासक परदेशी थे हार गये,
हँसते हँसते फूलों के ऊपर से प्रस्तर भार गये।
यह प्राणों का खेल भयंकर विप्लव का तूफान उठा,
भागे सब शैतान यहाँ से जब निर्भय इन्सान उठा।
हिमगिरि के उत्तुङ्ग शिखर पर तरल तिरंगा फहराया,
यह स्वर्गीय दृश्य लखने को तपस्वियों का दल आया।
मौन मुग्ध आकाश बिछे वे पुष्प नील नभ के तारे,
जीवन-धन बरसो सरसो ये क्रान्ति-अग्रणी नर सारे।
बापू का सन्देश सफल है, कारागृह के व्रती प्रसन्न,
हिंसा की ज्वाला से निकले ध्रुव प्रह्लाद प्रसन्न अखिन्न।
जय श्री वीर-चरण पर लोटी मिट्टी में सत्ता लोटी,
हँस हँस कर गोपाल कृष्ण ने दानव की पकड़ी चोटी।

अग्नि पंथ पर पैर बढ़ाये अभय-अग्नि सन्तानों ने,
प्राण हथेली पर ले जीता दुर्ग निरस्त्र जवानों ने।
जहाँ धर्म है वहाँ विजय है, गीता का सन्देश सफल,
जहाँ प्राण की आहुति होती वहाँ यज्ञ संपूर्ण सफल।
जलती हिंसा की ज्वाला में हँसती फूलों की माला,
सफल प्रयोग अहिंसा बापू! वन्दनीय नव मख-शाला।

कर्मचन्द

सदियों में चमका निर्मल नभ सत्य अहिंसा मोहन चन्द,
सदियों में टूटे मानव की हथकड़ियों के दारुण फन्द।
जन-गंगा का वेग देश का पाप और परिताप बहा,
नर-जीवन का कलुष बहा जीवन-सरिता में पुरुष बहा।
मृतक पूतना पड़ी दानवी, हँसती वह मानवी खड़ी,
वह हँसता गोपाल खड़ा, यह नूतन युग की एक घड़ी।
हारी है दानवता पशुता, सच्ची मानवता जीती,
हँसा सत्य बालेन्दु अशिव की कलुषित घोर अमा बीती।

उज्वल पृष्ठ

रक्त भरे काले पन्नों में, इतिहासों का उज्वल पृष्ठ,
बर्बरता के सौ पन्नों में, मानवता का छोटा पृष्ठ।
खूनी सम्राटों के शव पर लिखे पड़े अगणित इतिहास,
रक्त रंजिता इस धरणी का हिंसा का भीषण इतिहास।
कब्रों पर उलूक कुछ कहते, लिखते हैं लेखक इतिहास,
विरुदावली सुकवि कहते हैं क्रूर नृशंसों का इतिहास।
कवि कुछ कहो लिखो कुछ लेखक बलिया को नूतन इतिहास,
सत्य अहिंसा के सपूत ने कहा वाह बलिया शाबाश।
बज्र बनी दीनों की हड्डी निर्भय छाती ढाल वहाँ,
जन चेतना प्राण का सौदा किसकी गलती दाल वहाँ।

शस्त्रागार व्यर्थ, जनता ने लिया अमोघ अहिंसा अस्त्र,
व्यर्थ हुये पशुबल के साधन है अव्यर्थ अहिंसा अस्त्र।
करुणा जीती, मानव जीता, जीती जन-चेतना अमर,
देव नहीं, ये नर जीते हैं मचा अहिंसा महा समर।
बढ़ो मेघ! विद्युत गति से अब दे दो बापू को सन्देश,
चला तुम्हारे आदेशों पर कोटि कोटि वीरों का देश।
हिंसा का कंटकाकीर्ण वन वीर पुत्र हँसते निकले,
अग्नि-परीक्षा में तेजस्वी शान्त वीर सच्चे निकले।

महादेव

बापू खड़े हैं शान्त धीर शोकांजलि ले,
काता हुआ सूत, श्वास श्वास ज्ञान-पूत है।
आहों की समाधि बनी, महादेव शान्त पड़े,
सोया शर-शैया पर भीष्मसा सुपूत है।
महादेव! महादेव! देखो फिर एक बार,
चढ़ता समाधि पर बापू का सूत है।
विश्व को हँसाने वाला-आह! खड़ा रोता आज,
कोटि कोटि पूत वाला सन्त भी निपूत है।

अघासुर

अघासुर उठा साँस तोड़ी नहीं,
अभी पाप की गैल छोड़ी नहीं।
उठा, देश सारा जलाने चला,
उठा, खून पानी बनाने चला।
उठा, अग्नि में घी बहाने चला।
चला, खून ही से नहाने चला।

हर प्रसाद

जकड़ा कसा सिंह रस्सी से काँप रहा हिंसा से वृत्त,
कौड़ पड़ते हैं कस कस कर हर प्रसाद का कोमल वृत्त।

थके रुके शैतान वीर का तन भी घायल हुआ अचेत,
लो फिर कोड़े लगे मारने जैसे ही आया कुछ चेत।
मृतक समझ कर छोड़ दिया बाइस घटे शैतानों ने,
प्यास लगी कुछ दया दिखाई वहाँ भले इंसानों ने।
आया 'नीदर सोल' कहा पाय। इसने काफी खाना,
फिर भी बूट और हंटर से दिया गया काफी खाना।

दमन-ज्वाला

गाजीपुर, बलिया क्या, जलियां बाग बने थे गली गली,
दुर्गन्धित शासन के शव की वायु निकलती सड़ी गली।
महिलाओं के कटे हुये स्तन, रुधिर भरे थे पुरुष शरीर,
जलते हुये मकान, तड़पते नंगे भूखे दीन अधीर।
जलते खेत, दहकते धू धू इन्सानों के वे आवास,
मरते मरते दानव इतना करता जाता सत्यानाश।

मानव-भैरव

सदियों से इस वनस्थली में सोई अबला शान्ति पड़ी थी,
पर्वत श्रेणी भीष्म तुल्य ही धीर अचल गंभीर खड़ी थी।
जहाँ दानवों के दलने को माँ दुर्गा ने खड्ग उठाये,
वहाँ निराह पराजित जनता दानव चंगुल में जकड़ी थी।
सिंह-वाहिनी क्रान्ति-कालिका का भैरव रव गूँज उठा है,
सुनो मेघ! पर्वत शिखरों पर मानव भैरव बोल उठा है।
तार तार टूटे शासन के ध्वस्त रेल के स्टेशन हैं,
क्रान्ति-अग्रणी यह 'नरेश' का नव शहीद का इष्टासन है।
रामाधार सिंह कछवा का क्रान्ति-अग्रणी बीर दुलारा,
निरी अहिंसक जनता से ही हिंसा का शासक है हारा।
अहरौरा के सभी निवासी, विप्लवकारी हुए प्रवासी,
गोली बरसी, चिर जीवित है यह शहीद, यह नूतन काशी।

इनक़लाब

बेंत की टिखटी, विशेश्वर सिंह है,
बेंत खाकर भी पुकारा सिंह है।
भाग जाओ ओ लुटेरो! इनक़लाब,
भाग जाओ डाकुओ, यह इनक़लाब।
बेंत लगते ही निडर बोला 'अली'
देश छोड़ो शासको, है इनक़लाब।

सिंह-नाद

घिरी जेल, जनता उमड़ती चली,
कँपे क्रूर, सरिता घुमड़ती चली।
खुला वीर-सीना चलें गोलियाँ,
खुला कंठ, बोला अमर वाणियाँ।
"अभी एक गोली बनी ही नहीं,
सके मार जो आत्मा को कहीं।
रुके हाथ, कप्तान थर्रा गये,
सिपाही डरे और भर्रा गये।
जरा बोलकर गोलियां खेल की,
दिशा ही बदल दी अरे जेल की।

शत्रुघ्न

यह सुमन हमारी वाटिका का निराला,
जननि! चरण तेरे दूसरा भी चढ़ा है।
कोमल कुमार कुसुमों का वीर वक्षस्थल,
भारी भार संकट पहाड़ घोर विघ्न आह!
कारागार, वेदना सुकेशिनी सँवारी हुई,
देते थे मनस्वी को सदैव कोटि विघ्न राह।

बन्दी के बच्चे बिना औषधि उपाय मरें !
वाहरे कृतघ्न देश ! नगर कृतघ्न वाह !
माता बिलखाती फिरे बन्दी पिता रोता फिरे,
मेरे सुकुमार फूल, आह शत्रुघ्न आह !

लुटेरे

अरे सभ्य कहलाने वाले ये तैमूर गजनवी देखो,
सत्यानन्द साधु का आश्रम लूट रहे हैं शासक देखो।
गांधी आश्रम, चरखा करघा से भी इनको इतना भय है,
बुद्धि-नाश, मिट चुका ज्ञान, अब शीघ्र नाश शासक का तय है।
राजनारायण वीर बाँकुरा फाँसी के झूले में झूला,
क्रान्ति-तरणि के उदय- काल में यह बलिदान कमल दल फूला।

बिहार

शान्त वीर राजेन्द्र रत्न, जोगेन्द्र शुक्ल का प्रान्त बिहार,
चलता अडिग खड्ग धारा पर जनक, बुद्ध का शान्त बिहार।
यह प्रसाद की सौम्य साधुता बुद्धदेव की निश्चल शान्ति,
चंपारन के यती तपस्वी की मच गई अहिंसक क्रान्ति।
जन जन में चेतना भावना, मन मन में मानव की भक्ति,
तन तन में शूरों की सच्ची विश्व-विजयिनी मानव-शक्ति।
छिन्न भिन्न शासन के सारे कटे पड़े पापी जंजाल,
चेते नर कंकाल, शंभु के प्रेरित मानव शूर विशाल।
यह बढ़ती छात्रों की टोली, वह महिलाओं की टोली,
इधर खुले सीने मरदाने, उधर हिंसकों की गोली।
कुँवर सिंह के वीर सूरमा कोटि-कोटि सीना ताने,
ये आजादी के परवाने, मातृ भूमि के दीवाने।

विप्लव

चलतीं रेलें किन्तु आज विद्रोही के आदेशों पर,
चलता शासन किन्तु आज विद्रोही के संकेतों पर ।
प्रखर प्रचंड सूर्य जनता का, छिपे उलूक दबे शासक,
तरल तिरंगा नव उमंग से फहराता, जन-बल मापक ।
उमड़ा घोर सिंधु जनता का, कौन शक्ति थी पथ-बाधक,
अब जन जन था क्रान्ति अग्रणी, विप्लवकारी संचालक ।
उठे आततायी उत्पाती, उठे कुटिल अत्याचारी,
करने लगे प्रहार भयंकर, शक्ति-संतुलन की बारी ।
इधर नम्रता और सरलता भरी जवानों की टोली,
ध्रुव सी निश्चल किन्तु शांत गंभीर किसानों की बोली ।
उधर उग्रता और कुटिलता, लाठी, बन्दूकें गोली,
कँपते पैर, दहलते सीने, क्रूर नृशंसों की बोली ।
कूद पड़े हिंसा-ज्वाला में, हँसते ये करुणा के फूल,
प्रेम-पंथ के चलने वाले, पथ में गाड़े गये त्रिशूल ।
अडिग अभय, उनके चलते ही डगमग सिंहासन डोले,
कोटि कोटि मां के बच्चों ने दुखदायी बंधन खोले ।
साहस के बल आगे बढ़ते भय का नाम निशान नहीं,
गोली की बौछारों में भी रुकते वीर जवान नहीं ।
हार गये थे अत्याचारी, हारे उनके हाथ हृदय,
बर्बरता के आसन डोले, जीते कोमल शान्त हृदय ।
मुख पर घोर ग्लानि लज्जा थी ऐसी दानवता की छाप,
यह नृशंस बर्बरता देती दानव को ही दुख सन्ताप ।
मासूमों का खून बहा था, उनकी अमर कहानी है,
अमर शहीदों समाधि पर यह आँखों का पानी है ।
सफल करो जीवन जल नीरद ! शीतल जल तुम बरसाओ,
अग्नि दानवों ने बरसाई तुम - शीतल करते जाओ ।
खून चढ़ा उन जल्लादों पर लज्जा से मुख है निस्तेज,
उज्वल मानव तो विजयी हैं खड़ा हिमालय रूप सतेज ।

अमर वीर

दूब से विनम्र दीन, ओस से प्रशान्त कान्त,
गिरते सहर्ष वीर भूमि के चरण पर।
अरुण गुलाब कंटकों के अंक झूम झूम,
लालिमा दिखाते मंजु वरण वरण पर।
शान्त थे हिमालय से अचल गभीर धीर,
रोने वाले वीर नहीं चीर के हरण पर।
बापू के बच्चे सच्चे सूरमा तपस्वी थे,
हँसते अशंक कोटि वीर वे मरण पर।

वे

सुमन सिरीष से, सनेह के सरोरुज से,
पंकज पराग से ललाम वे तड़ाग के।
आम्र मंजरी से सुकुमार उपकार-भार,
फूल से त्रिशूल पर उजड़े हुए बाग के।
देश के दिवाने, परवाने थे प्रकाश-प्रेमी,
जलते अखंड ज्योति क्रान्ति के चिराग वे।
बाग के ललाम भूरि भाग अनुराग जगे,
वीणा बजी, बोले स्वर राग के विहाग के।

जयप्रकाश

सेनापति कारागृह में था सेना हुई निराश,
पड़ी वीरता कारागृह में जनता हुई हताश।
पशुबल की घनघोर तमिस्रा, भीषण अत्याचार,
बढ़ने लगे नृशंस कंस के दानव के व्यापार।
महिलाओं की लाज जा रही पांडव बैठे मौन!
पांडव बैठें हों, पर मानव कैसे बैठे मौन।

दीनों का संसार जल रहा, दीनबन्धु ही मौन !
दीन बन्धु हों मौन, किन्तु क्यों दीन रहेंगे मौन।
काराग्रह में बन्दी बैठे करते जटिल विवाद,
अरे वीरता की बेला में ऐसा बुद्धि-प्रमाद !
एक समस्या, सुप्त वीरता बैरी की ललकार,
दो प्रकाश, पीड़ित कहते हैं आज पुकार पुकार।
तूफानों में पड़ी हुई है यह नौका मँझधार,
छूट गये हैं अपने साथी, टूट गया पतवार।
बन्धन में है सन्त हमारा, बन्धन में सन्देश,
जलता है रावन के ईंधन में यह सारा देश।
जयप्रकाश वीरता मुक्त थी, तिमिर फटा आलोक,
जयप्रकाश अरविन्द लोक का आज मिट गया शोक।

तीनवीर

वह कौन जागता है ?
पट-अंधकार ओढ़े सोई निशीथिनी है।
निद्राभिभूत नारी नभ की पयस्विनी है।
तम तोम है, सितारे टिम टिम चमक रहे हैं,
वर्षा शिथिल हुई है, जुगनू दमक रहे हैं।
कारा भयंकरा के सोते पड़े सिपाही,
पथ खोजने चले हैं ये तीन वीर राही।
संसार सो रहा है, संसार रो रहा है,
निज अश्रु से हृदय का परिताप धो रहा है।
संसार वीरता का वरदान माँगता है,
संसार वीरता का वलिदान आँकता है।
शार्दूल भागता है।
जकड़ी पड़ी हुई थी वह वीरता हमारी,
उपहास बन रही थी गंभीरता हमारी

सौ सौ शृगाल हँसते शार्दूल-शृंखला में।
बँधता समुद्र कैसे उस क्षुद्र मेखला में।
लो तोड़ फोड़ बन्धन गोपाल भागता है।
बीहड़ घने बनों से शार्दूल जा रहा है।
काँटे चुभे पगों में शार्दूल जा रहा है।
निकला शिवा हमारा घन घोर बन्धनों से,
हँसता शृगालता पर शार्दूल जा रहा है।
अब मौन हो उलूको सहमो शृगाल भागो,
निज सिंहनाद करता शार्दूल आ रहा है।
कैसी घनी तमिस्रा, कैसी घनी निराशा,
जय जय प्रकाश, प्यारा मार्तंड आ रहा है।

पुण्य- ंथ

पुण्य-पंथ वीरों का सुन्दर जय प्रकाश का मार्ग,
कोटि शृगालों में करता शार्दूल शान से मार्ग।
बीहड़ बन कंटक देते हैं वीर-सिंह को मार्ग,
घोर निराशा में देते है वीर विश्व को मार्ग।
धर्म सत्य है किन्तु वीरता सर्वोपरि है सत्य,
सदा वीरता के प्रांगण में खेलेगा शिव सत्य।
यही वीरता, उन्नत मस्तक, उन्नत शान्त विचार,
वीर नहीं झुकता है सुन कर दानव की ललकार।
झुकता है पीड़ित मानव के चरणों पर शत बार,
कभी नहीं झुकता संकट में वीर एक भी बार।
फूलों सा कोमल करुणा से दीन प्यार के भार,
बज्रादपि कठोर सुनते ही दानव की हुंकार।
छाती पर पत्थर सा रख कर कठिन वेदना-भार,
वीर चला करता है ऊपर कठिन खड्ग की धार।
साहसवारी अभय त्रिशूली शिव शंकर सा वीर,
अचल हिमालय तूफानों में धीर वीर गंभीर।

साधन

साहस, इसके आगे सारे अस्त्र शस्त्र हैं व्यर्थ,
शव को शिव करता है, साहस मंत्र अमोघ अव्यर्थ।
बुद्धि जहां बैठी करती है जटिल कुटिल शास्त्रार्थ,
ज्ञान जहां यह लोक छोड़ कर कहता है परमार्थ।
वहाँ वीर अवसर पर तत्क्षण देता है ललकार,
वह संसार तुम्हारा होगा मेरा यह संसार।
मेरा यह संसार यहाँ पर मानव का अधिकार,
कर में शक्ति, हृदय में साहस, मन में दिव्य विचार।
मानव के रहते मानव पर कैसा अत्याचार,
मानव जीता रहे और जीता हो भ्रष्टाचार।
एक वीर भी उठ कर दुश्शासन की जंघा तोड़,
परम निकट वह पाप समझता दूर दूर की छोड़।
तो न महाभारत ही होता और न नर संह[illegible],
अवसर पर वीरता बनाती है सुन्दर [illegible]ार।

विश्वास

बज्रादपि कठोर फूलों की टाँकी से टूटेंगे,
रावण के घट करुणा-जल से फूटेंगे फूटेंगे।
हारेंगे हिंसा के पुतले शोषक शासक सारे,
मानव के आगे दानवता के छक्के छूटेंगे।
मरी पूतना घोर दानवी कंस बंस की बारी,
कोटि कृष्ण, चाणूर दुष्ट दल कूटेंगे कूटेंगे।
फिर यमुना के तीर बजेगी चैन प्रेम की बंशी,
फिर गोपाल कृष्ण घर घर में दधि माखन लूटेंगे।
फिर समता जान्हवी कोटि-जन भागीरथ लायेंगे,
फिर श्रम-कण-गंगा लहरों में जन श्रम फल लूटेंगे।
समता का समीर शीतल सब शान्ति प्रेम के भोगी,
प्राण-बाण छूटेंगे, मानव के बन्धन टूटेंगे।

शिला-खंड

बढ़ी वीरता की बढ़ी तीव्र ज्वाला,
कढ़ी प्राण से वीर की तीव्र ज्वाला।
शिला-खंड थे शीतकारी, दुखारी,
बढ़ाते गये प्राण की तीव्र ज्वाला।
शिला खंड से तीव्रता मिट सकेगी ?
शिला खंड से बुझ सकी प्राण ज्वाला ?
बढ़ाता गया शीत ही प्राण ज्वाला,
बढ़ाते गये प्राण ही प्राण ज्वाला।
लगे खेलने अग्नि से अग्नि वाले,
उठी तीव्र ज्वाला, महा मेघशाला।
महा अग्नि से अग्नि सन्तान खेले,
बनी तीव्र ज्वाला भली फूल माला।

नभ-दीप

नहीं बुझेंगे नभ-दीप सारे, सदा जले हैं जलते रहेंगे,
प्रकाश की पुण्यमयी कथायें, सदा कहीं हैं कहते रहेंगे।
गुलाब के फूल सुकंटकों में, सदा खिले हैं खिलते रहेंगे।
उलूक प्रेमी घन अंधकार के, सदा छिपे हैं छिपते रहेंगे।
ज्ञानी मनस्वी चिर संकटों में, सदा हँसे हैं हँसते रहेंगे,
पयस्विनी शीतल शान्त धारा, सदा बहे हैं बहते रहेंगे।
महा त्रिशूली शिव, दैत्य सारे, सदा गिरे हैं गिरते रहेंगे,
आकाश, तारे, रवि, चन्द, ज्योत्स्ना, नीलाम्बरा शस्यभरी धरित्री
समुद्र आह्लाद विनोदकारी, मनुष्य की भाव-मयी ऋचायें,
मनुष्य की पुण्य मयी कथायें, सदा पढ़ी हैं पढ़ते रहेंगे।
मनुष्य है सत्य मनुष्यता है, हरी भरी मानवता लता है।
सींची सुधा से समता लता है, वसुन्धरा वीर पतिव्रता है।
मनुष्य की मानवता रहेगी, दया जियेगी, करुणा जियेगी।

हिंसा घृणा के दुख दूत सारे सदा मरे हैं मरते रहेंगे।
मनुष्य की चेतनता प्रफुल्ल है, वीणा, प्रवीणा तरुणा नवीना
केकी-कला निर्झर के स्वरों में सदा बजी है बजती रहेगी।
मनुष्य की मानवता रहेगी। मरी सदा दानवता मरेगी।

प्रकाश-पंख

पवन-वेग पर्याप्त नहीं है, मेघ! करो द्रुत गति को,
देखो वीरों की सद्गति को अत्याचारी अति को।
लो प्रकाश-पंखों पर बैठो, जय प्रकाश जा देखो,
मिदनापुर चटगाँव वीर बंगाल भूमि जा देखो।
रुको उड़ीसा में शासन की कैसी धूलि उड़ी है,
यह मद्रास सिन्धु लहरों से अधिक क्रान्ति उमड़ी है।
मध्यदेश के वीर बाँकुरे भंग कर चुके शासन,
महाराष्ट्र के वीर चलाते हैं जनता का शासन।
यह पंजाब सिक्ख वीरों का जौहर खुलता देखो,
वीरों की उमंग से सरिताओं की समता देखो।
आज कौन है वीर देश का जो पानी से खाली,
नगर-नगर प्रति ग्राम-ग्राम विप्लव गति है भू चाली।
अभयनाद तुम रुद्र घोष से साधुवाद उच्चारो,
चली सफलता विद्युत पथ तुम भी अपना विस्तारो।

भंसाली

भंसाली! ओ मेरे दधीचि!
पशुता की दारुण घटनायें, थीं सर्वनाश की ज्वालायें,
नर निरपराध मारे जायें, बिलखें अबलायें ललनायें।
मानव! तुझको ले गई खींच।
हो गया उग्रतम वृत्रासुर, जलवाये घर फुँकवाये पुर,

कलपाये शिशु मरवाये नर, काँपी थी धरती थर थर थर।
दुश्शासन था दुर्वृत्त नीच।

जनसेवक कारागार बन्द, अवरुद्ध मुक्त उदगार बन्द।
निर्द्वन्द क्रूर के कठिन फन्द बर्बरता के नारे बुलन्द।
मच गई रुधिर की नीच कीच।

शासित पीड़ित थे अस्तव्यस्त, शासक नृशंस अभिमान मत्त,
निरपेक्ष निकम्मे अनासक्त, जनता की दीन गुहार त्रस्त।
सुन पाया नवयुग का दधीचि।

चीमूर देखकर घटनायें, तैमूर गजनवी शरमाये,
वीभत्स भयानक लीलायें, दुर्दंड दमन की चेष्टायें।
निर्भय अदम्य मेरा दधीचि।

अपने विशाल प्राणों के बल, ललकारा था तुमने पशुबल,
रुक जा प्रमत्त रे क्रूर प्रबल, देखेगा तू निर्बल का बल?
आता है इस युग का दधीचि।

ठन गया अहिंसक रण अनशन, करना होगा क्रूरता शमन,
यह है प्राणों का आन्दोलन, निर्बल अनशन करता हरिजन।
लेकर अमोघ तपबल दधीचि।

इतने पर भी पैदल यात्रा, बढ़ती थी दृढ़ता की मात्रा।
लिख गये अमिट सौभाग्य अंक, लगने को थी पूरी मात्रा।
राष्ट्रीय सन्त-लेखक दधीचि।

तिरसठ दिन अनशन क्षीण गात्र, रह गई शेष बस अस्थि मात्र,
हो गया पाप का पूर्ण पात्र, परि पूर्ण देश का भाग्य पात्र।
अविचल अशंक मेरा दधीचि।

क्रूरता जाँच करना होगा, या तो मुझको मरना होगा।
मूकों का दुख सुनना होगा, दुखियों का दुख हरना होगा।
कहता था भारत नव दधीचि।

हारा पशुबल पशुता हारी, सहमे सुनकर सब संसारी।
अद्भुत था सेवा व्रतधारी, जीता निरस्त्र पर उपकारी।
वृत्रासुर नाशक नव दधीचि।

अकाल

जननी धरणी की गोदी पर कंकाल अस्थि अवशेष गात्र,
कंगाल भूख से मृतक - प्राय, निश्शेष मानवी रूप मात्र।
चिपकी है पीठ पेट से हैं चिपकी हड्डी पर शेष खाल,
डोलते डोलते जन-पथ पर हो गया शिथिल मानव विशाल
गिर पड़ा भूमि पर हो अचेत गिर पड़ा मनुजता का मन्दिर।
करुणा की दीन पुकार अरे क्या सुन पायेगा विश्व बधिर।
मिलता दो मुट्ठी बस चावल जलती है उदर मध्य ज्वाला,
सब ओर जगत से हो निराश जन-पथ में है डेरा डाला।
तन में इतनी भी शक्ति नहीं कह सके और कुछ भोजन दो,
कुत्ते की रोटी का जूठा, टुकड़ा ही दो, जीवन धन दो।
जब सुन न सका चीत्कार विश्व क्या सुन पायेगा मौन रुदन ?
उड़ता है पिंजँड़े का पक्षी दाने दाने को दीन, निधन।
नस नस में पीड़ा होती है जलता जाता है शेष खून,
सभ्यों के द्वारा दिन रहते जन - पथ पर होता खून, खून,
वह रक्त बीज, वह धनकुबेर वह विश्व समर का संचालक,
चूसते इसी ढँग से पल पल मानव शरीर का गरम खून।
उसकी तृष्णा के प्याले में पहुँचा है मानव गरम खून।
मत इसे कहो दुष्काल मृत्यु यह हैं मानव का खून खून।
ओ मुक्त रमण करने वाले! तल अतल तरण करने वाले!
ये तेरे भाई पड़े यहाँ ओ गगन भ्रमण करने वाले!
दुष्काल नहीं, पृथ्वी तल से मानव ने विपुल अन्न खींचा,
पृथ्वी को रक्त पसीने से आजीवन श्रमिकों ने सींचा।
रे दानव! वह सब अन्न कहाँ, सब तेरे उर में समा गया?
श्रमजीवी के जर्जर तन पर तू अपना आसन जमा गया।
रण घोषी भस्मासुर करता है अन्न छीन कर भस्मद्वार,
मरते हैं तड़प तड़प भूखे सड़कों पर ये मानव कुमार!
ईश्वर की भोली सन्तानें देती है तड़प तड़प जानें,
तेरी तृष्णा का जाल कठिन तू खड़ा उसे अब भी ताने।

ले गये उठाकर अस्पताल कुछ औषधि मुख में डाल रहें,
या मरने वाले को जीवित कर घुला घुला फिर मार रहे!
कंकाल कोल के गाल पड़े विकराल रुद्र है उग्र रूप,
मत देखो वह ज्वाला-मुख है शंकर प्रलयंकर का स्वरूप।
ओ हत्यारो! वह है त्रिनेत्र, उसके आँसू हैं अंगारे,
जल जायेंगे दानव तेरे तृष्णा के उपादान सारे।

सुभाष

मेरे सुभाष ! मेरे प्रताप।
सेनानी! अपने तुल्य आप।

तुम अग्नि-पुंज, वीरता-कुंज, तुम अदमनीय हे ज्योति पुंज!
सम्राट! तुम्हारा सिंहनाद सम्राट हो गये लुंज-पुंज।
राजा-रंकों के महाराज, निष्कासित तुम हृदयाधिराज।
जो बन्द रख सके वीर तुम्हें अब तक वह कारा नहीं बनी,
जो मार सके तुमको सुभाष अब तक वह गोली नहीं बनी।
छलियों से छल, बलियों से बल, निर्बल के बल तुमही सुभाष,
राणा प्रताप, रणवीर-शिवा तुम वीर रुद्र मेरे सुभाष।
तरुणों ने तुमको दिया ताज, तुमने तरुणों को दी उमंग।
तुमने छेड़ी थी विकट जंग, हो गया क्रूर का राज्य भंग।
वे लक्ष लक्ष जन बोल उठे, उनसे सिंहासन डोल उठे।
वह देखो वीरों! मातृभूमि, वह देखो है स्वाधीन भूमि!
वीरो! दिल्ली भी दूर नहीं, रुकने वाला है शूर नहीं।
वह लक्ष लक्ष धन चरणों पर, कितने भामाशा चरणों पर।

तन मन धन है तेरा प्रताप!
मेरे सुभाष ! मेरे प्रताप।

चल पड़ी जवानों की टोली, खुल उठी जवानों की बोली।
बोली सन् सन् सन् सन् गोली आजादी की होली। होली।
इंफलके उन मैदानों में, पाई थी विजय जवानों ने।

थी विजय-पताका फहराई, पहले भारती जवानों ने।
जय स्वर्ण भूमि, जय वीर भूमि, जय जय जय जय स्वाधीन भूमि,
वीरों का वीरोचित तर्पण, सर्वस्व देश के हित अर्पण।
एकता शूरता का दर्पण वीरता जान्हवी अघमर्षण।

चमका उज्वल निर्मल प्रताप,
मेरा सुभाष, मेरा प्रताप।

तुम चिरजीवित ! तुम अजर अमर,
बलिदानी ! तेरे गुण गाकर,
कितने बनते हैं वीर प्रवर।

तरुणों के उर में अटल राज्य,
अविभाज्य सदा है वीर-राज्य।

ये कोटि रंक ये कोटि दीन,
युवराज तुम्हारे महाराज।
मेरे प्रताप, मेरे सुभाष।

बा

" बाँधो, यों कसकर मत बाँधो।
कोमल बा को, कोमलता से-
अन्त समय में साधो !
राम नाम है सत्य, राम को
जपो और आराधो "

बापू रोये विकल हो यद्यपि धीर गँभीर !
आगा खां के महल में बा का छार शरीर।
चिर् समाधि यह शान्ति की, पुण्य पर्व शिवरात्रि।
शान्त शांभवी सो रही, महारात्रि, शिवरात्रि।
बा समाधि पर है जहाँ लिखा हुआ हे राम !
श्रद्धा की वर्षा करो हे घनश्याम ललाम।

पूर्णाहुति

क्रान्ति भवानी उग्र हो उठी, फैली घोर अग्नि की ज्वाला,
घर घर नगर नगर में विप्लव, सिंह-वाहिनी दुर्गा, ज्वाला।
राष्ट्र - यज्ञ के जीवन-होता प्रिय सुभाष ने मंत्र उचारा,
गूँजी गिरि गह्वर में प्रतिध्वनि, जय जय हिन्द वीर का नारा।
तक्षक सहित चला सिंहासन, पूर्णाहुति अत्याचारी की,
राजमुकुट मिल गया धूलि में, मिटती सत्ता व्यापारी की।
विद्रोही नाविक, परदेशी नाव डुबाते मध्य सिंधु में,
गोली बरसी, क्रान्ति छा गई इंफल से बम्बई सिंधु में।
पूर्णाहुति की बेला दानव नाग बंस मिटने की बारी,
यज्ञ-सफलता की बेला में छलिया की छलकी तैयारी।
गिरा सन्त के चरण, भेंट की गंध हीन फूलों की थाली,
रीझ गये बातों बातों में, अपने उपवन के बनमाली।

ईद

बज उठीं, बधाइयाँ, बँट रहीं मिठाइयाँ।
ग्राम-ग्राम धाम-धाम, फूल औ मिठाइयाँ।
डाल-डाल बाग-बाग, फूल उठीं क्योरियाँ।
वृद्ध बाल गा उठे, नाच उठीं नारियाँ।
आज हिम-किरीटिनी वन्दिनी स्वतन्त्र है!
सिंहिनी स्वतन्त्र है, वन्दिनी स्वतन्त्र है।
श्वेत वस्त्र छा रहे, श्वेत वस्त्र गा रहे।
श्वेत श्वेत मेदिनी, किन्तु श्वेत जा रहे।
फूल फूल गा उठे, वाटिका सजा उठे।
फूल हैं बसन्त के पर बसन्त है कहाँ!
राम राज्य आ गया, किन्तु राम हैं कहाँ?
धूम धाम श्याम की किन्तु श्याम हैं कहाँ?

कौन सी बहार हैं, जो बसन्त दूर है!
सन्त की पुकार हैं, किंतु सन्त दूर है।

यज्ञ - पूर्ण हो गया, लो प्रसाद बँट गया।
राम राज्य हो गया, किन्तु सन्त है कहां!

खेत से किसान ने, मील से मजूर ने
जेल में पड़े अभी, शहीद वीर शूर ने,

चौंक चौंक कर कहा, कि रामराज्य आ गया!
गरीब दीन हीन का स्वराज्य आज आ गया!

आ गया स्वराज्य! मां पुकारती शहीद की,
है प्रसन्नता परन्तु क्षीण इन्दु ईद की।

शहीद

मेरे शहीद मेरे शहीद! तुमसे मेरी बकरीद ईद।
तुमसे होली तुमसे बसन्त! तुमसे कंपित शासन दुरंत।
तुमसे दुश्शासन अन्त अन्त। ओ कारावासी वीर सन्त।
मेरे शंकर मेरे मूसा। मेरे माधव, मेरे ईसा।
मेरे ललाम अभिराम राम। तुमसे स्वदेश है पूर्ण काम।
आशा सरिता के कलित कूल। नग्ना दीना माँ के दुकूल।
माता मन्दिर के शुभ्र फूल। चढ़ते चरणों पर फूल फूल।
तुम नीलांबर के पूर्णचन्द, घनघोर घटाओं में अमंद।
तुमसे लहराता देश-सिन्धु, तुम धीर वीर गंभीर सन्त।
कारा तनहाई औ फाँसी, तुमसे बनते काबा काशी।
संपदा तुम्हारी है दासी, चिरजीवी ओ कारावासी।
ओ सूली पर सोने वाले! ओ मतवाले गाने वाले।
मरने वाले जीने वाले! सबको जीवन देने वाले।
सबकी होली औ दीवाली, सबकी स्वतन्त्रता औ शादी।
सुन्दर तेरे बलिदानों से, आई है प्यारी आजादी।

आजाद

प्रज्वलित दीप का वह पतंग,
जिसका प्रदीप्त था अंग अंग।
कमनीय कमल का अमित अङ्ग,
छेड़ी थी जीवन—विकट—जङ्ग।
जिसके श्वासों में क्रान्ति क्रान्ति,
खोकर अपना सुख चैन शान्ति।
मरने आया था जीवन भर, सीखे थे उसने दो अक्षर।
दो अक्षर, केवल दो अक्षर, मर मर नर नाहर मर मर मर।
आजाद अमर आजाद अमर।
फैलाने आया रक्त क्रान्ति, पग पग पर ज्वाला अग्नि क्रान्ति
उसकी जननी थी शैव शान्ति, रण-पथ भीषण दुर्दान्त क्रान्ति
चढ़ कर बेंतों की टिखटी पर, या शासन की कमबख्ती पर,
चिल्लाया था वह बीस बार, 'माँ भारत माँ जननी उदार!
अब यह शरीर जीवन असार, चरणों पर है बलिहार प्यार।
माँ, रह न सका मैं शान्त शान्त, क्रूरों ने मुझको किया क्रान्त।
शिर लिये सदैव हथेली पर, घूमा वह नाहर नगर नगर।
आजाद अमर आजाद अमर।
शिवशंकर होंगे ही प्रसन्न, यह मुंडमाल पहिनें अच्छिन्न,
वरदानी! कुछ देना होगा। यह शीश भेंट लेना होगा।
घूमा वह पागल नगर नगर, पथ भ्रष्ट कहा करते कायर।
विक्षिप्त कहाया पागल नर, पर सब कहते थे नर है नर।
आजाद अमर, आजाद अमर।
कुरते की दोनों जेबों में, पिस्तौल, चने थे जेबों में।
गिन गिन कर त्रासक अन्यायी, करता प्रहार वह भयदायी।
जब कहता जालिम ठहर ठहर, तब सहम सहम जाते वे नर।
जो पशुबल के अभिमानी थे, पापों की एक कहानी थे।
आजाद अमर, आजाद अमर।
विश्वास किया था यारों पर, जग के घातक व्यापारों पर

उसने जो यज्ञ रचाई थी, पूर्णाहुति-बेला आई थी।
फल के पहिले विध्वंस हुई, वह वीर भद्र से ध्वंस हुई।
देखा न सफलता का अवसर। बलिदान चन्द्रशेषर नाहर।
आजाद अमर, आजाद अमर।

दुनियाँ जो चाहे कहे सुने, मर जाने पर अब शीश धुने।
गोली की होली खेली थी. आजादी एक सहेली थी,
आजादी ही हम जोली थी उसने जयमाला मेली थी,
वह शिवा प्रतापी शेर बबर, कहता था ठीक 'नाड बावर'।
आजाद अमर, आजाद अमर।

तूफ़ानों पर वह सोता था, इन्सानों पर वह रोता था।
वह क्रांति बीज ही बोता था, वह देश भक्ति का सोता था।
वह दग्ध - हृदय था, व्याकुल था, दुर्धर था, धीरज खोता था।
कहता था जीवन मृत्यु बना, तब जीवन से क्या होता था।
कब तक मरघट की शांति शांति कब तक प्रबलों की रक्त क्रांति !
मूकों की दारुण व्यथा कष्ट, क्या योंही होंगे नष्ट भ्रष्ट ?
शोषण, सभ्यों का यह प्रसार ? संसार विषमता का विकार
मिट जावे इसके साथ मिटें, सब शोषक शासक दुष्ट हटें।

किस दिन को हैं मन चले वीर ?
हर दें माँ की तत्काल पीर।

जीवन कुछ बूँदों का उभार, बलिहार न हों क्यों यह असार।
पीकर वह हाला लाल लाल, तर्पण कर बैरी रक्त ढाल।
मरते मरते करते कमाल, सोया माता का एक लाल।
आजाद अमर, आजाद अमर।

अखंड

"विजय के अवसर पर - अवसाद।
आह ! बर्बरता का उन्माद।
सफलता, स्वतन्त्रता का सूर्य
उलूकों का अविवेक प्रमाद।

सजाई, प्राणों के परिधान,
मातृ-प्रतिमा क्या होगी-नग्न ?
मातृ - मन्दिर के होंगे खंड ?
कोटि हृदयों के होंगे खण्ड !
द्वेष, हिंसा पीड़ा उत्पात,
अरे यह थोड़े दिन की बात
हिमालय के होंगे दो खंड ?
पय सिंचित गंगा के भी खंड,
सिन्धु लहरों के भी हों खंड,
और आकाश, सूर्य के खंड
गगन, नक्षत्र - लोक - के खंड !
अरे धर्मान्ध, अंध नर-मुण्ड !
समझ ले स्वार्थ भरा पाखंड,
आज भी भारत - वर्ष अखंड।
आज भी गङ्गा जल की धार,
अमल, है अविच्छिन्न, अविकार।

विन्ध्य कटि अब भी सुदृढ़ अखंड,
हुये है कभी वायु के खंड ?
सिन्धु जल धोता हैं पद-पद्म,
कोटि सन्तानों का यह सद्म
सुघर, सुन्दर पावन अभिराम,
राम का धाम सदैव ललाम,
काट ले पागल ! अपने अंग
मचाले कुछ दिन यह रण-रंग।

सजग जनमत की सुन हुंकार,
मिट रहा स्वार्थी का संसार।

एक है देश, सर्वदा एक,
एक है, एक एक की टेक।

अमर भारत स्वाधीन अखंड,
सदा, अविभाजित, पूर्ण अखंड।

आँधी

हैवानों में, तूफ़ानों में तुम चले जला कर प्रेम दीप !
वर्बरता की इस आंधी में बुझ जाय न जीवन का प्रदीप ।
हिंसा, उत्पीड़न, रक्तपात, सभ्यता, संस्कृति सर्वनाश,
मानव इतना निष्ठुर, बर्बर यह दानवता का अट्टहास ।
यह तुमुल घोष, यह रोष दोष, पीड़ित निर्बल का चीत्कार,
कातर वाणी में मानवता करुणा की यह तेरी पुकार ।
अन्तर का मानव सुन लेगा ? वेदना भरी तेरी गुहार,
ठहरो बापू, वे मचा रहे हैं भीषण निर्दय काट मार ।
वे खूनी, उन पर खून चढ़ा, हिंसा को उनका पैर बढ़ा,
केवल ऊपर ऊपर हलका तेरी शिक्षा का रंग चढ़ा ।
उड़ गया, पुनः मानव दानव, उड़ गया धैर्य साहस विवेक,
संशय वादी का संप्रदाय, ध्रुव अटल टेक पर तुम्हीं एक ।
इस आंधी में तूफ़ानों में तुम झिल मिल ज्योति लिये गांधी,
उतने ही तेरे पैर पुष्ट जितने जोरों की है आंधी ।
डुल जाय विश्व, डुल जाय विश्व का क्षण भंगुर विश्वास सत्य ।
तेरे दो पग, तेरे दो क़र डुल नहीं सकेंगे, अटल सत्य ।
ये अस्त्र शस्त्र तेरे चरणों पर भेंट, महान अजात शत्रु,
तुम कैसे यह स्वीकार करो, मानव का मानव जन्म-शत्रु ।
बाहर का दानव हँसता है, अन्दर का मानव रोता है,
तू बाहर अन्तर दोनों से मानव हिंसा पर रोता है ।

गमन

तुम चले !
धर्म-पथ पर, कर्म-पथ पर, मर्म-पर,
शर्म से सब आततायी गड़ चले !
सत्य-पथ के अभय राही, व्यथित पीड़ित के सिपाही,
आज मानवता कराही, शान्त पथ पर बढ़ चले !

आज मानव अमित पागल, आज मानव-धर्म पागल,
आज मानवता गई गल, तुम चले निष्ठुर हृदय भी हिल चले !
काँपता संसार थर-थर, आज है दानव भयंकर,
एक लकुटी के सहारे, प्रेम अंचल धर चले !
सिहर सिमटी शांति अबला, अति बर्बर शक्ति प्रबला,
कील दुश्शासन कफिन पर जड़ चले !
प्रलय की दुर्दान्त ज्वाला, प्रेम की सुकुमार माला,
प्रेम के सुन्दर पुजारी, अग्नि-पथ पर बढ़ चले !
तुम चले मेरे तपस्वी, विश्व के मानव मनस्वी,
यश तुम्हारा धन यशस्वी, हृदय सबके हिल चले ।

शैतान

रक्त बीज यह, मार मार कर प्रबल हो रहा दुष्ट,
कोटि कोटि संहार कर चुका और हो चुका पुष्ट ।
रुधिर सनी दारुण जिह्वायें और दंष्ट्र विकराल,
नेत्रों से अंगार बरसते, महा काल की ज्वाल ।
दांत पीसता खड़ा भयानक दानव पूर्ण नृशंस,
सर्वनाश का दूत मिटाता है मानव का बंस ।
हिंसा घृणा बैर की लपटें अंग अंग में नाश,
शिर पर धरे घूमता राक्षस मानवता की लाश !
अबलाओं की करुण गुहारें, शिशुओं के चीत्कार,
दानव अट्टहास करता है सुनकर दीन - पुकार ।
कोटि कोटि मानव शव के शिर रखता निष्ठुर पैर,
सना हुआ है बदन खून से सने हुए हैं पैर ।
अर्द्ध मृतक बालक लिपटे पग, पीस बढ़ा विकराल,
दांत पीसता बढ़ा, बढ़ी जाती दानव की ज्वाल ।
सर्वनाश संहार अग्नि में घृत की आहुति डाल,
बढ़ता दानव, बढ़ती जाती है हिंसा विकराल ।

विस्मित व्यथित आह बापू तुम कर जोड़े हो मौन,
अन्तर - पीड़ा अन्तर - वाणी आज सुनेगा कौन !
'रुक जाओ हिंसा पशुता के दुष्ट दूत हो शान्त,
बहुत हो चुका, मानवता का सिंधु गंभीर अशान्त।
क्षीण हो रही करुणा वाणी क्षीण हो रहा गात,
क्षीण हो रही मानवता की विभुता की सौगात।
अनशन, क्षण क्षण रुधिर तुम्हारा क्षीण होरहा आह,
क्षीण हो रही कातर वाणी, क्षीण निरीह कराह।
अब भी अट्टहास करता है, मानव का उपहास,
'व्यर्थ व्यर्थ उपवास, प्रार्थना व्यर्थ आज यह कास।'
कैसे कहें जिओ हे बापू ! और जिये यह दैत्य,
जिए घोर दानवता जग की मरे शान्ति का चैत्य।
कौन जिएगा, समय कहेगा, मानव या शैतान,
कोटि प्राण इस समय चाहते रक्षित तेरे प्राण।

हे राम

प्रार्थना-सभा हे सत्य-राम ! हे राम तुम्हारा धन्य धाम।
सौ स्वर्गों से यह श्रेष्ठ धाम। हिन्दू मुसलिम सिख एक नाम।
आनन्द-प्रेम गंगा ललाम। मानव मानव का एक नाम।
निष्काम विश्वपति राम राम। जपते दानव कुछ और नाम।
गंगा जल ऊपर शान्त-काम। थे ग्राह दबे डूबे तमाम।
बापू ! घातक का वह प्रणाम। कर जोड़े बापू राम राम।
फिर चरण परस पावन बापू। सीने पर थी गोली बापू !
हँसते हँसते तुम बोले थे, हे क्षणभंगुर भव ! राम राम।
था खुला हुआ उभरा सीना, ऐसा मरना ! ऐसा जीना !
करुणा का तन, करुणा का मन, करुणा का रण, करुणा का प्रण,
करुणा की कोमल कली जली, ऐसी हिंसा की आग लगी।
बोली दानवता धाँय धाँय, बोली मानवता हाय हाय।
रो पड़ा विश्व, रोये मानव, हँस पड़े निठुर दारुण दानव।

लग गयी चिता में तीव्र आग, धधका विषाद, उमड़ा विराग ।
वे लक्ष लक्ष, वे कोटि कोटि, निष्प्राण हुए से जन-समूह ।
वे दीन जवाहर लाल चले, वे देवदास शोकार्त चले ।
वे कोटि कोटि संतप्त चले, हे राष्ट्र-पिता किस ओर चले ।
गंभीर शान्त मेरे बापू ! हे मरण-वीर मेरे बापू !
यह महाराष्ट्र का स्वप्न, सत्य दानव कुचक्र यह स्वप्न सत्य ।
बैठा था दानव दूर दूर, करता था मानव चूर चूर ।
उसका कुचक्र भारत माता, प्रतिमा थी अपनी खंड खंड ।
उसका कुचक्र प्रिय राष्ट्र मंत्र, वह सिद्ध मंत्र था भ्रष्ट खंड ।
उसका कुचक्र, यह रुधिर सनी, विकलांग, त्रस्त भारत माता ।
वह चला गया पर छोड़ गया अपना कुचक्र जाता जाता ।
भक्तों की शासन की बाला, थी धूमधाम, थी मधुशाला ।
चढ़ गई साधुओं के शिर पर, छलिया की शासन की हाला ।
बापू ! तुमको हम रख न सके, हम तुमको हाय परख न सके ।
इतना वैभव, शासन लेकर, हम तेरी रक्षा कर न सके ।
दानव की दुनियां दीवानी, लोभी की ऐसी नादानी !
चांदी सोने के टुकड़ों पर दानव की दुनियां दीवानी ।
ईसा को इसने दिया क्रास, मुहम्मद पर पत्थर के प्रहार ।
सुकरात जहर का भागी था, सब सन्तों पर दानव प्रहार ।
धन के आगे, लोभी दुनियां ने कब किसको सन्मान दिया,
मरने पर पत्थर सजवाये, उनके ग्रन्थों को मान दिया ।
बोली थी गोली तीन वार, साधू सन्तों ! सब होशियार !
यह दानव की लोभी दुनियां, मानव के बच्चों होशियार !
जीना हो तो इस दानव को, इस रावण को ही कहो राम ।
नर मेध मचाया है इसने बलि होते होते दो प्रणाम ।
हे सत्य अहिंसा अवतारी ! गोली से बोला व्यापारी ।
है कृष्ण चाहिये, गांधीजी ! माला से मिटते कंस नहीं,
दानव के रहते पृथ्वी पर पनपेंगे मानव बन्स नहीं ।
इसका कुचक्र गोली देगा, सूली देगा यह सन्तों को,
मरने पर भक्तों से ज्यादा आदर देगा यह सन्तों को ।
बोलेगा सन्तों की वाणी, सन्तों की हड्डी बेचेगा,

यह दानव अपना माल अरे तेरी हड्डी से बेचेगा।
बापू! ये मानव के बच्चे, ये दीन हीन भूखे सूखे।
ये कोटि कोटि हैं जाग चुके। आधी दुनियां से भाग चुके,
दानव, हत्यारे व्यापारी, अन्यायी औ अत्याचारी।
जागे हरिजन, हैं छाँट रहे दानव-जंगल की डाल डाल।
हैं बना रहे मानव प्रांगण वसुधा पर तेरा ही विशाल।
समतल होगी यह वसुन्धरा, समता का सुन्दर अटल राज।
खेलेगा सत्य किशोर वहां औ शांति-बालिका, रामराज।
तन तन में आज तुम्हारा तन, मन मन में आज तुम्हारा मन।
मन मन में आज तुम्हारा प्रण, प्रण प्रण में आज तुम्हारा प्रण।
करुणामय उर में ऐसा व्रण! स्वर स्वर में आज तुम्हारा स्वर।
तुम से भी होते हैं नश्वर? हे अविनश्वर हे अजर अमर!
मानव जीवन के ध्रुवतारा! ओ करुण राग के एकतारा!
ओ करुणा-रस के महा काव्य! मानव जीवन के महाकाव्य!
उज्वल है जीवन पृष्ठ पृष्ठ, महिमा-वरेण्य, गौरव-वरिष्ठ!
विप्लव था तेरे चरण चरण, नवजीवन देता महा-मरण।

युग युग जीवित चिरवन्दनीय!
हे पूजनीय! अभिनन्दनीय!

क्या होगा पावस कभी ऐसा और वसन्त,
कथा चलेगी भूमि पर विचरा ऐसा सन्त।
बापू करते हैं जहाँ शान्त शान्त विश्राम,
बरसो वहीं समाप्त हो हे घनश्याम ललाम।

निधन

मरण हमारे राष्ट्र पिता का, झुकी हमारी राष्ट्र पताका।
कोटि कोटि का मरण हुआ है, यह गान्धी का मरण नहीं है।
हिला हिमालय सागर डोले, डोले आसन बर्बरता के।
यह विश्वास नहीं होता है, अब वे विप्लव चरण नहीं हैं।

मानवता की लाश पड़ी है, कौए गीध नोच खाएंगे।
इस जघन्य पैशाचिकता को, ढकने का आभरण नहीं है।
महा राष्ट्र का स्वप्न प्रकट है, धर्म राज की मृग मरीचिका।
ओ स्वार्थान्ध कुचक्र खुला है, अब कोई आवरण नहीं है।
धधक उठी मरघट की ज्वाला, जली करुण कुसुमों की माला।
सच है, अब प्रचण्ड ज्वाला है, वह करुणा की किरण नहीं है।

मानव गांधी

यह मनुष्य का चमत्कार था,
मानवता का प्रतिनिधि गान्धी।
नहीं देवता या पैगम्बर
मानव केवल मानव गान्धी।
कहते हो ईश्वर था गान्धी,
राम, कृष्ण, ईसा था गान्धी।
गान्धी का उपहास करोगे?
मानव का उपहास करोगे?
उज्वल निर्मल मानव गान्धी,
मानव केवल मानव गान्धी।
कहना है गान्धी को ईश्वर,
करना है गान्धी को पत्थर।
देखो जिसकी आत्म शक्ति से,
काँप उठी बर्बरता थर थर।
वह मनुष्य कुल का सपूत था,
मानव केवल मानव गान्धी।
तंत्र मंत्र पूजा उपासना,
ज्ञान धर्म बैराग्य साधना।
एक सत्य है, एक धर्म है,
गान्धी ने मानवता साधी।
यह मानवता की मर्यादा,
मानव केवल मानव गान्धी।

मानव की सीमा दुर्बलता,
देखो भी उसकी यह क्षमता।
चलता है मनुष्य निर्भय यों,
यह मानवता की सार्थकता।
कहो कहो मानव था गान्धी,
मानव केवल मानव गान्धी।

जग हिंसा से होड़ लिए था,
जो अपने प्राणों के बल ही।
गौरव गिरि पर चढ़ता जाता,
जो दुर्बलता के संबल ही.
देखो यह मनुष्य का पौरुष,
मानव केवल मानव गान्धी।

जगती की भीषणतम ज्वाला,
सभ्य जगत का मुख था काला।
सत्य अहिंसा शब्द-कोष में,
हृदय हृदय में थे भय संशय।
निर्भय प्रगति पंथ पर गान्धी,
मानव केवल मानव गान्धी।

कैसे हारेगी मानवता ?
कैसे जीतेगी दानवता ?
हिंसा, द्वेष और उत्पीड़न,
यह मनुष्य का काम नहीं है।
कहता था, करता था गान्धी,
मानव केवल मानव गान्धी।

इस मिट्टी से ही कुछ उठकर,
मिट्टी का पुतला अति सुन्दर।
जिसे देखने को अग जग में,
विकल कोटिशः प्राण तरसते।
वह मिट्टी का मानव गान्धी,
जय मानव, नव मानव गान्धी।

अमर अभय मानव की महिमा,
अमर अजय गान्धी की गरिमा
यों मनुष्य चलता है निर्भय,
यों मनुष्य रमता है निर्भय।
एक पदार्थ पाठ था गान्धी,
जय मानव, नव मानव गान्धी।

भग्न-मन्दिर

मन्दिर में भगवान नहीं है।
दीवालें हैं; ऊँचे ऊँचे पत्थर हैं, भक्तों की टोली-
मधु प्रसाद के लोलुप, उनकी मधुर मधुर देवों की बोली।
धूप दीप है, आडम्बर है, पूजा का सामान वही है।
मन्दिर में भगवान नहीं है।
भक्त वही जो अपने प्रभु को निज कर्मों से मार चुके हैं।
भक्त वही जो अपने विभु का क्रर जग में संहार चुके हैं।
आज भोर से, जोर शोर से।
मंत्र पढ़ रहे स्तोत्र गढ़ रहे।
उस प्रभु के गुण--गीत गा रहे।
अब केवल पाषाण पड़े हैं।
भोले! उनमें प्राण नहीं हैं।
मन्दिर में भगवान नहीं हैं।

प्रश्न

खड़ा विश्व के चौराहे पर, यह कंकाल मात्र मानव का,
बोल रहा है प्रश्न-चिन्ह सा, यह कंगाल रूप मानव का।
किसने मेरा अन्न चुराया ? किसने मेरा वस्त्र चुराया ?
किसने मुझको दीन बनाया ? किस राक्षस की है यह माया ?
भूखों मरते तड़प सड़क पर, लाख उड़ रहे अरे राख पर,
कटे हुये सीने महिलायें, दानव के घर में अबलायें।

ये बालक कीड़े टेढ़े से, दूध भात रोकर मर जायें,
ये सड़कों पर खड़ीं कतारें लू से झुलसी गिरती जायें।
बच्च-बच्च रोयें चिल्लायें, जाड़े में नंगी सों जायें,
गरमी में तप-तप मर जायें, ये किस राक्षस की लीलायें ?
साफ साफ बतलाना होगा, और नहीं भरमाना होगा,
इतनी धरती इतना पानी यह किसकी ऐसी नादानी ?
बोलो कुछ बोलो श्रो ज्ञानी, यह किस राक्षस की नादानी ?
कंस नहीं तैमूर लंग हैं, फिर भी छिड़ती विकट जंग है।
रावण नहीं दिखाई देता, पर संहार दिखाई देता,
कहो कौन ऐसा रावण है, सदा मचाये जो यह रण है ?
सन्तों की मधशाला लूटी, किसने देश वीर भरमाये ?
कौन बना मारीच और भोले राघव मानव ललचाये ?
किसके बस में धरती सीता, कहाँ बनी सोने की लंका ?
कोई नहीं वीर क्या ऐसा, जैसा पवन-पुत्र था बंका।
सींग नहीं दिखलाई देते, पूँछ नहीं दिखलाई देती,
फिर भी हरी भरी खाते हैं, वे पशु यह मानव की खेती।
उनका नाम बताना होगा, उनका धाम बताना होगा,
किसने यह विष फैलाया है, किसने अमृत लुढ़काया है ?
विष का नाम बताना होगा, विष का स्वाद बताना होगा,
कौन कर रहा देश विभाजन, कौन लड़ाता भाई भाई ?
नहीं कर रहा न्याय विभाजन, दिखलाता है पाई पाई,
किसने इतना खून बहाया, मानव से मानव लड़वाया ?
ईसा, बुद्ध और गान्धी की, मुहमद, नानक, राम, श्याम की,
किसने अब तक लीक मिटाई, सदा कमाई की हराम की।
मेहनत के पुतले दुबले हैं, जैसे भूत प्रेत निकले हैं,
धँसा पेट आँखें फूटी सी, कमर जान पड़ती टूटी सी।
चिथड़े टँगे कमर के ऊपर, चलते फिरते जैसे खँडहर,
क्या मनुष्य का रूप यही है ? मनु-बालक का रूप यही है ?
प्रंथ घोंट कर इसका उत्तर, साफ-साफ बतलाना होगा,
इन दीनों को कंगालों को और नहीं भरमाना होगा।

कोटि कोटि भूखे मरते हैं, तब दो चार मौज करते हैं,
ठूँस ठूँस भोजन करते हैं, कुछ दिन भर खाते मरते हैं।
बोलो धर्मशास्त्र के ज्ञानी, क्या मानव का रूप यही है,
क्या ईश्वर का धर्म यही है, औ संस्कृति का मर्म यही है।
एक विश्व के सभी कुटुम्बी, एक पिता के सभी कुटुम्बी,
एक छीन बैठा सब रोते, एक हँस रहा लाखों रोते।
क्या ईश्वर का पंथ यही है ? क्या ईश्वर का न्याय यही है ?
क्या गान्धी का पंथ यही है ? रामराज का न्याय यही है ?
जब तक ठीक नहीं बँटवारा, मानव फिरता मारा मारा,
कैसे मानव प्रेम रहेगा, विश्व प्रेम या च्रेम रहेगा।
कुछ हाथों में मिट्टी होगी, कुछ हाथों में हेम रहेगा,
घूम रहे निर्द्वन्द्व भेड़िये, कहाँ शान्ति या प्रेम रहेगा।
यह कंकाल पूछता तुमसे, लेखक सोचो लिखो जोर से,
कलम तुम्हारी शैतानों को गहरे पानी पैठ बोर दे।
कवि बोलो कुछ ऐसी वाणी, जागे जीवन और जवानी,
रजनी सजनी बहुत सुलाई, खूब हुआ शृंगारी गाना।
धधक रही है धरा-धरातल, तुम्हें सुहाता नभ का गाना,
देखो इस कंकाल शंभु का अगर तीसरा नेत्र खुलेगा।
काम क्रोध का, लोभ मोह का, पापी का संसार जलेगा,
अगर तुम्हें ईसा प्यारे थे, अगर तुम्हें मुहमद प्यारे थे।
राम, कृष्ण गांधी प्यारे थे, नानक औ गौतम प्यारे थे,
उनकी तुम्हें कसम है भाई, मानो मानव भाई-भाई।
मानो नहीं करो कुछ ऐसा, मिटे मुनाफा दानव पैसा,
सुनो आज भी गूंज रही है, नभ में उन सन्तों की वाणी।
मानव-मानव भाई-भाई, बहुत बड़ी धरती कल्याणी,
मेहनत करो सभी मिल भाई, सब हों सहयोगी सुखभोगी।
मेहनत का पुतला यह मानव, अब करता अपनी रखवाली,
जय जय जय उसकी बोलेगा जो हरियाली लाये माली।

कल्याणी

फिर एक बार जागो दुर्गा कल्याणी,
फिर एक बार बोलो जन-जन की वाणी।
मानव के शोषक रक्त बीज ये सारे,
फिर एक बार हुंकारो, क्रान्ति भवानी।
जन जन की दुर्गा ! सिंह-वाहिनी ! अम्बे !
वाणी ! ये तेरे मूक-पुत्र, दो वाणी।
चेतना, संघ की शक्ति जगे जन जन में,
फिर एक बार ललकार उठें ये प्राणी।
मानव दानव, ये सिंह नन्दिनी, दोनों
कैसे पी सकते एक घाट पर पानी।
शंकरी ! मूक सन्तान हूक उर उर में,
अणु दिखलाते हैं क्रूर दैत्य अभिमानी।
यह दैन्य, निराशा जन जन के जीवन में,
हैं इसे भाग्य का दोष बताते ज्ञानी।
वसुधा का करने ग्रास शुंभ आता है,
फिर एक बार गरजो दुर्गा कल्याणी।
मधु कैटभ और निंशुंभ, रक्त के शोषक,
फिर एक बार जागो माता कल्याणी।

क्रान्ति:कालिका

मैं क्रांति-कालिका, अग्नि-चरण, विद्युत-गति से आती।
मैं शान्ति-पालिका, अभय चरण, कुसुमों की है छाती।
जर्जर केवल कंकाल भरे घर मेरे,
शोषित-पीड़ित कंकाल निरे नर मेरे
मूकों की करुण गुहार भरे स्वर मेरे
कंकालों की हुंकार हुये शर मेरे
मैं अग्नि-बालिका, अग्नि-शलाका ले दौड़ी आती।

निकली निरीह मानव पेटों की ज्वाला
निकली नंगों के शीतल तन से ज्वाला,
प्रकटी मूढ़ों के मन से दारुण ज्वाला।
आहों का मारुतवेग बढ़ाता ज्वाला।
मैं ज्वालामुखी महान विश्व में ज्वाला बरसाती।
दीनों की हड्डी वज्रधनुष है मेरा,
प्राणों से करता खेल पुरुष है मेरा
वन में पलाश सा रूप परुष है मेरा
जीवन के नभ में इंद्रधनुष है मेरा
मैं रुद्रघोष से रूढ़ि रीढ़ पर पैर धरे आती।
सदियों का असदाचार हमारा संबल
सन्तों का भ्रष्टाचार हमारा संबल
निर्बल का बल ही सदा हमारा है बल,
बनते काबा, कैलाश निराले पुष्कर,
मैं जहाँ भूमि पर वज्र चरण धर एक बार जाती।
खाली आहों के ऊपर कोट हमारा
अणु-द्विगुण भयानक है विस्फोट हमारा
हिलते सिंहासन राजमुकुट गिरते हैं,
होते ही उल्का-पात विराट हमारा।
मैं निष्ठुर बर्बर शोषक दल की छाती दहलाती।
मैंने सागर पर पत्थर थे तैराये,
मैंने नर क्या, बानर भी वीर बनाये,
मैंने सोने के कितने कोट गिराये,
कितने रावण-कंसों के ंश मिटाए,
मैं प्रगति-पालिका युग-युग नव निर्माण किये जाती।
जलप्लावन, बहता कलुष, नया नर जीवन
भीषण वर्षा से स्वच्छ गगन मानव मन
दानवता का अवसान हमारा है प्रण
मानवता का उत्थान हमारा है प्रण
मैं जीवन का वरदान पुरुष को प्राण दिये जाती।

वधिरों के शिर पर रुद्र-घोष करती हूँ
पत्थर के शिर पर मैं टाँकी धरती हूँ
धरती की छाती फूलों से भरती हूँ
मैं त्रस्त ग्रस्त जावन प्रशस्त करती हूँ।
मैं चिर नवीन ऊषा-संध्या से माँग भरे आती।

निर्माण

इसी भूमि पर, इसी धूलि पर स्वर्ग और अपवर्ग बनेगा,
इसी पंक में, इसी अंक में, पंकज मानव-वर्ग खिलेगा।
इसी रंक से, इसी अंक से, जन जन ही सम्राट बनेगा,
इसी दीन से, इसी हीन से, जन जन रूप विराट बनेगा।
दबे दूब से दीन बनायेंगे सुन्दर समतल सिंहासन,
जन जन का होगा इष्टासन, ऐसा क्या होगा इन्द्रासन।
सब वसुन्धरा श्रमशाली की, सब बसुधा उद्यम शाली की,
इसी बाग से, इसी राग से, जय जय जय होगी माली की।
बिना सींग के, बिना पूँछ के, पशु जन शोषक नहीं रहेंगे,
इन्हीं घरों में, इन्हीं सरो में, जन जन मुक्त किलोल करेंगे।
इन्हीं मड़ैयों, झोपड़ियों के बाल वीर गोपाल बनेंगे,
इन्हीं मड़ैयों झोपड़ियों के वीर कंस के बंस दलेंगे।
इसी भूमि पर, इसी धूलि पर, नर नारायण हो विचरेगा,
वसुन्धरा के अमल अंक का रंक, रंक ही भूप रहेगा।
सब खायेंगे, सब पायेंगे, विज्ञानी के मधुर बताशे,
सब खायेंगे, सब पायेंगे, ज्ञान-दूध में मधुर बताशे।
एक एक जन नेक बनेगा, एक एक मन नेक बनेगा,
एक एक का पंकज विकसित, वितरित नेक विवेक करेगा।
एक एक का धर्म रहेगा, एक एक का कर्म रहेगा,
एक एक का मर्म कहेगा, सच्चा मानव धर्म रहेगा।
एक एक मुख पर सुख लाली, एक एक उपवन हरियाली,
सब का उद्यम, सब का वैभव, केवल एक न वैभवशाली।

जय मानव की, जय मानव की।
सीधे सच्चे औ उद्योगी, सहयोगी एवं सहभोगी।
सरल सूत से जीवन-योगी, बापू के बच्चे नीरोगी।
पड़े भूमि पर खूब दूब सम, टूटी वीणा स्वर विहीन सम।
जय मानव की। जय मानव की।
युग युग से पीड़ित अपमानित, शोषित नर कंकाल उपेक्षित।
चातक से प्यासे अभिलाषित, दैहिक, दैविक, भौतिक बाधित।
पड़े विश्व में गंधहीन सम, टूटी वीणा स्वर-विहीन सम।
जय मानव की। जय मानव की।
पत्थर तोड़ फोड़ कर बहती, श्रम-गंगा अजस्र जल धारा।
मरु की दारुण भीष्मा ऊष्मा, लहराती अन्तर जल धारा।
विकसित सरल सरोज मनोरम, कंटक में गुलाब सम अनुपम।
जय मानव की। जय मानव की।
विश्व विभूति बनाने वाले, जय शिव ! विष पी जाने वाले।
भस्म रमाये, धूलि धूसरित, जय वरदानी ! कमली वाले।
खोल तीसरा नेत्र शंभु सम, खोल काम के पाश मोह भ्रम।
जय नव शिव की। जय मानव की।
नव जागरण, चेतना तेरी, कण कण भरी वेदना तेरी।
स्वर स्वर उठी वंदना तेरी, पद पद हुई अर्चना तेरी।
उठने वाले घन घमंड सम, गिरने वाले तड़ित दंड सम !
जय मानव की। जय लाघव की।
शंकित स्तंभित अणुवादी, स्वयंत्रस्त, दानव जड़वादी।
स्वयं प्रलय है मैं लयवादी, स्वयं भयातुर है भयवादी।
भस्मासुर, तृष्णालु, अघासुर, पृथ्वी के पापिष्ठ वृकासुर।
क्षय दानव की। क्षय लाघव की।
जय मानव की। जय लाघव की।

समाप्त

श्री ब्रह्मदत्त जी दीक्षित ने अपने काव्य 'जय-मानव'---की कुछ पंक्तियाँ सुनाईं। पंक्तियाँ जानदार थीं और भाषा में सौष्ठव तथा प्रवाह। "सत्य-नारायण" की अच्छी कल्पना हुई है और मुझे विश्वास है कि यह अत्यन्त सुन्दर गांधी काव्य बनेगा। दीक्षित जी एक प्रतिभावान कवि हैं।

—जयप्रकाश नारायण

जय 'मानव' की रचना युग-वाणी है। राष्ट्र की चेतना इसके द्वारा अभिव्यक्त हुई है। इसमें न केवल महात्मा गांधी की प्रशस्ति है; वरन् राष्ट्रीय क्रान्ति का पूरा इतिहास है। 'जय-मानव' में मानव ने अपने दोनों चरणों से जीवन के विस्तृत क्षेत्र को पूर्ण स्वानुभूति के साथ पार किया है और उन चरणों की गति में राष्ट्र का वर्तमान और भविष्य साथ-साथ चला है।

श्री ब्रह्मदत्त दीक्षित 'ललाम' हिन्दी के श्रेष्ठ कवि हैं। उन्होंने अपने काव्य को प्राणों से पोषित किया है। आत्म-त्याग की साधना में उन्होंने कभी प्रसिद्धि की लालसा पास नहीं आने दी और अपनी एकान्त साधना में काव्य की उत्कृष्ट रचना की। इस रचना को पढ़कर आज के अनेक कवि उनकी प्रतिभा को प्रणाम करेंगे।

'जय मानव' में स्फूर्ति है, प्रेरणा है। भाषा भावों की पूर्ण अभिव्यंजिका है। कहीं उसमें ओज है जो निर्बलों को सबल बनाता है, कहीं उसमें करुणा है जो निर्मम में भी सहानुभूति का उद्रेक करती है। भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि में, प्राचीन गौरव के प्रकाश में, पौराणिक कथानकों और पुरुषों की गरिमा में लिखी गई यह रचना हमारे काव्य-साहित्य की एक सुदृढ़ कड़ी है।

कवि से मेरी प्रार्थना है कि वे हिन्दी को इस प्रकार की अन्य उत्कृष्ट रचनाओं से अलंकृत करते रहेंगे।

प्रयाग विश्वविद्यालय
प्रयाग

—(डाक्टर) रामकुमार वर्मा
एम. ए., पी. एच. डी.